रामेश बेदी

तरुण-भारती

ग ज रा ज

Library IIAS Shimla
H
639.979 61
B 39 G
639.979
61
B39G

नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया

INDIAN INSTITUTE OF
ADVANCED STUDY
LIBRARY * SIMLA

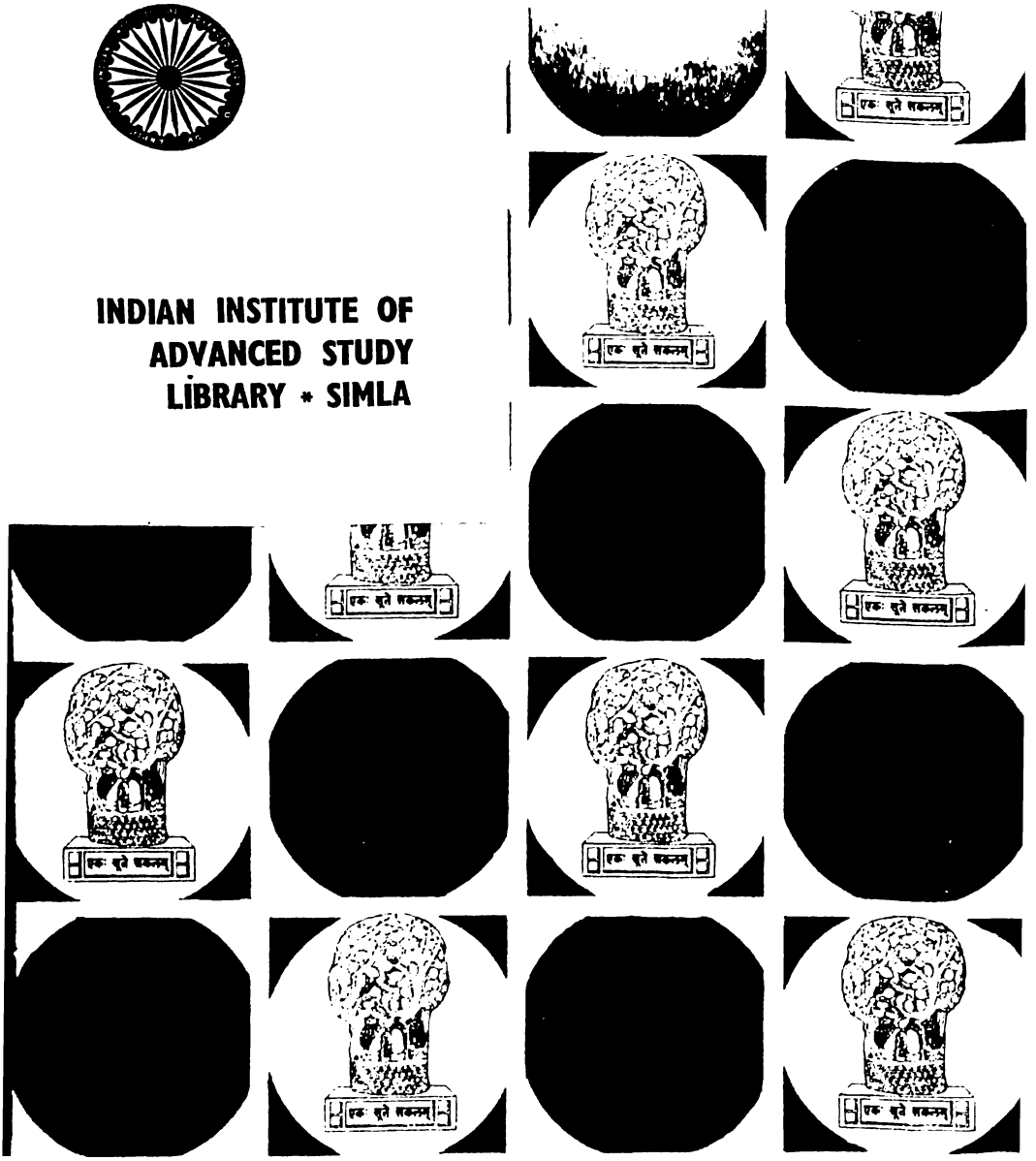

34328
ALOGUED

गजराज

तरुण-भारती

ग ज रा ज

रामेश बेदी

नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया
नई दिल्ली

अक्तूबर १९६९ (आश्विन १८९१)

© रामेश बेदी, १९६९

H
639.979 61
B 39G

रु० ३·२५

73

34328
24-3-70

Library IIAS, Shimla
H 639.97961 B 39 G
00034328

सचिव, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, ए–५, ग्रीन पार्क, नई दिल्ली १६
द्वारा प्रकाशित व हिन्दी प्रिंटिंग प्रेस, क्वीन्स रोड, दिल्ली-६ द्वारा मुद्रित।

प्रस्तावना

हज़ारों सालों से हमने हाथी को पालतू बना लिया है, फिर भी इस विचित्र जानवर के बारे में हमें पूरी जानकारी नहीं है। न जाने कितने किस्से हाथी के गौरवमय और अद्भुत कारनामों के बारे में कहे जाते हैं, जिन पर न तो सहसा विश्वास ही किया जा सकता है और न अविश्वास।

श्री रामेश बेदी ने उत्तर प्रदेश के तराई जंगलों में स्वच्छन्द घूमते हुए हाथियों की आदतों का अध्ययन किया है। उनके पर्यवेक्षण इस प्राणी के बारे में प्रचलित कितने ही मिथ्या विश्वासों का अन्त करते हैं। उनके पुत्रों नरेश बेदी और राजेश बेदी ने जंगली हाथियों के विभिन्न अवस्थाओं में फोटो लिये जो इन पर्यवेक्षणों की पुष्टि करते हैं।

बेदी पिता और पुत्र के इस अध्ययन में कितनी कठिनाइयां और जोखिम सामने आये होंगे, इसका अनुमान करना कठिन है। हिंसक पशुओं से व्याप्त वनों में ये लोग सैकड़ों मील पैदल ही घूमे। इसका मुख्य कारण आर्थिक था—वाहन किराए पर लेना इनके बूते से बाहर था। साहसिक कार्यों को करने की प्रेरणा ही इन प्रकृतिविदों को इस अभियान पर ले गयी थी। पहाड़ के हर मोड़ और घाटी की हर झाड़ी में खतरा इनकी प्रतीक्षा करता था। जंगली जानवरों की आदतों से बेदी का अंतरंग परिचय ही था जिसने मौत के साये को इनके पास नहीं आने दिया।

वन्य-जीवन के संबंध में श्री रामेश बेदी समय-समय पर पत्र-पत्रिकाओं में अपने अनुभव और पर्यवेक्षण लिखते रहे हैं। इसी तरह बेदी बंधुओं द्वारा लिये गये वन्य प्राणियों के फोटो भी प्रकाशित होते रहे हैं। इनकी यह पुस्तक पाठकों को नई जानकारी देगी और उन्हें वन्य-प्राणियों का अध्ययन करने की प्रेरणा देगी—ऐसा मेरा विश्वास है।

नई दिल्ली,
अगस्त, १९६९।

बालकृष्ण केसकर

विषय-सूची

		पृष्ठ
	प्रस्तावना ...	५
१.	परिचय ...	९
२.	प्रणय क्रीड़ा और प्राकृतिक वास ...	१५
	मंगलकारी पशु ...	१५
	वर्गीकरण ...	१७
	नस्लें ...	१८
	वन का राजा ...	१९
	प्रणय-क्रीड़ा ...	२३
	प्रजनन और बच्चा पालने में कठिनाइयाँ ...	२७
	आहार ...	३२
	निद्रा ...	३५
	प्राकृतिक वास ...	३७
३.	इतिहास और कथा-कहानियों में हाथी ...	४१
	काव्य में ...	४४
४.	मस्ती का दौरा ...	५३
	गजमुक्ता ...	५८
	दुर्घटनाएँ और मृत्यु ...	५६
	हाथियों का शिकार ...	६२
५.	रोग ...	६३
	हाथियों की चिकित्सा विषयक साहित्य ...	६६
	दाँत के रोग	६८
	हाथी की आयु ...	६८

		पृष्ठ
	उम्र का अंदाज लगाना ...	६६
	रहस्यपूर्ण समाधि ...	७०
	बच्चों से प्यार ...	८०
	एक उपयोगी पशु ...	८२
६.	पकड़ना और सधाना ...	९०
	हाथियों को पकड़ना	९०
	गढ़ों में पकड़ना ...	९०
	खेदा ...	९२
	नदी का खेदा ...	९७
	मेला शिकार ...	९८
	नमक के स्थानों पर पकड़ना ...	९८
	प्रशिक्षण ...	९९
	आहार ...	१००
	आज़ादी से मुंह मोड़ने वाले ये गुलाम ...	१०३
७.	व्यापार और उद्योग में ...	१०७
	सफेद हाथी ...	१०७
	संख्या पर नियंत्रण ...	११५
	व्यापार के केन्द्र ...	११२
	मंगलकारी हाथी की पहचान ...	११३
	हाथीदांत की कलात्मक वस्तुएं ...	११६
	हाथी दाँत का संघटन ...	११७
	विभिन्न अंगों के उपयोग ...	११९
	हाथी का माँस ...	११९
	दवादारु में ...	१२०
	संदर्भ पुस्तकें ...	१२३
	पारिभाषिक शब्द ...	१२४

चित्र-सूची

	सामने पृष्ठ
१. दन्तों पर लोहे के प्लेट चढ़ा दिये जाते हैं ताकि वे घिसें या टूटें नहीं	३२
२. सोते में पानी पीते हुए	३२–३३
३. घास को सूँड से तोड़ कर मुँह में डाल लिया जाता है	३३
४. हाथी की आँखें छोटी होती हैं ...	४८
५. पालती दून (उत्तर प्रदेश) में चरता हुआ हाथियों का एक दल	४८
६. हाथियों को नहाने का बड़ा शौक है ...	४९
७. एकदन्ता, गणेश	४९
८. जंगल में दो हाथी	६४
९. हाथी की सूँड में गिरफ़्तार सैनिक—कोणार्क ...	६४
१०. लकड़ी ढोता हुआ मेहनती हाथी ...	६५
११. खेदा के दौरान हाथी को नदी में से ले जाया जा रहा है	६५
१२. माँ और बच्चा	९६
१३. नकली लड़ाई	९६
१४. जल-क्रीड़ा	९७
१५. माथे से "मस्त" चू रहा है	९७

१. परिचय

अगर आप हरिद्वार के जंगलों में काम करने वाले बसेरों और लकड़हारों से पूछें कि वे किस जानवर से सबसे ज़्यादा डरते हैं तो वे तुरन्त उत्तर देंगे, हाथी ! उनके आसपास बाघ, गुलदार, भालू, सूअर आदि वन्य पशु जंगलों को रौंदते-फिरते हैं, परन्तु उनसे उन्हें कोई खतरा नहीं लगता। चरते हुए हाथियों का झुण्ड जब उनके डेरे के पास से गुज़रता है तो वह उनकी झोपड़ियों को उजाड़कर छोड़ता है। उनका आटा व राशन खा जाता है और उनके बिस्तरों तथा बरतनों को बुरी तरह रौंद डालता है।

कश्मीरी गूजरों को इसका खूब अनुभव है। ये लोग इस प्रदेश में लम्बे अरसे से सैलानियों का जीवन बिता रहे हैं। दिन के समय परिवार का कोई भी बड़ा सदस्य डेरे पर नहीं रहता; भैंसें चराने के लिए वे तंग व घनी घाटियों के अन्दर दूर तक निकल गये होते हैं। ऐसी हालत में यदि डेरे पर हाथी आ जायें तो छप्परों को तहस-नहस करने के साथ-साथ वे सुकुमार कटरों को भी रौंद डालते हैं।

मुझे याद है कि शेरबोजी (कौर्बेट नेशनल पार्क, उत्तर प्रदेश) में एक बार चारे के लिए बांधे गये पड्डे पर शेर की बजाय हाथी आ गये। सरकण्डे के ऊँचे झुण्डों के बीच में एक खाली जगह पर शाम को पड्डा बांधा गया था। चरते हुए हाथियों का झुण्ड उस दिन वहाँ से गुज़र रहा था। मौत के पंजे का इन्तजार करते हुए पड्डे को मस्त हाथियों की सूण्डों ने पकड़ लिया, फिर पैरों की ठोकरों से उसका भुरता बना दिया।

हाथी सौम्य, शान्त स्वभाव और यूथ में रहनेवाला प्राणी है जो दस से सौ तक के झुण्डों में विचरण करता है। इसमें अधिकतर मादा और कुछ नर रहते हैं। प्रत्येक यूथ की नेता एक हथिनी होती है। नेता के चिंघाड़ने पर यूथ के सभी सदस्य एक जगह इकट्ठे हो जाते हैं। झुण्ड से बिछुड़ने पर हथिनियाँ त्रस्त हो जाती हैं और सहम जाती हैं। हथिनियाँ प्रायः झुण्ड से दूर जाने की हिम्मत नहीं करतीं। हाथी अक्सर चले जाते हैं, परन्तु बहुत दूर नहीं। सबसे अधिक बलशाली

दन्तुर को झुण्ड का स्वामी स्वीकार कर लिया जाता है। जब कोई दूसरा नर उसका प्रतिस्पर्द्धी बनकर सिर उठाता है तो दोनों में डटकर युद्ध होता है। जिसकी हार होती है उसके आगे दो ही रास्ते होते हैं या तो वह विजेता की अधीनता स्वीकार करके झुण्ड में ही रहे और या फिर उस झुण्ड को छोड़ कर अलग रहने लगे। दूसरे प्रकार का मार्ग अपनाने वाले को क्योंकि अकेला ही रहना पड़ता है, इसलिए उसे आत्मरक्षा के लिए अधिक सजग रहना पड़ता है। अकेले विचरने की आदत के कारण वनवासी इसे इक्कड़ हाथी कहते हैं।

यह आवश्यक नहीं कि इक्कड़ सदा बहिष्कृत हाथी ही हो। यह भी हो सकता है कि एकान्त जीवन शुरू करने से पहले वह एक शक्तिशाली झुण्ड का नेता रहा हो, और मस्ती में, स्वेच्छा से, उसने यह स्वच्छन्दता और निरंकुशता का रास्ता अपना लिया हो।

इक्कड़ हाथी वनों के किनारे रहने की कोशिश करते हैं जहाँ से खेतों में आसानी से घुस सकें। वनवासियों के डेरों के पास ये आटा, चावल और गुड़ मिलने की आशा से चक्कर लगाते हैं। साग-सब्ज़ी बाहर रह जाये और रात को हाथी उधर निकल आये तो वे कुछ नहीं छोड़ते। मुर्चिसन पार्क में एक हाथी चालीस पौण्ड आलुओं को पाँच मिनट में खा गया था। उसके बाद उसने रेंजर की झोपड़ी की खिड़की में सूँड डाली और पाँच गैलन पौम्बे नामक देसी शराब को सुड़क गया। अगला सारा दिन उसने एक पेड़ के सहारे सोते हुए गुज़ारा। एक बार हाथी को केले, आलू, मकई, गन्ना आदि फसल खाने का चस्का लग जाये तो वह टलता नहीं और जान-माल के लिए एक खतरा बन जाता है। लोग इसे डराने और भगाने के अनेक उपाय करते हैं। मनुष्य के साथ इक्कड़ का सदा संघर्ष बना रहने से यह निडर, गुस्सैल, साहसी और खतरनाक बन जाता है। जब यह अकारण ही राहगीरों पर हमला करने लगे तो इसे लागू हाथी कहने लगते हैं।

मनुष्य द्वारा सताये जाने पर या ज़ख्मी किये जाने पर ये हाथी लागू बन जाते हैं। फसलों को बचाने की कोशिश में चलायी गयी गोलियों के शिकार बन कर घावों से पीड़ित हो जाते हैं, और बहुत गुस्सैल हो जाते हैं। फिर तो बदला लेने के लिए ये किसी भी इन्सान को मार डालते हैं। प्रायः निर्दोष घसियारे, लकड़हारे और दूसरे राहगीर उनके क्रोध का शिकार बन जाते हैं।

एक इक्कड़ तो इतना धूर्त था कि सूँड में लक्कड़ और पत्थर उठाकर फेंकता था। वन-पथ पर जाती हुई लौरी का पीछा करता था। अनेक इक्कड़ हाथियों को बस के आगे सड़क रोककर खड़े होते देखा गया है। हौर्न बजाते रहिये, वह टस से मस नहीं होता। ऐसी हालत में ड्राइवर दूर ही बस रोक देता है और यात्रियों को शान्त रहने की हिदायत देता है। कई बार उसे हटाने के लिए हवा में गोली छोड़नी पड़ती है। अफ्रीका में एक हाथी अपने पास सौ गज़ के अन्दर आनेवाले प्रत्येक वाहन पर हमला करता था। वार्डन के ट्रक का इसने तीन मील तक पीछा किया था। उसे गोली से मार देना पड़ा था। मोटर बस को हाथी अपने उद्दन्तों की चोट से, माथे की टक्कर से और सूँड की पकड़ से बुरी तरह तोड़-फोड़ देता है। अफ्रीका के एक नेशनल पार्क में एक सड़क अभी नयी बनी थी। जंगली जानवर उस के परे रहना नहीं सीखे थे। एक दिन एक लौरी एक हाथी के सिर से टकरा गयी। उसमें बैठे दो अफ्रीकी गम्भीर रूप से ज़ख्मी हो गये। हाथी का भी यही हाल हुआ।

मुचिसन पार्क में हवाई पट्टी के पास दिलचस्प घटना घटी। डकोटा के उतरने के लिए जंगल का एक टुकड़ा साफ़ कर दिया गया था। पट्टी पर पाँच-टना ट्रक जा रहा था। मुचिसन के एक दैत्य ने उसके मार्ग को रोक लिया। अपने उद्दन्तों से उसने लौरी पर कम से कम तीन हमले किये। पहली टक्कर बौनेट पर की। दूसरी वॉडी के बीच में, इसपे नीचे लटकी हुई पैट्रोल की टंकी में सूराख हो गया। तीसरी टक्कर भी उसी जगह थी जिसने लौरी को पलट दिया। उसके उलटने से हवाई पटरी का मार्ग रुक गया था। लौरी की लोहे की चादर में उद्दन्त दो जगह खुब गये थे। उद्दन्तों से बनाये हुए छिद्र ऐसे लगते थे मानों अट्ठासी मिलिमीटर आर्मर-पियर्सिंग गोलों के लगने से बने हों। लोहे की चादर इस तरह उखड़ गयी थी मानों केले के छिलके उतारे गये हों। ट्रक के तले में लगी लोहे की चादर का भी यही हाल था जो इंच के आठवें हिस्से के बराबर मोटा तो था ही। भाग्यवश अन्दर बैठे तीन आदमियों को गम्भीर चोटें नहीं आयीं।

मुझे अपने बचपन के वे दिन याद हैं जब में शिवालक की तलहटी में गंगा के किनारे कच्चे मकानों से बने आश्रम में रह कर विद्याभ्यास किया करता था। हरिद्वार जाना होता था तो चार मील के बीहड़ मार्ग में अनेक छोटे-छोटे पहाड़ी

नाले, कण्टकित वन और कुछ तेज़ धाराएं पार करनी पड़ती थीं। वरसात में गंगा का पाट बहुत फैल जाने के कारण पुल तो टूट ही जाते थे, नौकाओं का चलना भी कठिन हो जाता था। हम लोग वाहर की दुनिया से एकदम अलग-थलग, वन्य जीवों से भरे इस एकान्त जंगल में ही वन्दी वन जाते थे।

वरसात में एक दिन अपने विस्तरों को कन्धों पर उठाये हम कुछ छात्र हरिद्वार से अपने पुराने आश्रम की ओर जा रहे थे। यह घटना १९२८ के आस-पास की है। सुरमे जैसे काले अञ्जनवन को पार कर एक नाले के वीच में हम उतरे ही थे कि एक काना इक्कड़ हमारे पीछे भागा। उससे वचने के लिए हम लोग विस्तरों को फेंक कर वेतहाशा दौड़े। काने इक्कड़ ने विस्तरों को पाकर उन्हें वुरी तरह रौंदा, सूंड में उठाकर इधर-उधर पटका और जव तक उसका गुस्सा शान्त नहीं हुआ वह विस्तरों में वंधे कपड़ों को विखेरता रहा। उस वक्त हममें से कोई उसके हाथ पड़ जाता तो वह उसका भुरता वनाये विना न छोड़ता। हाथी पीछा कर रहा हो तो उस समय कोट, कमीज़, पगड़ी जो भी हाथ लगे, फेंककर भाग जाना चाहिए। हाथी कुछ देर तक उसीके साथ उलझता रहेगा और इन्सान को वच निकलने का मौका मिल जायगा। एक वार एक पर्यटक की कार के पीछे हाथी भागा। केलों से भरा कनस्तर गिर गया और हाथी उसीको तोड़ने-फोड़ने और खाने में लग गया। पर्यटक वच निकले।

नेशनल पार्कों और पशु-शरण-स्थलों में मुझे कई वार पालतू हाथी की पीठ पर बैठकर जंगली हाथियों को देखने और उनके फोटो खींचने के लिए जाने का मौका मिला है। यदि हम नर हाथी पर सवार हैं तो हमें सामान्यतया केवल इक्कड़ हाथी से खतरा रहता है। झुण्ड में रहनेवाले जंगली हाथी दर्शकों में अक्सर उत्सुकता नहीं दिखाते। अपने हाथी को हम जंगली हाथियों के झुण्ड के बिलकुल पास ले जाते हैं। हाथी सधा हुआ है तो उसे हम झुण्ड के वीच में ले जाने की हिम्मत भी कर सकते हैं। कौतूहल से या मित्र भाव से जंगली हाथी हमारे हाथी के पास आता है और अपनी सूंड वढ़ाकर उसका आलिंगन करता है। प्रकट रूप में यही दीखता है कि उसे ऊपर वैठी हुई सवारियों का कुछ पता ही नहीं है।

ऐसे दन्तुर हाथी जो मनुष्य के जीवन व सम्पत्ति के लिए मुसीवत वन जाते हैं, लागू और खूनी घोषित कर दिये जाते हैं। इन्हें मारने के लिए पुरस्कार की

घोषणा की जाती हैं। मैसूर में घोषित लागू हाथी को मारने का इनाम होता है पाँच सौ रुपया अथवा उसके दोनों उद्दन्त।

१९६३ के अक्तूबर में और १९६५ के जून में नैनीताल, देहरादून और बिजनौर ज़िलों में पेशेवर शिकारियों द्वारा अट्ठाईस हाथियों को गोली से मरवाया गया था। कहा जाता है कि इस क्षेत्र में पिछले पच्चासी वर्षों में ढाई सौ से बढ़कर बारह सौ हाथी हो गये थे। खेतों के लिए ये मुसीबत बन रहे थे। इस-लिए इनकी संख्या को नियन्त्रित करने के लिए सरकार ने यह क़दम उठाया था। प्रत्येक हाथी को मारने का दो सौ रुपये नकद इनाम दिया गया था। यदि किसी ने एक नर के साथ दो मादा भी मारे तो नकद राशि के अलावा वह उद्दन्त रखने का भी अधिकारी हो जाता था।

जंगली हाथी से बचने के लिए सीधे रास्ते पर नहीं दौड़ना चाहिए, क्योंकि ऐसे रास्ते पर वह भी पच्चीस-तीस मील प्रति घण्टा की गति से दौड़ सकता है और आपको पकड़ सकता है। टेढ़ी-मेढ़ी, ऊँची-नीची, वृक्षों के बीच में से जाती हुई पतली पगडण्डियों का आश्रय लेने में ही भलाई होती है। इन बाधाओं में हाथी की गति में बाधा पड़ जाती है और तब दूर निकलने का अवसर मिल जाता है। यदि पहाड़ी इलाका हो तो ढलान पर नीचे की ओर भागना चाहिए। ढलान पर हाथी बहुत धीरे-धीरे उतरता है। पहाड़ के ऊपर की ओर नहीं भागना चाहिए क्योंकि वहाँ आदमी की गति तो कम हो जायेगी पर हाथी की विशेष कम न होगी। इसके अलावा सूँड बढ़ाकर वह नीचे से ही चढ़नेवाले को पकड़ लेता है।

ऊँचाई से नीचे उतरते हुए यदि आपने गोल पत्थरों से आच्छादित नाले का मार्ग अपना लिया तो बहुत अच्छा होगा। आप तो पत्थरों पर निकल जायेंगे, परन्तु हाथी के भारी बोझ से पत्थर लुढ़क पड़ते हैं और उसे अपने को सम्हालना कठिन हो जाता है। ऐसे समय हाथी बड़ी सावधानी से काम लेता है। वह अपनी पिछली टाँगों पर झुक जाता है और अगली टाँगों को अकड़ाकर नीचे फिसल जाता है। चिकनी गीली मिट्टी पर यदि यह रपट पड़े तो बड़ी फुर्ती से शरीर को सम्हाल कर खड़ा हो जाता है।

बिल्ली की दुबकी चाल से तो सभी परिचित हैं, परन्तु जिन लोगों ने जंगल में हाथी को जाते हुए देखा है वे आश्चर्य करते हैं कि इतनी भारी भरकम काया वाला जानवर भी किस तरह बिना आहट के तेज़ी से आगे बढ़ता है। यह

सामान्यतया चार मील प्रति घण्टा चलता है। ज़रूरत पड़ने पर यह तेज़ दौड़ने वाले मनुष्य से आगे निकल जाता है और बीस मील प्रति घण्टे की गति पकड़ सकता है। इतनी तेज़ यह कुछ देर के लिए ही दौड़ सकता है। हां, दस मील प्रति घण्टे की चाल से यह लगातार बहुत दूर तक भाग सकता है।

सौभाग्यवश हाथी की निगाह बहुत दूर की चीज़ नहीं देख पाती। इसलिए, यदि झटपट किसी बड़े पेड़ या चट्टान के पीछे छिप जायें तो बचने की संभावना बढ़ जाती है।

हाथी के लिए कहा जाता है कि उसकी नज़र ज़्यादा दूर तक नहीं जाती। लेकिन वास्तव में उसकी नज़र कमज़ोर होती है। जितनी दूर मनुष्य देखता है, उतनी दूर वह देख तो लेता है परन्तु उसकी छोटी आँखें सहसा फोकस नहीं कर पातीं, चीज़ों को साफ़-साफ़ देखने में उसे कुछ समय लगता है। इस कमी की पूर्ति के लिए वह अपने अतिशय बड़े आकार के कानों पर अधिक निर्भर करता है। ध्वनि को ग्रहण करने की सामर्थ्य इसमें खूब विकसित होती है।

हाथी की सूंघने की शक्ति भी बड़ी तेज़ होती है। आदमी की गन्ध पाकर वह चौकन्ना हो जाता है और भाग खड़ा होता है। कभी-कभी वह गन्ध, शब्द या दृष्टि से मनुष्य का पता पाकर भी चुपचाप निश्चल खड़ा रहता है और आदमी के समीप पहुँचने पर सहसा आक्रमण कर देता है।

जंगल में हमने अनेक बार अनुभव किया है कि पास पहुँचने पर ही मालूम पड़ता है कि हाथी खड़ा है। यदि वह हिल-डुल न रहा हो तो दिखायी इसलिए नहीं पड़ता कि उसका काला-भूरा या सलेटी रंग जंगल की छाया और मिट्टी के ढूहों में मिल जाता है।

२. प्रणय क्रीड़ा और प्राकृतिक वास

मंगलकारी पशु

प्राचीन भारत में मनुष्य के निरन्तर सान्निध्य में रहने वाले जन्तुओं में गौ और घोड़े के बाद हाथी का स्थान था। धर्म शास्त्रों में हाथी का वध वर्जित था और यह एक मंगलमय पशु माना जाता था। अब भी नये कार्य को शुरू करने से पहले हाथी के देवरूप गजानन गणेश की पूजा की जाती है। भरहुत, बुद्ध गया, अमरावती तथा उदयगिरि के भग्नावशेषों में गजलक्ष्मी का अंकन है। पुष्पक विमान के स्तम्भों पर गजलक्ष्मी का चित्र अंकित था। कमल पुष्प पर आसीन और सूँड में कमल लिए हुए लक्ष्मी के प्रतीक ये हाथी जल बरसाते हुए दिखाये गये हैं। भारतीय पुराणों में चारों दिशाओं के पालक चार हाथी माने गये हैं। सुमेरीयन लोगों का विश्वास था कि हाथी जीवन-तरु की रक्षा करने वाला प्राणी है। यह काल्पिक वृक्ष सब प्रकार की कामनाओं को पूरा करने वाला देवद्रुम था। मेसोपोटामिया में प्राप्त जमदेत नसर काल की शलाका मुद्रा पर इस हाथी का शरीर बैल जैसा अंकित किया गया है। जीवन तरु के सामने खड़ा हुआ यह हमलावरों से देवद्रुम की रक्षा कर रहा है। मेसोपोटामिया में हाथी नहीं पाया जाता, इसलिए सुमेरी जाति को यह परिकल्पना सिन्धु सभ्यता से प्राप्त हुई थी।

हड़प्पा और मोहन्जोदड़ो की मुद्राओं तथा मुद्रा-छापों पर हाथी का अंकन प्राप्त हुआ है। एक मुद्रा-छाप के एक पार्श्व दर व्याघ्र-दमन का दृश्य तथा पंचाक्षरी लेख है, दूसरे पार्श्व पर एकशृंग, हाथी और गैंडा तीनों पशु, एक दूसरे के पीछे चलते हुए, देवद्रुम का अभिवादन करने जाते दिखाये गये हैं। मोहन्जोदड़ो से प्राप्त तीन पहलू वाली एक मुद्रा के एक पहलू पर गैंडा, हाथी, चीता, बाघ, छोटे सींगों वाला बैल, वन-वृषभ, बकरा, मगर, कछुआ और मछली आदि मांस और घास खाने वाले विरुद्ध प्रकृति के पशु सौम्य भाव से देवद्रुम का अभिवादन करने जाते हुए अंकित किये गये हैं। मोहन्जोदड़ो की एक चौरस मुद्रा पर एक त्रिमुख देवता योगासन मुद्रा में विराजमान दिखायी देता है। उसके दायें और बायें दो-दो पशु

हैं जिनमें हाथी और वाघ दायीं ओर तथा गैंडा और भैंसा वायीं ओर हैं। उसके आसन के नीचे दो हिरण आमने-सामने खड़े मुड़कर पीछे की ओर देख रहे हैं। सम्भवतः यह पशुपति का चित्रण है जिसके सभी पशु वशीभूत हैं।

इस चित्र में ध्यान देने योग्य वात यह है कि हाथी के अलावा तीनों पशुओं के मुख पशुपति की ओर हैं। हाथी के पास एक आदमी खड़ा है। सम्भवतः यह पराक्रमी वीर है जो पशुपति से विमुख होकर भागते हुए हाथी को रोकने का प्रयास कर रहा है। एक अन्य मुद्रा पर तान्त्रिक उपायों द्वारा हाथी को वश में करने का दृश्य है, लेकिन उसे वश में करना आसान नहीं। हाथी पराक्रमी वीर के आदेशों की परवाह किये विना अपने शरीर के अगले भाग को ऊँचा उठाकर ज़ोर से माथे की टक्कर मार रहा है। हड़प्पा की एक मुद्रा-छाप पर वने चित्र से पता चलता है कि हाथी वाघों को पछाड़ देने वाले पराक्रमी वीर से डरता था। उस वीर द्वारा दो वाघों को पछाड़ने के दृश्य को देखकर हाथी चुपचाप खिसक रहा है।

अमरावती के अवशेषों में भी मेसोपोटामिया जैसे विचित्र हाथी अंकित किये गये हैं, जिनका पिछला भाग मछली जैसा है। महाभारत में ऐसे हाथियों का नाम मीनवाजी और 'गजवक्त्रज्ञश' लिखा है। मछली या मगरमच्छ के पृष्ठ भाग वाले हाथियों की कल्पना को वाल्मीकि के रणभूमि के उस वर्णन से उद्‌वोधन मिला है, जिसमें उन्होंने रणभूमि की उपमा ऐसे समुद्र या नदी से दी है जिसमें हाथियों के रूप में मछलियाँ या मगरमच्छ भरे पड़े हैं।

कोई-कोई हाथी जन्म से ही एक उद्‌दन्त वाला होता है। गजानन गणेश भी एकदन्त होते हैं। मन्दिरों में गायी जाने वाली एक आरती में उनके वारे में कहा गया है :

एकदन्त दयावन्त चार भुजाधारी।
लड्डुन का भोग करें चूहे की सवारी।

दाँत के साम्य के कारण एक उद्‌दन्त वाले हाथी को गणेश या एकदन्ता गणेश कहते हैं। यह भी प्रकृति की विलक्षणताओं में से एक है। दरअसल, एकदन्ते गणेश में दूसरा उद्‌दन्त निकलता ही नहीं। ऐसा एक हाथी मैंने कॉर्बेट नेशनल पार्क में, १९६७ में, देखा था। एकदन्त होने पर भी यह झुण्ड का मुखिया था। उस झुण्ड में दो दाँतों वाले और भी तीन हाथी थे जो उससे दूर रहते थे। एकदन्तों का स्वभाव अच्छा नहीं सुना जाता।

दक्षिण अफ्रीका के एक गैर सरकारी रक्षित-वन में गेम गार्ड श्री वाराड़े के पीछे एक बार एक गणेश पड़ गया। वह एक झुण्ड का अगुआ था। उसने बहुत दूर तक उनका पीछा किया और उनकी जान लेने की हर चन्द कोशिश की। भागते-भागते वे बुरी तरह थक गये थे और थकान के मारे किसी भी क्षण लड़-खड़ा कर गिर पड़ने की स्थिति में आ गये थे। आखिर जंगल का अन्त आ गया और उन्हें हब्शियों का एक दल नज़र आ गया। एक झोपड़ी के अन्धेरे, दुर्गन्ध भरे कोने में उन्होंने शरण ली। जंगल से निकलने पर खूनी एकदन्त के सामने जो सबसे पहला व्यक्ति पड़ा उसी को उसने पकड़ लिया। दुर्भाग्यवश वह एक नीग्रो स्त्री थी। सूँड से उसकी गरदन को लपेट कर उसने उठाया और धरती पर दे मारा। मरने के बाद भी उसने लाश नहीं छोड़ी। ढीली बेजान देह को वह उठाता और आसमान में झण्डे की तरह लहराता हुआ नीचे दे पटकता। ऐसा उसने कई बार किया। गोली से मार न गिरा दिया जाता तो उस दिन वह न जाने कितनी ही और जानें ले लेता।

वर्गीकरण

हाथी की दो स्पष्ट जातियाँ उपलब्ध हैं। एक एशिया में और एक अफ्रीका में। एशिया में किसी समय हाथी की और भी जातियाँ पायी जाती थीं। वर्तमान काल में जो भारतीय, बर्मी, सिंहाली और सुमात्री किस्में मिलती हैं वे सब प्राणिकी के अनुसार एक ही उप-जाति की अलग-अलग किस्में हैं। प्राणि-विज्ञान में इस जाति को एलिफ़ास मैक्सिमस लिन. (*Elephas maximus* Linn.) कहते हैं। प्राणि-विज्ञान में भारतीय हाथी का नाम एलिफ़ास मैक्सिमस इण्डिकस जी० कुवियर (*Elephas maximus indicus* G. Cuvier) है। अफ्रीकी हाथी का नाम एलिफ़ास एफ्रिकेनस लिन. (*Elephas africanus* Linn.) है। इसका मस्तक और कान अधिक बड़े होते हैं। इन दोनों जतियों में मुख्य भेद इस प्रकार हैं :

अफ्रीकी हाथी	भारतीय हाथी
१. डीलडौल में बड़ा	१. डीलडौल में छोटा
२. अधिक ऊँचा। कन्धे पर नाप ११ फ़ुट ८½ इंच	२. कम ऊँचा। पीठ पर एक रिकॉर्ड नाप दस फ़ुट छह इंच
३. सबसे ऊँचा स्थान कन्धे के ऊपर	३. सबसे ऊँचा स्थान पीठ का केन्द्र

४. कान अधिक बड़े	४. कान अपेक्षाकृत छोटे
५. सूँड छोटी	५. सूँड बड़ी
६. दन्त अधिक दीर्घ	६. दन्त अपेक्षाकृत छोटे
७. अगले दोनों पैरों में चार-चार उंगलियाँ	७. अगले दोनों पैरों में पाँच-पाँच उंगलियां
८. पिछले दोनों पैरों में तीन-तीन उंगलियाँ	८. पिछले दोनों पैरों में चार-चार उंगलियां
९. सूँड के सिरे पर उंगली जैसे दो अवशेष–दोनों किनारों पर एक-एक	९. सूँड के सिरे पर उंगली जैसा अवशेष--सामने के किनारे पर
१०. नर और मादा दोनों में उद्दन्त समान रूप से निकलते हैं	१०. सामान्यतया नर के उद्दन्त निकलते हैं
११. पालतू बनाना कठिन।	११. आसानी से पालतू बन जाता है

एशियाई हाथी की तुलना में अफ्रीकी हाथी को पालने में उपेक्षा की गयी है। अफ्रीकी हाथियों को सेना के लिए सधाने का उल्लेख मिलता है। इसी से यह धारणा बन गयी है कि वह पालतू नहीं बनता। यूरोप में एशियाई हाथी तो युगों से मनुष्य की सेवा में लगा रहा है।

नस्लें

कुछ विद्वानों ने भारतीय हाथी की दो नस्लों का वर्णन किया है। एक का आधुनिक प्राणिविज्ञान में नाम है—एलिफ़ास मैक्सिमस दखुमेन्सिस डेरानियागाला (*Elephas maximus dakhumensis* Deraniyagala)। इस नस्ल के हाथी, दक्षिणी भारत में पाये जाते हैं। दूसरी नस्ल उत्तर भारत और नेपाल में मिलती है। इसका प्राणिकी नाम है एलिफ़ास मैक्सिमस बेन्गालेन्सिस दे ब्लेन्विल्ले (*Elephas mazsmus bengalensis* de Blainville)।

पहली नस्ल (*Elephas maximus dakhumensis*) के वयासी प्रतिशत नरों में समुन्नत उद्दन्त होते हैं, इनमें दंतलियाँ (tushes) बहुत कम पायी जाती हैं। इस नस्ल के बड़े उद्दन्तों के एक जोड़े का औसत भार १२६ पौण्ड होता है और एक उद्दन्त की लम्बाई साढ़े छह फुट होती है। एक जोड़े का रिकॉर्ड भार १७१ पौण्ड है।

उत्तर भारत की नस्ल (*Elephas maximus bengalensis*) के लगभग इक्कावन प्रतिशत नरों में ही उद्दन्त निकलते हैं, ये प्रायः मुड़े हुए होते हैं। एक बड़े जोड़े का औसत भार लगभग १४५ पौण्ड और प्रत्येक की लम्बाई सात फ़ुट होती है।

इन नस्लों के अन्तर्गत बहुत-सी स्थानीय नस्लें भी हैं। अंगों की आकृति, आकार, रंग, चिंघाड़, बरताव, निवास, शक्ति, शरीर की गन्ध, भोजन और कुछ रोगों के प्रति सहिष्णुता को आधार मानकर, नस्लों के अलग-अलग नाम पड़ गये हैं।

रामायण में राजाओं द्वारा बढ़िया नस्ल के हाथियों को शौकिया पालने का उल्लेख मिलता है। उनके संरक्षण और संवर्धन के हेतु छोड़े गये बड़े-बड़े जंगल 'नागवन' कहलाते थे।

हिमालय तथा विन्ध्य पर्वतों की तराइयाँ उन दिनों अच्छी नस्ल के हाथियों के लिए प्रसिद्ध थीं। अयोध्या नगरी में ऐरावत कुल, महापद्मकुल, आंजनकुल और वामनकुल के श्रेष्ठ हाथी विद्यमान थे। ऐरावत और इन्द्रशिर पर्वतों पर पायी जानेवाली हाथी की नस्लें बहुत श्रेष्ठ और सुन्दर थीं, इसलिए इन्हें 'प्रियदर्शन' कहा जाता था। रावण के महलों के हाथी अच्छी नस्ल के, सुन्दर, सिखाये हुए और लड़ाकू थे।

वन का राजा

बड़े डीलडौल और वज़न के कारण यह धरती पर सबसे बड़ा जानवर माना जाता है। भारत के प्राचीन साहित्य में इसे महाप्राणवान पशु कहा गया है। जो मनुष्य स्वस्थ और दीर्घजीवी होता था उसे गजप्राण कहा जाता था।[1] हाथी शक्ति का द्योतक समझा जाता था। योद्धाओं की शक्ति इस बात से अन्दाज़ी जाती थी कि वे कितने हाथियों को वश में कर सकते हैं। भीमसेन में दस हज़ार हाथियों का बल बताया जाता था। जंगल के अनेक विशेषज्ञों का मत है कि वन का वास्तविक राजा हाथी है। सिंह और शेर इससे छेड़खानी नहीं करते। छह सौ पौण्ड का सिंह

---

१ शमयति गजानन्यान्गन्धद्विपः कलभोऽपि सन्।
विक्रमोर्वशीय, अंक ५; १८।
स कृष्यः स्याद्गजप्राणः सदा चातिबलेन्द्रियः।
चरक, चिकित्सा स्थान १; (३) २१।

भी सात टन के गजराज के लिए सम्मानपूर्वक रास्ता छोड़ कर एक तरफ हो जाता है।

हाथी का भार पन्द्रह हज़ार पौन्ड तक पहुँच जाता है। मैसूर में दो विशालकाय हाथियों का भार क्रमशः १६,४६४ पौण्ड और १५,२३१ पौण्ड दर्ज किया गया है। बड़े डीलडौल और वज़न के कारण यह धरती पर सबसे बड़ा जानवर माना जाता है। एशिया का हाथी इतना चुस्त नहीं होता क्योंकि उसके भारी जिस्म के मुकाबले में टाँगें छोटी होती हैं। हाथी की गरदन छोटी, मोटी और स्थिर होती है जिस के ऊपर महावत बैठता है। गरदन को यह इधर-उधर नहीं घुमा सकता। उम्र बढ़ने के साथ-साथ हाथी के सिर और कानों पर मांस के रंग के चकत्ते पड़ जाते हैं जिनके बीच-बीच में काले निशान चमकते हैं।

हाथी के पैर के नीचे जो मोटी तह होती है उसे तवक कहते हैं। घोड़े की सुम या बैल के खुर के समान पक्की सड़क पर चलने से तवक घिस जाते हैं और उन से खून निकलने लगता है। इसलिए पालतू हाथी को पीलवान सदा कच्ची सड़क पर या रेतीली ज़मीन पर चलाता है। बड़ी उम्र के हाथियों के पिछले दोनों पैरों के तवकों के बीच में गड्ढे पड़े रहते हैं।

हाथी की सूँड वस्तुतः नाक का रूपान्तर है जो लम्बी और गतिशील होने के साथ-साथ चीज़ों को पकड़ने के योग्य भी होती है। इसके सिरे पर दो नथुने होते हैं। सूँड का सिरा कोमल होता है। उससे यह कठोर तथा कठिन काम नहीं कर पाता। सिरे से छह इंच नीचे, अन्दर की ओर की सूँड घास और कठोर चीज़ों को पकड़ने, तोड़ने और उठाने के काम आती है। बचपन में दुम के बाल नरम और छोटे होते हैं। उम्र बढ़ने के साथ-साथ ये सख्त होते जाते हैं और बारीक तार जैसे लगते हैं।

कान और नाखूनों से हाथी की उम्र के बारे में कुछ मोटा अन्दाज़ लगाया जाता है। छह-सात साल के बच्चे की कनौतियाँ (कान के ऊपर के किनारे) सीधी तनी रहती हैं। उम्र बढ़ने के साथ-साथ, तेरह से बीस बरस की उम्र तक, कनौतियाँ गिरनी शुरू हो जाती हैं। तीस बरस की उम्र के हाथी की कनौतियाँ ज़रूर गिरी हुई होंगी। बूढ़े हाथियों में तो कनौतियाँ प्रायः फट जाया करती हैं। कान की लौल (निचला किनारा) भी आयु की वृद्धि के साथ-साथ नीचे लटकती जाती है।

भारतीय दन्तुर हाथी की औसत ऊँचाई आठ से नौ फुट और हथिनी की

छह से आठ फुट होती है। नर हाथी दस फुट साढ़े सात इंच से ऊपर प्रायः नहीं जाते। भारत में नर की अधिकतम ऊँचाई ग्यारह फुट और मादा की नौ फुट तक मिल जाती है। ठीक-ठीक माप जानने के लिए हाथी को कन्धे की ऊँचाई तक नापना चाहिए। उस समय हाथी की चारों टाँगें पास करके सीधा खड़ा करना चाहिए। गज-विशेषज्ञों का अनुमान है कि पालतू हाथी से जंगली हाथी कुछ अधिक लम्बा होता है।

यह पाया गया है कि अगले पैर की गोलाई को दुगना कर दें तो हाथी के कन्धे तक की ऊँचाई निकल आती है। इस नियम के आधार पर, मिट्टी पर पड़े पैरों के निशानों को नाप कर जंगली हाथी की ऊँचाई का अन्दाज़ किया जाता है। मनुष्य की तरह हाथियों के भी छोटे और बड़े पैर होते हैं। इसलिए पैर की परिधि को आधार मान कर ऊँचाई को प्रामाणिक नहीं माना जा सकता। हां, मारने के बाद जंगली हाथियों के नाप लिये जा सकते हैं। इस तरह नापने में कभी-कभी ग्यारह फुट के हाथी भी मिल जाते हैं।

उगाण्डा के गवर्नर सर विलियम गोवर्स ने अफ्रीकी हाथी के कन्धे पर बारह फुट ऊँचाई नापी थी। इससे अधिक ऊँचा हाथी दुनियां में कहीं नहीं रिकॉर्ड किया गया।

हाथी के जो लम्बे दाँत बाहर निकले हुए होते हैं उन्हें उद्दन्त (tusk) कहते हैं। शरीर-रचना-विज्ञान की दृष्टि से कहा जा सकता है कि ऊपरले जबड़े के कर्तन-दन्त (काटने वाले दाँत) ही खूब बढ़ कर लम्बे मुड़े हुए उद्दन्तों में बदल जाते हैं। नर हाथी में दाँतों की यह विशेषता अधिक स्पष्ट होती है। एशियाई हथिनियों में उद्दन्त सरीखे, परन्तु उनसे छोटे, दो दाँत मुँह से बाहर निकले हुए दीखते हैं, जिन्हें दंतलियाँ (tushes) कहते हैं। जिन नर हाथियों के उद्दन्त नहीं निकलते उन्हें मखने हाथी कहते हैं। ऐसे हाथी लंका में तो आम-तौर पर मिल जाते हैं लेकिन भारत में कम मिलते हैं। उद्दन्तों वाले हाथियों को दन्तुर हाथी कहते हैं। दन्तुर माँ-बाप का बच्चा दन्तहीन हो सकता है। इसी तरह दन्तहीन माँ-बाप का बच्चा दन्तुर हो सकता है।

दूधिया उद्दन्त तकुए की शक्ल के होते हैं। इनके ऊपर इनेमल की परत चढ़ी रहती है। छह महीने के अन्दर ये गिर जाते हैं। उसके बाद शीघ्र ही दन्ती (dentine) के उद्दन्त निकल पड़ते हैं जो लगातार बढ़ते रहते हैं। हर दस साल

34328
24-3-70

बाद इन्हें काट लिया जाता है जिससे अच्छे परिमाण में हाथी-दाँत (ivory) प्राप्त होता है।

हाथी के निचले जबड़े में श्वदन्त (canine) और कर्तनदन्त होते ही नहीं। पश्चहानव्य (molars) दाँत बड़े होते हैं और उनकी संख्या छह होती है। पहला दूधिया पश्चहानव्य दाँत दो साल की आयु में गिर पड़ता है, दूसरा छह साल में, तीसरा नौ साल में, चौथा (या पहला किशोर दाँत) बीस और पच्चीस साल के बीच में तथा पाँचवां साठ साल में। छठा पश्चहानव्य दाँत उम्र भर रहता है।

मुख के अगले भाग में उद्दन्तों के अलावा कोई और दांत नहीं होते। रात को सोते समय फर्श पर टिकाने से उद्दन्त के सिरे घिसते रहते हैं। रक्षा के लिए इन पर लोहा चढ़ा देते हैं।

युद्ध में शस्त्र के रूप में हाथी को अपने लम्बे उद्दन्तों का लाभ अवश्य होता है, परन्तु ज्यादा लम्बे और भारी उद्दन्त घने जंगलों में उसके लिए मुसीबत बन जाते हैं। यह भी एक कारण है कि मेला शिकार में जंगली हाथियों को फन्दे में फंसाने के काम में दन्ती गजों को नहीं रखा जाता। शिकार के लिए या वन विहार में भी इन्हें ज्यादा पसन्द नहीं किया जाता। ऐसे कामों के लिए मजबूत मादा या मखना उपयोगी रहते हैं।

टी० एच० मौण्टीथ ने असम में एकदन्ता गणेश को गोली से मार गिराया था। उसके उद्दन्त की लम्बाई सात फुट साढ़े चार इंच और वज़न पच्चासी पौण्ड था। बड़े उद्दन्तों वाला एक हाथी सी० एन० शाडवेल्ल ने मारा था जिसके उद्दन्त सात फुट चार इंच और सात फुट तीन इंच थे, इनका वज़न साढ़े सतत्तर और पचहत्तर पौण्ड था। दक्षिण भारत में कर्नल एफ० एस० गिलेस्पि ने एक बदमाश हाथी को शूट किया था। इसके उद्दन्त सिरे पर एक दूसरे के ऊपर थे। दक्षिण भारत में सम्भवतः इससे बड़े उद्दन्त नहीं मिले। दोनों की लम्बाई एक समान—आठ फुट दो इंच—थी, एक का भार इक्यानवे पौण्ड और दूसरे का साढ़े नब्बे पौण्ड था। आर० सी० मॉरिस ने भी दक्षिण भारत में एक बदमाश हाथी को शूट किया था जिसके उद्दन्त जबड़े से अठारह इंच बाहर ही एक-दूसरे के ऊपर थे। इससे प्रतीत होता है कि हाथी को खाने में भी काफी दिक्कत पेश आती होगी। नापने पर उद्दन्त सात फुट साढ़े सात इंच और सात फीट नौ इंच निकले, वज़न में अड़सठ और तिरसठ पौण्ड। अन्नामलई में एक हाथी मरा हुआ

पाया गया जिसके उद्दन्त सात फुट दस इंच और सात फुट साढ़े आठ इंच थे तथा भार साढ़े बयासी और साढ़े उन्नासी पौण्ड था।

एशियाई हाथी के उद्दन्तों के एक जोड़े के रिकॉर्ड नाप आठ फुट नौ इंच और आठ फुट दो इंच थे। अफ्रीकी उद्दन्त का सबसे बढ़िया जोड़ा नेचुरल हिस्ट्री के अमेरिकन संग्रहालय में है। इनमें से एक साढ़े ग्यारह फुट और दूसरा ग्यारह फुट लम्बा है। दोनों का मिला हुआ भार २९३ पौण्ड है। शिवालिक पहाड़ियों में वर्तमान हाथियों के जो पूर्वज अतिनूतन युग (Pliocene) और प्रातिनूतन युग (Pleistocene) में ढाई सौ लाख साल पहले बसते थे उनके विशाल उद्दन्त दस फुट तक लम्बे होते थे और उनका घेरा दो फुट तीन इंच था। कलकत्ते के राष्ट्रीय संग्रहालय में हाथियों के इन पुरखों की अश्मीभूत खोपड़ियाँ और उद्दन्त रखे हैं।

प्रणय-क्रीड़ा

दन्ती या नर हाथी पच्चीस बरस की उम्र में पूरा विकसित हो जाता है। पन्द्रह बरस की हथिनी के बच्चा पैदा होते देखा गया है। इस उम्र में हाथी और हथिनी अपना जोड़ा ढूंढने लगते हैं।

एक बार देखा गया कि एक खूनी मखना ज़बर्दस्ती एक हथिनी को वश में करने की कोशिश कर रहा था। मखने का मद नीचे गाल तक बह रहा था और वह पूरी मस्ती में था। हथिनी उसे स्वीकार नहीं कर रही थी और उससे बचने की कोशिश कर रही थी। डर के मारे वह अपने छाज जैसे कानों को सिर के साथ चिपका लेती थी। मदमस्त हाथी पागल-सा हो गया था। सहमी हुई हथिनी को वह पीछे से पकड़ लेता और संत्रस्त हथिनी अपना मुँह फाड़ कर चीख मारती।

एक बार श्री पेट्रिक स्ट्रेसी की हथिनी सुन्दरमाला गुम हो गयी। डिब्रू आरक्षित वन में उसकी कई सप्ताह तक तलाश की जाती रही। एक जगह उन्हें एक बड़ा मखना दिखायी दिया जिसके गालों से मद बह रहा था। उसके साथ बहुत छोटी एक हथिनी थी जिसे वह पड़ोस के बगीचे से भगा लाया था। उसके टाँगों में अब भी जंजीरें बंधी थी। जब वह चलती थी तो उसकी खनखनाहट साफ़ सुनायी देती थी। श्री स्ट्रेसी लिखते हैं: 'मैं एक नर हाथी पर सवार था। जंगली मखने को निकल जाने के लिए हमने खुला रास्ता दे दिया। लेकिन उसने हमारा पीछा नहीं छोड़ा। छोटी हथिनी उसके पीछे चली आ रही थी।' मस्ती में आया हुआ यह

हाथी कितना अड़ियल हो सकता है इसका उन्हें अन्दाज़ न था।

'हमारे चिल्लाने के बावजूद भी वह पास-ही-पास आता गया। मैं उसके इरादों को ठीक-ठीक तो नहीं जान पाया परन्तु इतना स्पष्ट था कि वह हमारे नर हाथी की उपस्थिति का विरोध कर रहा था क्योंकि उसने उसे एक प्रतिस्पर्द्धी समझा था। महावत इतना घबरा गया कि मुझे गोली चलानी पड़ी। चार नम्बर की गोली उसके सिर के ऊपर एक वृक्ष के पत्तों में से फड़फड़ाती हुई निकल गयी। आखिर, वह लौट गया, परन्तु बड़े निडर और शानदार तरीके से।'

मैसूर में एक बार मद की मस्ती में एक जंगली हाथी वन विभाग की एक गर्भवती हथिनी के पीछे पड़ गया। जब हथिनी किसी तरह भी काबू में नहीं आयी तो उसे इतना गुस्सा आया कि अपने उद्दन्तों की चोटों से उसे मार डाला।

मेरे एक बिहारी सहयोगी हैं जो गज-विशेषज्ञों के खानदान में पैदा हुए हैं। उनके दादा बिहार के रईसों के लिए खरीदे जाने वाले हाथियों के बारे में सलाह-मशविरा दिया करते थे। हाल के एक अभियान में हाथियों की प्रणय-लीला संबंधी अपने पर्यवेक्षणों के बारे में मैं एक गोष्ठी में बता रहा था। आवेश में आकर अधिकार पूर्ण ढंग से उन्होंने मेरी बात काटते हुए कहा कि हमारे गाँव का अदना बच्चा भी जानता है कि हाथी पानी के अन्दर, जहाँ उन्हें कोई देख न सके, जोड़ा करते हैं। अनुश्रुतियों के आधार पर सयाने इसकी व्याख्या करते हुए बताते हैं कि पानी के अन्दर हाथी का भार हलका हो जाता है।

बहुत से सयाने हाथियों को जोड़ा करते हुए देखने को बड़ा अमंगल मानते हैं। उनका विश्वास है कि इसे देखने वाला किसी बड़ी विपत्ति में फंस सकता है।

रोमन लेखक प्लीनी (२३ से ७९ ईसवी) ने बताया था कि हाथी एकांत में सम्भोग करते हैं। जन-साधारण के अलावा पीलवानों ने भी मुझे ऐसी ही बातें बतायी हैं। वे कहते हैं कि रतिकर्म में प्रवृत्त हाथी दूसरे हाथियों की उपस्थिति को बर्दाश्त नहीं करते। इस बात की पुष्टि के लिए शिकारियों और गज-विशेषज्ञों ने कई दृष्टान्त दिये हैं।

इन मान्यताओं के विपरीत मैंने हाथी के जोड़े को अन्य हाथियों की मौजूदगी में मिलन करते देखा है। एक बार तो ऐसा एक जोड़ा झुण्ड का नेतृत्व करता जा रहा था। मैं एक ही मिनट के लिए यह दृश्य देख पाया। हम लोग तुरन्त इस

दुर्लभ दृश्य के फोटो लेने में लग गये। वन्य-जीवन की इस घटना के फ़ोटोग्राफ़िक रिकॉर्ड दुनिया में बहुत ही कम होंगे। हाथियों के जोड़े बनाने का पुरातत्वीय रिकॉर्ड मुझे कोणार्क के सूर्य मन्दिर की भित्तियों पर उपलब्ध हुआ है। जो कुछ मैंने देखा उससे यह मेल खाता है।

पीलवानों का अनुभव है कि उत्तर भारत में पालतू हाथी कभी-कभी ही प्रणय-लीला में प्रवृत्त होते हैं। असम और दक्षिण भारत में यह भी होता है कि काम का आवेश होने पर हथिनियाँ बहुधा जंगली हाथियों के साथ भाग जाती हैं और कुछ दिनों तक प्रणय-जीवन बिता कर, शिविर में लौट आती हैं।

ढोर-डंगरों के समान ही ये भी गर्भाधान करते हैं। हां, एक बात उनसे भिन्न होती है। वह यह कि हथिनी के लिए हाथियों में लड़ाई नहीं ठनती। सारा काम शान्ति से सम्पन्न हो जाता है। एक बार श्री स्ट्रेसी और शिविर के दूसरे लोग झोंपड़ियों के साये में छिपे हुए देख रहे थे। बड़े कुनकियों ने बारी-बारी से हथिनी के साथ जोड़ा करने की कोशिश की। एक असफल हो जाता तो दूसरा उसकी जगह ले लेता। इसमें न तो उतावलापन नज़र आता था, और न लड़ाई-झगड़ा ही हुआ। कुछ गज-विशेषज्ञों के अनुभव भिन्न हैं। वे शिविर में हाथियों के प्रणय संबंध को सामान्यतया पसन्द नहीं करते। क्योंकि, इस अवसर पर हाथियों में संघर्ष पैदा हो सकता है और द्वन्द्व-युद्ध की नौबत आ सकती है, जिसमें मूल्यवान् हाथी ज़ख्मी हो सकते हैं। उनके इलाज व आराम के लिए कई-कई महीने लग सकते हैं। इसमें बड़ा आर्थिक घाटा पड़ता है।

भारत-भूटान सीमा के समीप जलदापड़ा जंगल में हाथियों का एक शिविर था। शिविर की हथिनियों से मिलने के लिए एक जंगली दन्ती आ जाया करता था। महावतों को उसका यह प्रणय व्यापार पसन्द नहीं था, इसलिए वे हो-हल्ला मचाकर या खाली कारतूस छोड़कर उसे भगा दिया करते थे। एक बार, जब वह मस्ती में था, मध्यरात्रि के ज़रा पहले शिविर में दाखिल हुआ। उसने शिविर के सबसे बड़े हाथी को मार गिराया। उसके निचले जबड़े में मस्त गज ने अपने उद्दन्त गाड़ दिये जो सीधे उसके मस्तिष्क तक घुस गये। शिविर का हाथी मुकाबले में बड़ा तो ज़रूर था परन्तु वह प्रौढ़ अवस्था में पहुँच चुका था और साथ ही अपने खूंटे पर बन्धा हुआ था। शिविर में सभी लोग जाग गये और जंगली दन्ती को भगा दिया गया।

पालती दून वन श्रृंखला में हथिनी के कारण एक वार प्राण लेवा युद्ध होते देखा गया था। आठ मार्च, १९६७ की घटना है।

एक हथिनी के लिए तीन गजराजों में भिड़न्त हो गयी। एक तो पहली टक्कर में ही भाग खड़ा हुआ, लेकिन दूसरा हार मानने वाला न था। पटेरपानी वनखण्ड में उन्होंने इन हाथियों की भिड़न्त देखी। जंगल के महकमे के अधिकारी उस समय दौरा कर रहे थे। घाटी में सभी जगह शान्ति का साम्राज्य था। हाथियों के उद्दन्त आपस में इस तरह टकराते कि उनकी आवाज तंग घाटी को घेरकर खड़े पहाड़ों से टकराकर ज़ोर से गूँजती। ऐसा लगता जैसे बिजली कड़क रही हो।

दोनों ही घातक दाँव-पेंच लगा रहे थे। प्रहार इतने ज़ोर से किये जाते थे कि दर्द के मारे योद्धाओं की चीखें निकल जाती थीं। आक्रान्ता हाथी संभावित जीत की खुशी में तथा दुश्मन पर आतंक बिठाने के लिए जैसे विजय दुन्दुभि बजाता था।

पास के वनखण्डों में रहने वाले चालाक गुलदार, चौकन्ने शेर, मंगी गीदड़ और लकड़बग्घे इस युद्ध को दिलचस्पी से देख रहे थे। ऐसे शुभ दिन कम ही आते हैं जब किसी हाथी के मरने पर उन्हें भोज मिलता है। मांसाहारी पशुओं के लिए ऐसे मौके पर यह सूक्ति सही बैठती है—'पशवस्तत्र मोदन्ते महो वै नो भविष्यति।'

बाजू की एक ज़ोरदार टक्कर से बलशाली हाथी लड़खड़ा गया। इस कम-ज़ोरी का गजराज ने पूरा लाभ उठाया। अन्तिम दाँव के रूप में संगमरमर जैसे दोनों उद्दन्त दो फुट अन्दर तक घुस गये और उन्होंने तीन इंच चौड़े घाव बना दिये और फेफड़े फट गये। मर्मान्तक पीड़ा से हाथी ज़ोर से कराहा और धड़ाम से गिर पड़ा। रणभूमि में श्मसान की-सी चुप्पी छा गयी।

सहायक वन्य-जन्तु रक्षक तीसरे दिन रिपोर्ट तैयार करने घटनास्थल पर गये। लाश को खाने के लिए हज़ारों गिद्ध ऐसे टूट पड़े थे मानों टिड्डी दल ने हमला बोल दिया हो।

लाश एक करवट पड़ी थी। चारों टाँगें एक ही तरफ थीं। सूँड तनी हुई थी। चोर दोनों उद्दन्तों को कुल्हाड़े से काटकर उड़ा ले गये थे। आधार पर दाँतों का व्यास तीन इंच था। लाश की परीक्षा से पता चला कि गजराज ने अपने उद्दन्तों के प्रहार से उसका शरीर छलनी कर दिया था। पूँछ के नीचे दस इंच गहरा एक घाव था और अगली टाँगों के बीच में दस इंच का गहरा घाव था।

गरदन के दाहिनी ओर तीन इंच व्यास का एक ज़ख्म बन गया था। आमाशय के दाहिनी ओर लगभग दो इंच चौड़ा एक ज़ख्म था।

अबुल फ़ज़ल के आइने अकबरी में अकबर के शासनकाल में हाथी संबंधी ज्ञान का अच्छा परिचय मिलता है। अबुल फ़ज़ल ने वर्णन किया है कि गरमी में आयी हुई किसी हथिनी को पाने के लिए एक हाथी दूसरे से भिड़ रहा है। उनके बीच में बच्चा आ जाता है तो वे उसे अपनी सूँड से बड़ी कोमलता से एक तरफ कर देते हैं और फिर भिड़ जाते हैं। अबुल फ़ज़ल लिखते हैं कि कोई कामुक हाथी किसी तरह बन्धन से मुक्त हो जाये तो उसके पास जाने की किसी की हिम्मत नहीं होती। ऐसी अवस्था में हथिनी को उसके पास ले जाते हैं। उसे देखकर वह प्रतिरोध नहीं करता और तब उसे पकड़ लिया जाता है।

अन्तिम फैसला करने वाली मादा होती है। यदि वह गरमी में नहीं है तो हाथी द्वारा किये जाने वाले सभी प्रयत्नों को विफल कर देती है। मादिन गरमी में आयी हुई है या नहीं, इस बात के प्रकट रूप में कोई चिन्ह दिखायी नहीं देते। यह माना जा सकता है कि गरमी में आयी हुई हथिनी से एक आकर्षक गंध आती है। अन्यथा यह समझना असम्भव है कि हाथी क्यों उसके पीछे लग जाता है, और कभी-कभी तो बड़ी दूर से वह ऐसी हथिनी की तलाश कर लेता है।

प्रजनन और बच्चा पालने में कठिनाइयाँ

माँ बनने वाली हथिनी के चारों ओर कुछ हाथी थोड़ी-थोड़ी दूरी पर खड़े थे। मोटे तौर पर एक घेरा बन गया था। सबके मुँह बाहर की ओर थे। कुछ हाथी तो स्पष्ट रूप से सन्तरियों की तरह चेष्टाएँ कर रहे थे, मानो किसी भी ओर से आनेवाले खतरे का मुकाबला करने को तैयार हैं। बच्चे के जन्म के बाद इनकी व्यूह रचना में कुछ अन्तर आ गया। हाथी पास-पास आ गये, लेकिन उन्होंने अपने मुँह बाहर की ओर ही रखे। वे चिंघाड़ रहे थे, गरज रहे थे, कान फड़फड़ा रहे थे, उनके पैर अस्थिर थे और शरीर झूम रहे थे। केन्द्र में एक छोटी काली दुबली चीज़ पड़ी थी जिसके ऊपर से माँ तथा दूसरी हथिनियाँ झिल्ली उतार रही थीं। प्रसाविकाओं की टोली में छह हथिनियाँ व पाँच छोटे बच्चे थे। इनके अलावा एक युवा हाथी पन्द्रह गज़ की दूरी पर खड़ा हुआ इस जन्मलीला को देख रहा था। बच्चे की सुरक्षा के लिए यह मज़बूत व्यवस्था की गयी थी। कुछ हथिनियाँ बच्चे को

सहलाने लगीं और सूंडों से पकड़कर उसे खड़ा करने लगीं। इस बीच में दूसरी हथिनियों ने झिल्ली के थैले को उतार लिया था। एक ने उसे सूंड में उठाया और दूर आसमान में फेंक दिया। ऊँचाई से गिरते हुए इस थैले में हवा भर गयी और वह एक नन्हे पैराशूट के समान फैल गया।

इस अवस्था में नीले आसमान पर गिद्ध उतरने लगे। परिचारिका हथिनियाँ उधर बढ़ने वाले गिद्धों को भगा देती थीं। पहरेदार किसी को प्रसूति-कक्ष में नहीं आने देते थे। एक हाथी का इन्होंने लिहाज़ किया। वह 'वार्ड' के अन्दर चला गया।

लगातार कोई दस मिनट तक पहरेदार गरजते रहे और चिंघाड़ते रहे मानो तुरही और नगाड़ों के घोष में नये मेहमान के आने की खुशियाँ मनायी जा रही हों। उसके बाद आध घण्टे तक लगभग चुप्पी रही। तब हथिनियाँ और उनके बच्चे दूर हट गये। अगली कार्यवाही में इन्हें भाग नहीं लेना था। माँ और नवजात शिशु के साथ ये एक हथिनी को और एक पट्ठे को छोड़ गये।

शिशु गीला था, आश्लेष्म से आवृत्त था और उसकी देह पर खूब बाल उगे थे। सिर पर बाल अधिक थे। वह अभी भी धरती पर लड़खड़ाता था और खड़ा होने में असमर्थ था। माँ और मौसी तथा बड़े भाई ने नन्हें शिशु को कोमलता से उठाना जारी रखा। वे उसे पैरों के बल खड़ा करने का प्रयत्न कर रहे थे। दो घण्टे से अधिक समय तक वे ऐसा नहीं कर पाये। मौसी तो पहले ही अनमनी हो गयी थी। उसने सोचा कि अब मैं इस से ज़्यादा कुछ नहीं कर सकती और उन्हें छोड़कर झुण्ड में मिलने के लिए चली गयी।

लेकिन बड़ा भाई लगा रहा। बच्चे के पेट के नीचे सूंड को डालकर वह उसे उठने में सहायता करता था। कभी वह एक बाजू से सूंड डालता और कभी टाँगों के बीच में से। अन्ततोगत्वा उसकी कोशिशें कामयाब हो गयीं। अपने सहारे खड़े होने के शिशु के प्रयत्न बार-बार विफल हो जाते थे। वह फिर-फिर गिर पड़ता, हर बार डर के मारे चिल्लाता भी जाता। जब उसने पहले लड़खड़ाते कदम आगे रखने की कोशिश की तो वह आगे की ओर सिर के बल गिर पड़ा और लुढ़ककर पीठ के बल आ गया। उसे आराम तो बिलकुल नहीं करने दिया गया और बल्कि उसे लगातार पैरों के भार खड़ा होने पर बाध्य किया जाता रहा। जब तक कि वह खुद खड़ा होने और चलने योग्य नहीं हो गया।

जब यह सब हो रहा था तो माँ झिल्ली को उछालती जा रही थी। उसने दो बार इसे खाने की कोशिश की। उसने इसे अपनी पीठ पर भी फेंका जहाँ इसका एक टुकड़ा पड़ा रहा। बच्चा पैदा होने के दो घण्टे बाद उसने जेर फेंकी। सूँड से पकड़कर उसने इसे खींच लिया, बाहर की परत को खा गयी और शेष को छोड़ दिया।

ज्योंही शिशु अपने आप खड़ा होने योग्य हो गया, बड़ा भाई भयंकर चीत्कार करता हुआ खिसक गया। हाथियों को जब यह भान हो गया कि सब कुछ ठीक-ठाक है तो वे एक-एक करके चलते बने। सबसे पहले रक्षा करने वाला घेरा उठा, उसके बाद प्रसाविकाओं की टोली, तब मौसी और अन्त में बड़ा भाई विदा हुए।

भारत और बर्मा में यद्यपि काफी हाथी पाले जाते हैं परन्तु अचरज की बात है कि बन्दी जीवन में इनके बच्चे कम ही होते हैं। यूरोप में शायद किसी अफ्रीकी पालतू हाथी ने बच्चे नहीं दिये। यूरोप में एशियाई हाथी के बच्चा जनने की पहली घटना १९०३ में लण्डन के चिड़ियाघर में घटी थी। यह हथिनी एक सर्कस की थी। दुर्भाग्यवश शिशु कुछ सप्ताह ही ज़िन्दा रहा था। भुस में भरी इसकी देह अब भी साउथ केनसिंग्टन में स्थित लण्डन नेचुरल हिस्ट्री म्यूज़ियम में देखी जा सकती है। १९०७ में कोपनहेगन के जार्डिन दे एक्लिमेशन में एक बच्चा पैदा हुआ था। इसी संस्था में इसी माता-पिता का दूसरा बच्चा १९१२ में पैदा हुआ था।

अकबर के समय में हथिनी का गर्भधारण काल अठारह चंद्र मास समझा जाता था। आधुनिक अनुमान के अनुसार नर बच्चा माँ के पेट में बाईस महीने और मादा बच्चा बीस महीने रहता है। विभिन्न गजपालकों ने यह समय सत्रह से चौबीस महीने तक बताया है। ढाई-ढाई बरस के अन्तर से हथिनी सन्तान पैदा करती हुई देखी गयी है।

एक बार में एक बच्चा पैदा होता है। अपवाद रूप में, मनुष्य के समान, कभी-कभी दो जुड़वां बच्चे भी पैदा होते देखे गये हैं। बर्मा में लकड़ी ढोने वाली एक हथिनी ने २६ अक्टूबर, १९६१ को एक बच्चे को जन्म दिया। यह नर था और सुबह साढ़े छः बजे पैदा हुआ। साढ़े तीन घण्टे बाद दूसरे बच्चे ने जन्म लिया, यह मादा था। कन्धे पर नर की ऊँचाई दो फुट नौ इंच और मादा की दो फुट आठ इंच थी। इससे पहले १० जून, १९५९ को उसने एक मादा बच्चे को जन्म

दिया था। दो साल साढ़े तीन महीने के अन्तर से बच्चे देना एक असाधारण बात है।

स्याम में २७ अक्तूबर १९१३ को एक हथिनी ने तीन बच्चों को जन्म दिया था। ये सभी नर थे। एक मरा हुआ पैदा हुआ, एक सामान्य बच्चों जैसा और एक बहुत छोटा। ये दोनों भी केवल आठ और नौ नवम्बर तक ही ज़िन्दा रहे। इन्हें पालने की सभी कोशिशें की गयीं परन्तु माँ ने इन की तरफ ध्यान नहीं दिया। वे जब दूध पीने बढ़ते थे तो वह दुलत्ती मारती थी। जब माँ की बेड़ियां खोल दी जाती थीं, वह बच्चों से दूर भाग जाती थी। माँ की ऊँचाई सात फुट चार इंच थी और उम्र शायद लगभग पच्चीस बरस। उसके मालिकों के ख्याल में उसका यह पहला प्रसव था। नवजात शिशु की ऊँचाई दो फुट दस इंच और भार लगभग दो सौ पौण्ड होता है। यह रोमों से ढका होता है। शुरू के कुछ महीनों तक शिशु अपनी सूँड का उपयोग करने में समर्थ नहीं होता। यह अपने मुख से सूंघता है। हथिनी के थन अगली दोनों टाँगों के बीच में होते हैं। छोटा बच्चा जब भय मानता है तो अपनी माँ की सूँड के पीछे छिपना चाहता है।

कम से कम दो साल तक तो बच्चा मां का दूध पीता है। अबुल फज़ल ने यह समय पाँच साल लिखा है। छोटा बच्चा जब घास से खेलने लगे और उसे मुँह में लेकर चबाने लगे तो कई लोग समझ बैठते हैं कि वह ठोस पदार्थों को खाने के योग्य हो गया है। परन्तु यह स्मरण रखना चाहिए कि हाथी के बच्चे तब तक माँ का दूध पीते रहते हैं जब तक उनके भाई या बहिन का जन्म नहीं हो जाता। असम की एक गजशाला में एक हथिनी अपने तीन बच्चों को बारी-बारी से दूध पिलाती थी। यह ठीक है कि सबसे छोटे को सबसे अधिक दूध पीने का अवसर दिया जाता था।

खेदे में दुधमुंहा बच्चा माँ से अलग पकड़ लिया जाय तो उसे पालना कठिन होता है, और मंहगा भी पड़ता है। बड़ी मेहनत के बाद ऐसा बच्चा ज़िन्दा रह जाय तो गनीमत है। जंगल में उसे शेर की दया पर छोड़ देना निर्दयता होगी, इस आशंका से उसे जंगल में भी नहीं छोड़ा जाता। शिविर में वह हरेक का स्नेह पात्र बन जाता है।

असम में चाय बागानों के मालिक फ्रैन्क निकल्स का हाथी एक बार जंगल से गुज़र रहा था तो एक जंगली हथिनी ने आकर उसके मस्तक पर अपनी सूँड रख

दी। उसे पालतू हाथी से और उस पर बैठे आदमी से ज़रा भी डर नहीं लगा। वह सहायता के लिए उसे बुला रही थी। वे उसके पीछे-पीछे हो लिये। हथिनी ने उन्हें एक ऐसी जगह पहुँचा दिया जहाँ उसका बच्चा खड़ा था जिसकी एक टांग का निचला जोड़ शेर ने बेकार कर दिया था।

पैट्रिक स्ट्रेसी को एक जंगली गज-शिशु का अनुभव है, जो शेरों द्वारा हमला किये जाने के बाद अपने झुण्ड और अपनी माँ से बिछुड़ गया था। शेर के पंजों का शिकार बनने की बजाय वह बहादुर बच्चा हिम्मत करके नागा पहाड़ियों के नीचे जंगल के मध्य में बनी रेलवे गैंगमैनों की एक झोंपड़ी में पहुँच गया। प्रकट रूप में यह माना जा सकता है कि वह रक्षा और भोजन पाने की आशा से उनकी शरण में आ गया था।

जंगली हाथियों के बच्चे कई बार अपने झुण्ड को छोड़कर पालतू हाथियों के साथ आ जाते हैं। वे इतने भोले होते हैं कि जंगल की दुनिया में भी अपने और पराये का भेद नहीं जानते।

इक्कीस मई १९६८ की शाम पाँच बजे जंगल के अन्दर हमें जो पहला हाथी दिखायी दिया वह एक घुई थी जिसके साथ करीब दो साल का एक बच्चा था। धीरे-धीरे बढ़ते हुए हम उससे सौ फीट दूर रह गये। हमें देखकर घुई भाग खड़ी हुई। बच्चा, उसके साथ जाने की बजाय, हमारी ओर बढ़ने लगा। अपनी सूँड बढ़ाकर उसने हमारी हथिनी का स्वागत किया। वह समझ रहा था कि यह हथिनी भी उन्हीं के झुण्ड की सदस्या है। उसकी माँ जब दूर निकल गयी तो वह भी कुछ क्षणों बाद भाग गया।

एक बार खुले शालवन में एक झुण्ड को चरते हुए पाकर पैट्रिक स्ट्रेसी उसे देखने के लिए खड़े हो गये। वे पूरे सावधान थे कि झुण्ड को उनके आने का पता न चले जिस से हाथी स्वाभाविक रूप से अपना कामकाज करते रहें। कुछ देर बाद वे लौटने लगे। अचानक उन्होंने देखा कि एक छोटा-सा दन्तुर उनके हाथी के पीछे-पीछे आ रहा है। उसकी ऊँचाई चार फुट से अधिक नहीं रही होगी। झुण्ड से वह कम से कम सौ गज़ दूर तो अवश्य चला आया होगा। अनुगमन करते हुए वह जब-तब अपनी नन्हीं सूँड से बड़े हाथी की गन्ध को ग्रहण करने की कोशिश करता था। स्ट्रेसी ने अपने हाथी को रोका। उस बच्चे को देखकर उन के हाथी को गुस्सा नहीं आया। उलटे, उसने अपनी सूँड आगे बढ़ाकर बच्चे का

स्वागत किया। बच्चे ने भी अपनी सूंड आगे करके दोस्ती का हाथ बढ़ाया। स्ट्रेसी चाहते तो इस बच्चे को साथ ले जा सकते थे। लेकिन, इतने छोटे बच्चे को पालने में जो कठिनाइयाँ होती हैं उनका ध्यान करते हुए उन्होंने चिल्लाकर उसे भगा दिया। बढ़िया नियम तो यही है कि चार फुट से छोटे बच्चे को पकड़ा ही न जाय। जंगल में यदि उसे उसकी माँ के साथ या झुण्ड के बीच में छोड़ा जा सकता है तो तुरन्त ऐसा कर देना चाहिए।

आहार

हाथी के बच्चे को गौ या भैंस के दूध पर रखा जाय तो वह जल्दी कमज़ोर होने लगता है और उसका हाज़मा खराब हो जाता है। यदि गौ-भैंस के दूध में अण्डे की सफ़ेदी, कैल्शियम और विटामिन मिलाकर दिये जायें तो ऐसे बच्चे सफलतापूर्वक पाले जा सकते हैं।

विहारी गजवैद्य करमकों को दूध के अलावा दाल-चावल की पतली खिचड़ी भी देते हैं। वे इसमें ज़रा सा गुड़ भी मिला देते हैं। बांस की एक नलकी में भर कर वे बच्चे को पिला देते हैं।

असम में श्री 'जी' ने एक हाथी के बच्चे को पालने की कोशिश की थी। उनके पास जब वह आया तो तीन फुट दो इंच ऊँचा था और अन्दाज़ था कि उसकी उम्र पाँच महीने ही की है। डेढ़ महीने तक वह 'जी' के पास रहा। वे उसे गौ के ताज़े दूध में एक-चौथाई पानी मिलाकर और ज़रा-सी दाल-चावल की खिचड़ी बना कर देते थे। हरे भोजन को कुतरना वह सीख गया था। गुड़ का वह शौकीन था। लण्डन के लिए जब वह उड़ा तो रास्ते के लिए डिब्बे का दूध और कौर्नफ़्लेक रख लिये थे। लण्डन पहुँचने पर वह ऐसे भोजन पर रखा गया जिसे हथिनी के दूध जैसा पौष्टिक बना लिया गया था। छह महीने बाद वह ठोस भोजन अधिक परिमाण में लेने लगा था, फिर भी कुछ और समय तक द्रव भोजन उसके लिए अधिक लाभदायक समझा जाता था।

माँ अपने बच्चे को बेहद प्यार करती है। झुण्ड के अन्य हाथी भी उसका ध्यान रखते हैं। चरते समय या सोते समय वह सदा अपनी माँ या बड़े हाथियों के संरक्षण में रहता है। बन्दी बनाये गये हाथियों में बच्चों के प्रति ऐसी ममता नहीं दिखायी देती। बाड़े में बड़े नर हाथियों के रास्ते में छोटे आ जायें तो

चित्र १—दन्तों पर लोहे के प्लेट चढ़ा दिये जाते हैं ताकि वे घिसें या टूटें नहीं।

चित्र २—सोते में पानी पीते हुए

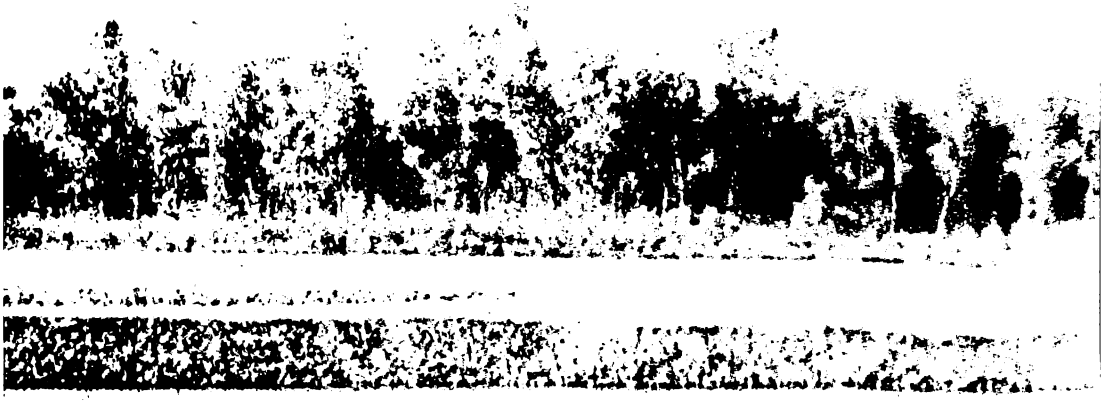

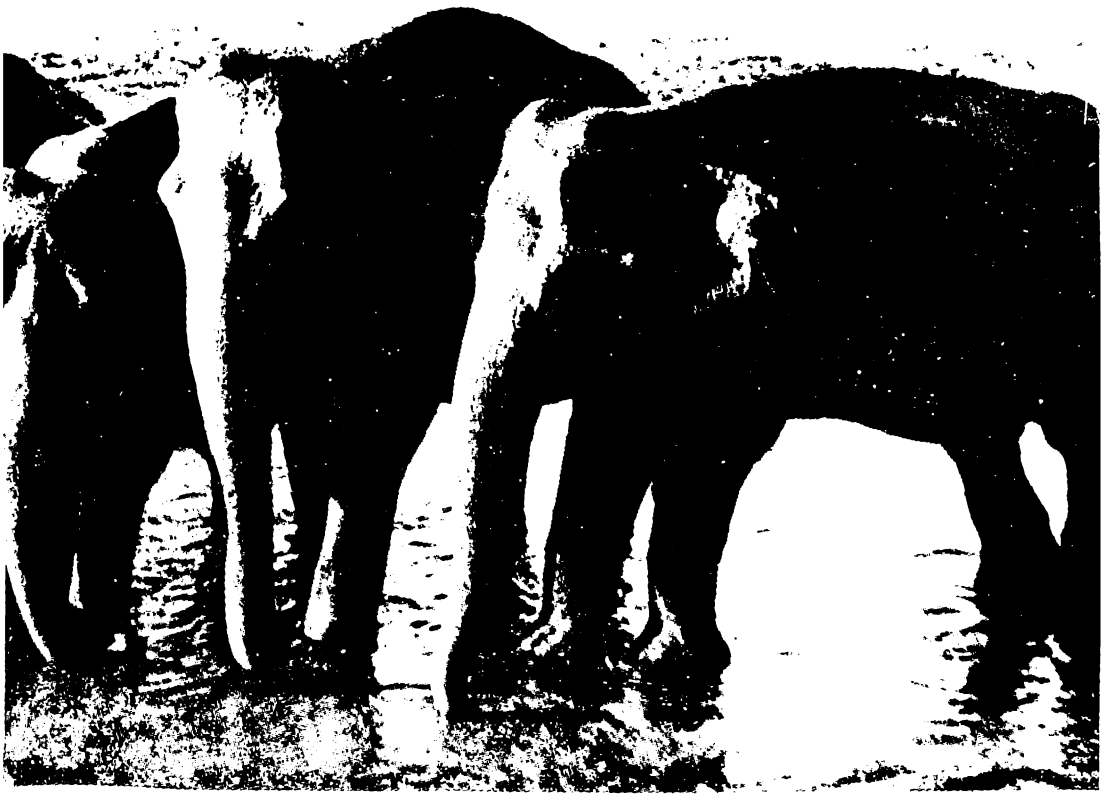

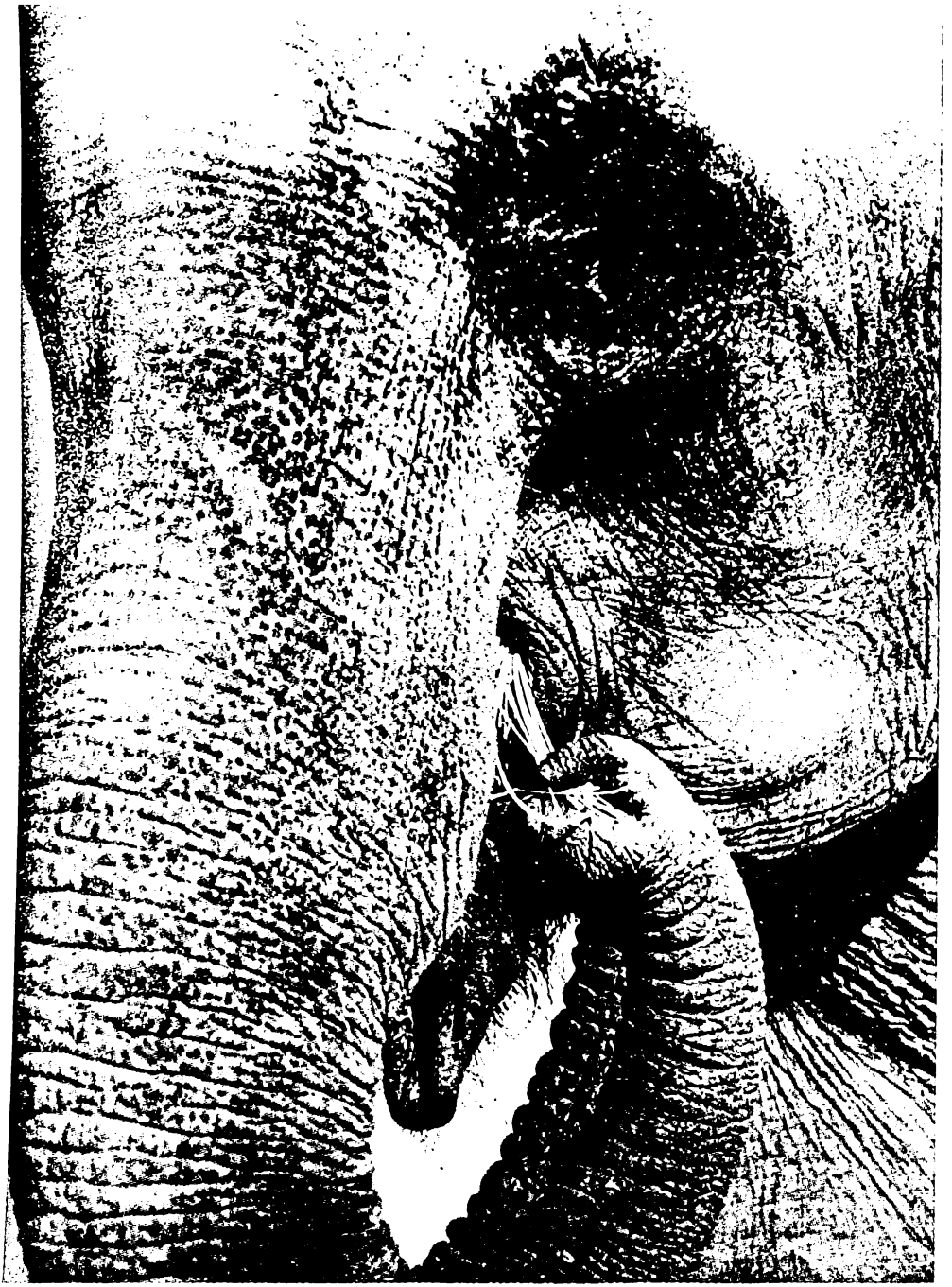

चित्र ३—घास को सूंड से तोड़ कर मुँह में डाल लिया जाता है।

वे अधीरता से उन्हें परे धकेल देते हैं, या उन पर प्रहार करते हैं, और कभी-कभी तो क्रूरतापूर्वक मार डालते हैं। भवभूति (उत्तररामचरित, अंक ३) ने एक मदमस्त गजराज द्वारा पालतू बच्चे पर हमला किये जाने का ज़िक्र किया है। सीता ने इसे पाला था और वे इसे अपने पुत्र के समान प्यार करती थीं। एक बार जब वह पानी में खेल रहा था तो मत्त हाथी उसे मारने दौड़ा। सीता ने तब चिल्लाकर राम से कहा था : आर्यपुत्र ! मेरे पुत्र को बचाइये।

मैंने देखा है कि गम्भीर खतरा आने पर हथिनियाँ कई बार अपने बच्चे को छोड़ देती हैं। सामान्य परिस्थितियों में तो खतरे का ज़रा-सा संकेत मिलने पर वे उन्हें अपने आगे हांक ले जाती हैं, तब तक सूँड से मारकर उन्हें आगे धकेलती रहती हैं जब तक कि खतरे के क्षेत्र से बाहर न निकल जायें।

दूध वाली माँ को यदि भारी काम पर लगा दिया जाये या प्रशिक्षण में लगा दिया जाये तो कार्य के बोझ और दबाव के कारण उसका दूध सूखने लगता है। ऐसी हालत में उसका अपने बच्चे के प्रति लगाव जाता रहता है। इसलिए यदि बच्चा भलीभांति चारा खाने योग्य हो चुका है तो उसे झटपट माँ से अलग कर देना चाहिए।

काज़िरंगा के वन विभाग की गजशाला में देवकली और पार्वती नामक दो हथिनियाँ थीं। इनकी ऊँचाई क्रमशः सात फुट छह इंच और सात फुट चार इंच थी। इन दोनों के पीछे एक इतिहास है। परिरक्षित वन में देवकली सवारी की हथिनी थी। १९४५ में वह वन में लापता हो गयी और जंगली झुण्ड के साथ मिल गयी। वन्य जीवन में वह चार साल रही। १९४९ के खेदे में वह अपने झुण्ड के साथ पकड़ में आ गयी। वन विभाग ने उसे पहचान लिया। उसे वह फिर लौटा दी गयी।

अपने पुराने महावत के साथ वह पहले वाले काम पर लग गयी। छह फरवरी १९५० को उसने पार्वती को जन्म दिया। प्रकट रूप में यह सन्तान लगभग बीस महीने पूर्व जंगली हाथी से जोड़ा करने का परिणाम थी।

श्री 'जी' हर साल इसके अगले पैर के घेरे का माप और कंधे तक ऊँचाई का माप लेते रहे थे। उन्होंने इस मान्यता को पुष्ट किया है कि भारतीय हाथी की कंधे तक की ऊँचाई अगले पैर के घेरे से लगभग ठीक दुगनी होती है। कुछ वर्षों में पार्वती की ऊँचाई इस प्रकार रिकॉर्ड की गयी थी :

एक साल की उम्र में	चार फुट, एक इंच
तीन साल की उम्र में	पाँच फुट, एक इंच
सात साल की उम्र में	छह फुट, डेढ़ इंच
ग्यारह साल की उम्र में	सात फुट
तेरह साल की उम्र में	सात फुट, दो इंच

तेरह साल में यह माँ से कुल चार इंच छोटी थी। इस उदाहरण में ध्यान देने योग्य बात है कि बच्चा मां के साथ अपने घर के जंगल के पास प्राकृतिक अवस्थाओं जैसे वातावरण में बढ़ता रहा था। इस पर्यवेक्षण के आधार पर हम जंगल से पकड़े गये करमों की उम्र का अन्दाजा कर सकते हैं।

१९५३ के खेदे में पाँच हाथियों का एक झुण्ड पकड़ा गया। यदि सूक्ष्मता से न देखा जाता तो ये भी दूसरे हाथियों जैसे ही थे। गौर करने पर पहली बात यह पता लगी कि ये सब मादा थीं—एक बड़ी और चार क्रमशः छोटी। अधिक छानबीन से यह भी जाहिर हो गया कि माँ और उसके विभिन्न उम्रों के चार करमों से यह पारिवारिक दल बना है। सबसे बड़ा करम बुरी तरह विकलांग था। वह इतना दुबला था कि उसकी पीठ की एक-एक हड्डी को गिना जा सकता था। उसकी टाँगें और पूँछ टूटी हुई थी। उसकी उम्र दस और पन्द्रह साल के बीच रही होगी। माँ के वात्सल्यपूर्ण देखभाल के कारण ही यह बचा हुआ था। इसे और इसकी माँ को घेरे में से मुक्त कर दिया गया।

शेष तीनों की ऊँचाई नापी गयी। पार्वती के नापों से तुलना करके इनकी उम्र इस प्रकार पता चली :

एक साल की उम्र में	चार फुट, एक इंच
तीन साल की उम्र में	पाँच फुट
सात साल की उम्र में	छह फुट, दो इंच

इसका अभिप्राय है कि जंगल-जीवन में प्रसवों के बीच का अन्तर कम होकर दो साल का भी हो सकता है। इस आधार पर एक हथिनी अपने सत्तर वर्ष के जीवन काल में बीस या कुछ अधिक बच्चे पैदा कर सकती है। स्ट्रेसी की सम्मति में एक हथिनी अपने जीवन काल में बारह से पन्द्रह तक बच्चे दे सकती है।

जोसेफ डेल्मौण्ट (कौचिंग वाइल्ड बीस्ट्स एलाइव, १९३१) को एक बार

अफ्रीकियों ने सूचना दी कि वगैर सूँड का एक बच्चा झुण्ड में घूम रहा है और वह है भी सफ़ेद।

यह समाचार बड़ा उत्तेजक था। डेल्मौण्ट ने सोचा कि यदि यह पकड़ में आ जाय तो सितारा ही बदल जायगा। छह अधिवासियों के साथ वे उस जंगल में गये। परिस्थितियां उनके अनुकूल थीं। छह घण्टे की तलाश के बाद उन्हें वह झुण्ड मिल गया। उस झुण्ड में ग्यारह हाथी थे। पेड़ों को उखाड़ने और टहनियाँ खाने में वे लगे हुए थे। एक अधिवासी ने एक बड़ी हथिनी की टाँगों के बीच में एक छोटे बच्चे की ओर इशारा किया।

हाथियों के सामान्य बच्चों से यह एकदम जुदा था। इसका रंग बहुत अधिक हलका था। कुछ देर बाद उसने अपना मुँह आगन्तुकों की ओर घुमाया। यद्यपि बहुत स्पष्ट तो नहीं देखा जा सका परन्तु जो कुछ भी दिखायी दिया उससे यह तो ज़ाहिर हो गया था कि उसकी सूँड वास्तव में ही नदारद है। हथिनी की विशाल देह के नीचे अंधेरे में बच्चे के सिर का ठीक-ठीक आकार नहीं दिखायी दिया। सभी लोग बेहद उत्सुक हो गये थे। दूरबीन से लगातार उसे देखा जाने लगा। एक बार जब वह प्रकाश में आया तो पता चला कि यह छोटा प्राणी हाथी तो किसी सूरत में नहीं। वह गेण्डे का बच्चा निकला।

हथिनी माँ की तरह उसे दूध पिलाती थी, उसकी रक्षा करती थी, सूँड से धकेलकर उसे हांक ले जाती थी और उसे अपनी आँखों से ओझल नहीं होने देती थी।

यह कहना कठिन है कि यह अद्‌भुत मेल कैसे हुआ! यह प्रकृति की सबसे विचित्र पहेलियों में से एक है। हो सकता है कि अपनी माँ से गेण्डे का बच्चा जब अलग हुआ, उन्हीं दिनों हथिनी का बच्चा भी मर गया होगा। माँ की तलाश करता हुआ छोटा गेण्डा तब हाथियों के झुण्ड में मिल गया होगा।

निद्रा

दिन में गरमी के समय या मध्य रात्रि में थोड़ी देर के लिए हाथी खड़े-खड़े अथवा लेट कर, सो लेते हैं। पहले ज़माने में लोगों का विश्वास था कि हाथी की टाँग में जोड़ नहीं होता, इसलिए वह लेट ही नहीं सकता। इस विश्वास का कारण यह था कि यह प्राणी सोते समय भी कम ही लेटता है। फ्रांस के राजा चौदहवें

लुई के पास एक हाथी था जो पाँच बरस तक कभी नहीं लेटा। उसे जब सोना होता था तो वह अपने उद्दन्तों के सिरों को दीवार में बनाये दो छिद्रों के अन्दर टिका कर, सिर के बोझ से निश्चिन्त होकर, सो जाता था। पत्थर की दीवार में ये छिद्र उसने स्वयं इस निमित्त बना लिये थे।

१९६७ के मई महीने में मैंने जंगली हाथियों की नींद संबंधी आदतों का अध्ययन किया था। उत्तर प्रदेश के तराई जंगलों में उन दिनों गरमी काफ़ी तेज़ थी, प्रायः लू भी चलती थी, पानी के अधिकांश स्रोत सूख चुके थे। मैंने देखा कि हाथियों का झुण्ड घास चरना छोड़कर दस बजे ही छायादार वृक्षों और निकुंजों की ओर रुख करने लगता है। सबसे पहले घुई और उनके बच्चे छाया में पहुँचते हैं। तेईस मई, १९६७ को सुबह दस बजे मैंने इनका आँखों देखा वृत्तान्त अपनी जंगल की नोटबुक में इस प्रकार लिखा था :

"सबसे छोटे दुधमुंहे बच्चे सबसे पहले ज़मीन पर बैठे और अपनी माताओं की टाँगों के साथ ही लेट गये। उसके बाद बड़े बच्चे लेटे। कोई-कोई बड़ा हाथी या हथिनी भी सोने के लिए धराशायी हो गये। प्रायः सभी बड़े हाथी खड़े-खड़े ही आँख मूंद कर सो रहे थे। बीच-बीच में ये मुंह खोल कर जम्हाई भी लेते थे। दन्तुर हाथी भी एक किनारे धरती पर एक बड़ी चट्टान की तरह लोट गया। एक शरारती बच्चा इधर-उधर घूमता रहा।

सोते वक्त प्रायः सभी हाथियों के सिर बाहर की ओर तथा उनके पिछवाड़े पेड़ के तने की तरफ रहते हैं। दुश्मन से सावधान रहने का यह तरीका है। अगले पैर की ठोकर से मिट्टी को सूँड में भर कर वे बार-बार अपने तन पर फेंक रहे थे जिससे मक्खी व मच्छर उनकी नींद में खलल न डालें। कुछ हाथियों ने सूँड में गन्धेले की शाखाएं पकड़ रखी थीं, जिन्हें वे अपनी ग्रीवाओं पर मुरछल की तरह मारकर मक्खियाँ उड़ाते थे। कानों को वे लगातार फटफटाते रहते थे। बड़े दन्तुर अपनी सूँड को मस्ती में दूसरे हाथियों, हथिनियों और बच्चों की पीठ पर टेक कर सो रहे थे।

मई के सूर्य की किरणें और तेज हो गयीं। सारी घाटी शान्त थी। पत्ते भी हिलने बन्द हो गये थे। किसी पुराने देवालय के खम्भों की भांति हाथियों की सूँडें अपने सिरों को धरती पर टेक कर अचल खड़ी थीं। सभी हाथी गाढ़ी नींद में थे। फड़फड़ाते हुए कान भी स्थिर हो गये थे। कोई-कोई हाथी तो नींद में

एकदम बेसुध हो गया था और लम्बे खुर्राटे भर रहा था।

ऊँची टेकरी पर शाल वृक्ष की छाया में बैठे हम लोग यह सब देख रहे थे। सोते हुए हाथियों के फोटो लेने के लिए हम नीचे उतर आये, और दबे पाँव लेटे हुए बच्चों के पास तक पहुँच गये। रखवाली के लिए साथ खड़ी हुई उनकी माताएं भी इस समय बेखबर थीं। परिस्थितियाँ हमारे अनुकूल थीं, सचमुच हमें उनके बढ़िया फोटो लेने में सफलता मिल गयी।

सूरज और ऊपर चढ़ गया था। कुछ हाथियों पर सीधी धूप पड़ने लगी। छाया की तलाश में वे दूसरे पेड़ के नीचे जाने लगे। हमारी कलाई की घड़ियों में ग्यारह बज रहे थे। एक घंटे के आराम और नींद से हाथी ताजा हो गये थे। एक-एक करके सभी ने झुरमुट की छाया छोड़ दी और घास चरने में जुट गये। कुछ हाथी शीशम की छाल की लम्बी परतें उतारकर उन्हें खा रहे थे।

दुधमुँहें बच्चों की देह पर अब भी नींद पूरा अधिकार जमाये हुए थी। उनकी माताएं प्यार से उन्हें उठा रही थीं। लाड़ से वे अपनी सूँडों के सिरों से उनकी देह को सहलाती थीं। वे भी उठ खड़े हुए और माताओं के संरक्षण में चल दिये।

प्राकृतिक वास

भारत में हाथी हिमालय की तराई के घने जंगलों में देहरादून से आसाम तक, बिहार और बंगाल में; उड़ीसा, आंध्र, तमिलनाडु के नीलगिरी पर्वत, केरल के पश्चिमी घाट और मैसूर, बर्मा, स्याम, थाइलैण्ड, मलय, बेर्नियो और सुमात्रा में भी पाये जाते हैं।

सामान्यतया हाथी पाँच हज़ार फुट से ऊपर नहीं पाये जाते। परन्तु बर्मा में देखा गया है कि वे बांस के जंगलों में दस हज़ार फुट या इससे ऊपर भी चले जाते हैं। सिक्किम में हाथियों की पद-पंक्तियाँ बर्फ़ में समुद्रतल से बारह हज़ार फुट की ऊँचाई तक देखी गयी हैं। नेफा के सुबान्सरी और केमिंग ज़िलों में सात हज़ार फुट तक हाथी मिल जाता है।

पहले ज़माने में हाथी की सवारी करना बड़े सम्मान की बात होती थी। हर कोई हाथी पर सवार नहीं हो सकता था। राजा के अलावा महाजन को और विवाह के अवसर पर दूल्हे को हाथी की सवारी करने का अधिकार था। जब कोई विशिष्ट कार्य करता था तो हाथी की सवारी बख्शी जाती थी। पतंजलि के

अनुसार, व्याकरण शास्त्र में पूर्णतया पारंगत होनेवाले विद्वानों को हाथी भेंट किया जाता था।[1] मगध के राजा ने पाणिनी को हाथी भेंट करके उसका सम्मान किया था।

इधर, गाँवों में हम देखते हैं कि सवर्ण लोग नीची जाति वालों के हाथी की सवारी करने पर एतराज़ करते हैं। बुलन्दशहर के नगला गाँव में जाटवों के दूल्हे को हाथी पर चढ़कर बरात में जाने की बात वहाँ के राजपूतों को बर्दाश्त नहीं हुई। झगड़ा यहाँ तक बढ़ गया कि कई लोग घायल हो गये और दूल्हे का भाई मारा गया। अप्रैल १९६६ में जब इस मुकदमे का फैसला सुनाया गया तो दो को आजीवन कैद और एक को फांसी की सजा दी गयी थी।

हाथी के ऊपर चढ़ना भी एक कला है। स्त्रियाँ, बूढ़े और नाज़ुक लोग तो सीढ़ी की सहायता से हौदे तक पहुँते हैं, परन्तु चुस्त व्यक्ति बैठे हुए हाथी की पूँछ को पकड़ कर ही चढ़ जाते हैं। महावत के इशारे से खड़ा हुआ हाथी अपनी एक अगली टाँग को झुका लेता है। उस पर पैर रख कर और हाथी के कान को पकड़कर भी आदमी ऊपर पहुँच जाता है। सूँड के जरिये हाथी पर चढ़ना भी एक कला है। सूँड के अगले सिरे पर खड़ा होकर व्यक्ति सूँड को ऊपर से पकड़ लेता है। हाथी सूँड को धीरे-धीरे ऊपर उठाता जाता है और सवार को हौदे तक पहुँचा देता है। इसी प्रकार उतरने के लिए भी इन सब अंगों का उपयोग किया जाता है। कान या पूँछ को पकड़कर सवार खड़े हुए हाथी के ऊपर से नीचे खिसक जाता है। हाथी के उद्दन्तों पर सवार होने में मुझे विशेष आनन्द आता था। असील हाथी जरा से इशारे पर उद्दन्तों को नीचे झुका लेता था और मैं उछलकर उन पर सवार हो जाता था। बोझ पड़ते ही हाथी अपने उद्दन्तों को ऊपर उठा लेता है।

विशेष समारोहों पर हाथियों को खूब सजाया जाता है। रामायण में उल्लेख है कि ऐसे सजे-सजाए हाथी राजमार्गों पर चलते थे जिनके दाँत सोने से मढ़े रहते थे, जिनके गले में हार होते थे, जिनके मस्तक पर तरह-तरह की चित्रकारी होती थी, जिनके तन पर सुनहरी झूलें लटक रही होती थीं, कमर में बंधी सोने की जंज़ीरों से घंटियाँ झूल रही होती थीं, बैठने के लिए उनकी पीठ पर सोने के हौदे कसे होते थे जिनके साथ पताकाएं फहराया करती थीं।

१. पाणिनीकालीन भारतवर्ष, वासुदेव शरण अग्रवाल, पृष्ठ २५।

रामायण में वर्णन है कि राम के दर्शन करने जाते समय भरत के सैनिकों ने जिन हाथियों पर आरूढ़ होकर गंगा पार की थी, पताकाओं से सुशोभित वे हाथी तैरते समय पंख वाले पहाड़ों के समान जान पड़ते थे। विश्वमित्र ने वशिष्ठ की कामधेनु गौ के बदले सोने की जंज़ीरों, हारों, अंकुशों आदि से विभूषित चौदह हज़ार हाथी देने का प्रलोभन दिया था।

राजकीय वैभव और समृद्धि के प्रदर्शन में हाथी का प्रमुख स्थान रहा है। हमारे राजाओं, रजवाड़ों और ज़मींदारों के पास सैकड़ों हाथी रहा करते थे। कोई सौ साल पहले, वर्तमान नेपाल के निर्माता, राणा शासक के संस्थापक महाराजा जंग बहादुर की गजशाला में एक हज़ार हाथी थे। नेपाल के राजकुमारों के पास भी उनके दर्जे के हिसाब से निश्चित संख्या में हाथी रहते थे।

आज भी हमारे गणतन्त्र दिवस पर निकलने वाली सांस्कृतिक झांकियों का नेतृत्व सजे-सजाए हाथी करते हैं। सबसे अगला हाथी जब सलामी मंच के सामने राष्ट्रपति के आगे से गुज़रता है तो सूँड उठाकर उनका अभिनन्दन करता है और चिंघाड़ कर हर्षध्वनि करता है। १९६२ की छब्बीस जनवरी को गणतन्त्र दिवस की सांस्कृतिक झाँकियों का अगुवा हाथी का एक नन्हा-सा मादा बच्चा था जिस का नाम उर्वशी था। वह इतनी प्यारी थी कि अखबार वालों की चर्चा का विषय बन गयी। दिल्ली चिड़ियाघर की यह उर्वशी खड़ी होने के साथ-साथ कई किस्म के करतब सीख गयी थी। बड़े मज़े से वह मुँह से बाजा बजा लेती थी तथा अपने पैरों में बंधी घण्टियों की ताल पर नाच लेती थी। उर्वशी के अलावा गोपाल व राजलक्ष्मी नामक हाथियों के खेल भी दर्शकों के लिए आकर्षक थे। वे फ़ुटबॉल खेलते थे, पैर से चोट मार कर गेंद को सीधे गोल में फेंकने में राजलक्ष्मी कमाल कर देती थी।

अतिथियों के गले में माला पहनाना, महावत को छोटे-छोटे सिक्के पकड़ा देना, छोटे से प्लेटफार्म पर चारों पैरों को जोड़कर खड़े हो जाना, रोलर पर अपने भारी शरीर को सन्तुलित करना तथा इसी तरह के अनेक करतब करते हुए पाठकों ने हाथियों को देखा होगा। दिल्ली चिड़ियाघर का एक हाथी कुएं में से पानी मज़े में खींच लेता था। सूँड से वह पहले रस्सी को खींचता था। पैर तक पहुँचने पर वह उसे पैर से दबा लेता था। जब तक डोल नहीं आता था वह इस क्रम को जारी रखता था। डोल आने पर सूँड से पकड़कर एक तरफ रख देता था।

किसी-किसी सरकस कम्पनी में हाथी को इस तरह सधाया जाता है कि वह सूंड और अगली दोनों टाँगों के ऊपर शरीर के पिछले भाग को उठा लेता है। शीर्षासन की सी इस मुद्रा में यह बड़ा अजीब लगता है।

यह अनुभव किया गया है कि पालतू हथिनियों के बच्चे ऐसे करतब उन बच्चों की अपेक्षा जल्दी सीख जाते हैं जो जंगल से पकड़े गये हैं।

त्रिवेन्द्रम में दो साल के दो बच्चे अतिथियों के गले में माला डालना और झण्डा फहराना तो सीख ही गये थे, गणपति-पूजा का अभिनय भी वे बहुत अच्छे ढँग से कर लेते थे। इनमें से एक गणेश बनकर बैठ जाता, दूसरा उसके आगे एक सच्चे भक्त के समान फूल और नारियल चढ़ाता तथा घण्टी बजाता और घुटने के बल झुक कर नतमस्तक हो आशीर्वाद मांगता। दूसरा बच्चा अपनी सूंड फैलाकर उसे आशीर्वाद देता। पीलवान ने इन हस्तिशावकों का नाम भास्करन् और रामवर्धन् रखा था। सूंड में खड़िया पकड़कर वे काले तख्ते पर स्वागत और धन्यवाद जैसे शब्द लिखना सीख गये थे। कहते हैं कि वे सरल गणित के प्रश्न भी हल कर लेते थे। मुँह से बजाने वाले एक बड़े बाजे पर भारत के राष्ट्रीय गीत की धुन बजाना उन्हें सिखाया जा रहा था। शिक्षक का विश्वास था कि वे शीघ्र ही इसमें दक्ष हो जायेंगे। सरकस के एक बैण्ड मास्टर के विचार में हाथी संगीत को पसन्द करने वाला प्राणी है।

३. इतिहास और कथा-कहानियों में हाथी

हाथी भारतीय कला और साहित्य का प्रिय विषय रहा है। जातक कथाओं में, पंचतन्त्र आदि बालकथाओं में और लोक-साहित्य में, हाथी ने शानदार भूमिका अदा की है। गजजातक के अनुसार भगवान् बुद्ध एक जन्म में हाथी थे। वे आठ हज़ार हाथियों के सरदार थे। उनकी दो रानियाँ थीं। एक रानी रुठ गयी। फिर क्या था! प्रतिशोध की भावना लिए काशी की रानी बनने के उद्देश्य से वह घोर तपस्या में लग गयी। तप फलीभूत हुआ और वह काशी की रानी बन गयी। अब वह बदला ले सकती थी। उसने एक शिकारी को बोधिसत्व गजराज के दांत तोड़ कर लाने का आदेश दिया। शिकारी किसी भी तरह दाँत निकालने में कामयाब न हो सका। क्रोध के बजाय गजराज को शिकारी पर दया आयी। उन्होंने स्वयं अपने दाँत तोड़कर शिकारी के हाथ रानी के पास भिजवा दिये। उन दाँतों को देखकर रानी का हृदय क्लेश और पश्चाताप ने भर गया। फिर रानी को बोधि-सत्व ने सांत्वना दी। अजन्ता के भित्तिचित्रों में यह जातक कथा अनुपम ढंग से चित्रित की गयी है। अजन्ता की गुफाओं में अंकित किये जानवरों में शायद सबसे अधिक हाथी हैं।

कुमारगुप्त की एक उपलब्ध मुद्रा पर राजा हाथी के ऊपर सवार हैं और उनके ऊपर राज-छत्र है। तेज़ी से चलाने के लिए राजा उसके मस्तक पर अंकुश का प्रहार कर रहे हैं। सूँड, टाँगों, पूँछ और शरीर के तनाव से स्पष्ट दीखता है कि वह भी पूरी ताकत से दौड़ रहा है।

हैदरअली के ताम्बे के सिक्कों पर हाथी का चित्र बना हुआ है जिसकी सूँड उठी हुई है। अबुल फज़ल के अनुसार प्राचीन भारत में ताश के बारह रंगों में एक गजपति होता था। गजपति के पत्ते पर उड़ीसा के राजा को हाथी पर सवार दिखाया जाता था। अकबर के बनवाये 'पादशाह गुलामान' के एक पत्ते पर हाथी के ऊपर सवार बादशाह का चित्र हुआ करता था।

इस शताब्दी के कलाकारों को भी हाथी से प्रेरणा मिलती रही है। भारत, तथा अन्य देशों के डाक-टिकटों पर हाथी अनेक रूपों में चित्रित किया गया है।

पुराने ज़माने में सेना के चार अंगों में एक अंग हाथी सेना का हुआ करता था। भारत की चतुरंगिणी सेना के हाथियों की शान देखते ही बनती थी जिनके ऊपर सोने की जंजीरें पड़ी हुई थीं और पताकाएं लहराती थीं। घनघटा के समान यह गजघटा चलती थी। युद्ध-गजों को वाकायदा प्रशिक्षण दिया जाता था। अपने मस्तक की टक्कर से वे किलों के दरवाज़ों को तोड़ डालते थे। युद्ध में हाथियों की रक्षा के लिए चमड़े की ढालें रखी जाती थीं। तुर्की सुलतानों के म्यूज़ियम में हाथियों के वे जिरह-वख्तर रखे हैं जो युद्ध में रक्षा के लिए उन्हें पहिनाये जाते थे।

आजकल जैसे टैंकों की शक्ति का महत्व है, उन दिनों हाथियों की शक्ति का होता था। वाल्मीकी के वर्णन के अनुसार राम और रावण के युद्ध में राक्षसी सेना के साथ हज़ारों युद्ध-गज थे। महाभारत के युद्ध में, एक विवरण के अनुसार, दो लाख सत्तर हज़ार हाथी आपस में भिड़ रहे थे :

नवनागसहस्राणि नागे नागे शतं रथाः।
रथे रथे शतं चाश्वम् अश्वे अश्वे शतं नराः।

कुछ विद्वानों ने इस अवसर पर इकट्ठा हुए हाथियों की संख्या तीन लाख वतायी है :

अयुतं ज नागास्त्रिगुणी रथानां पदाति संख्या षट्त्रिंशकोटयः।
लक्षैकयोद्धाः दशलक्षवाजी अक्षौहिणी तां मुनयो वदन्ति।।

इन मतों के अनुसार पाण्डवों की वारह अक्षौहिणी और कौरवों की अठारह अक्षौहिणी सेना में क्रमशः एक लाख आठ हज़ार (या एक लाख वीस हज़ार) और एक लाख वासठ हज़ार (या एक लाख अस्सी हज़ार) युद्ध-गज मैदाने जंग में जमा थे।

यूनान के विजेता सिकन्दर ने जव भारत पर हमला किया तो उसके सैनिक भारतीय सेना के विशालकाय हाथियों को देखकर पहले वहुत डरे।

पंजाव के शासक पुरु और सिकन्दर में घमासान युद्ध हुआ। पुरु एक सधे हुए युद्ध-गज पर सवार था। उसके शरीर पर इतने घाव हो गये कि वह हाथी की पीठ पर से नीचे आ गिरा। सिकन्दर के सैनिक उसके वहुमूल्य वस्त्रों और गहनों के लालच में उसे उठाने क लिए आगे बढ़े।

उन्हें देख हाथी ने अपने स्वामी को अपने चारों पैरों के बीच में कर लिया,

ठीक उसी तरह जैसे हथिनी अपने नवजात शिशु की रक्षा करती है। कोई सैनिक उसके पास आता तो वह स्वामिभक्त हाथी उसे बुरी तरह घायल कर देता। इस तरह उसने कई सैनिकों को मार डाला। तब अन्य सिपाहियों को आगे बढ़ने की हिम्मत न हुई। उन्होंने दूर से हाथी पर वार करने शुरू कर दिये। बहुत घायल हो जाने पर भी वह अपने स्थान से न हटा।

हाथी बहुत तंग आ गया तो उसने पुरु को सूँड से उठाकर अपनी पीठ पर रख लिया और उसे एक सुरक्षित स्थान पर पहुँचा दिया। ज़रा देर बाद ही घावों की वेदना असह्य होने के कारण वह स्वर्ग सिधार गया। इस प्रकार हाथी ने रणक्षेत्र में आखिरी सांस तक अपने स्वामी की रक्षा की।

जब अफ्रीका के प्रसिद्ध वीर हन्नीबाल ने रोम पर हमला करने के लिए स्पेन से कूच किया तो उसकी सेना के साथ अफ्रीकी जाति के हाथियों ने सेण्ट गोटार्ड दर्रे से होकर आल्प्स पर्वत को पार किया था।

हाथी पर सवार योद्धा तीर-कमान, लम्बे भालों और ढालों से लैस रहते थे। दुश्मन के शस्त्रों की चोट से बचाने के लिए हाथियों के ऊपर ढालें बांधी जाती थीं। इसके अलावा युद्ध-सामग्री को ढोने में भी हाथी काम आते थे। कोणार्क के मन्दिर (१२३८-१२६० ईस्वी पश्चात्) की मूर्तियों में ऐसे दृश्यों की भरमार है।

तोपों को घसीटने का काम हाथियों से लिया जाता था। अंग्रेज़ों के शासन में भी तोपखाने में हाथियों की भरती की जाती थी। सन् १९०० तक ढाका में ब्रिटिश सेना का हाथियों को पकड़ने का नियमित संस्थान था, जो बाद में बर्मा ले जाया गया था, क्योंकि अधिक संख्या में पकड़े जाने के कारण गारो पहाड़ियों में हाथियों की कमी हो गयी थी।

इतिहासकार हमें यह भी बताते हैं कि युद्ध में पुरु की सिकन्दर से हार रण-क्षेत्र में हाथियों के बिदकने के कारण ही हुई थी। उस ज़माने के युद्ध में शोर-गुल द्वारा भी शत्रु के दिल को दहलाने के सभी प्रयत्न किये जाते थे। गगनभेदी जयकारों और नगाड़ों के गम्भीर घोषों से आकाश भी जैसे फटने को होता था। इस से मोर्चे पर तैनात हाथी भड़क उठते थे। पानीपत के युद्ध (१५२६) में इब्राहीम लोदी की हार का कारण भी हाथी बने थे। बाबर की तोपों की गोलाबारी से हाथियों में भगदड़ मच गयी, परिणामतः इब्राहीम के कितने ही सैनिक कुचल

कर मारे गये। वह स्वयं हाथी की पीठ पर से गिर पड़ा और अपने ही हाथियों द्वारा कुचला गया। ऐसी घटनाओं को देखते हुए मोर्चे के लिए हाथियों का मूल्य कम होता गया। फिर भी बाद में मुगलों ने भी अपने युद्धों में हाथियों का प्रयोग किया।

काव्य में

ग्रीष्म ऋतु में हाथियों की दशा का वर्णन कालिदास ने इन शब्दों में किया है—"आग से घबराए हुए और झुलसे हुए हाथी, नीलगाएं और सिंह आज मित्र बनकर साथ-साथ इकट्ठे होकर घास के जंगल से झटपट निकल आये हैं और नदी के चौड़े तथा रेतीले किनारे पर आकर विश्राम कर रहे हैं।'[१] "जो दन्तुर हाथी धूप और प्यास से बेचैन होकर अपने सूखे मुँह से आग फेंकते हुए पानी की खोज में इधर-उधर घूम रहे हैं वे इस समय बबरशेर से भी नहीं डर रहे हैं।"[२] "देखो, हाथियों के पास होने पर भी यह बबर शेर उन्हें मार नहीं रहा क्योंकि गरमी इतनी अधिक पड़ रही है कि बहुत प्यास के मारे इसका सब साहस ठण्डा पड़ गया है। अपना पूरा मुँह खोलकर यह बार-बार हांफ रहा है। अपनी जीभ से अपने होंठ चाटता जा रहा है। हांफने से उसके कन्धों के बाल हिलते जा रहे हैं।"[३]

बरसात आने पर हाथियों का मन मस्त और तन स्वस्थ हो जाता है। ऋतु-संहार में वर्षा ऋतु के वर्णन में कालिदास लिखते हैं—'देखो प्यारी ! जल की फुहारों से भरे हुए बादलों के मतवाले हाथी पर चढ़ा हुआ, चमकती हुई बिजलियों की झण्डियों को फहराता हुआ और बादलों की गरज के नगाड़े बजाता हुआ,

---

१. गजगवयमृगेन्द्रा वह्निसंतप्तदेहा सुहृद इव समेता द्वन्द्वभावं विहाय।
हुतवहपरिखेदादाशु निर्गत्य कक्षाद् विपुलपुलिनदेशां निम्नगां संविशन्ति ॥
ऋतुसंहार, सर्ग १; २६।

२. विशुष्ककण्ठोद्गतसीकराम्भसो गभस्तिभिर्भानुमतोऽनुतापिता :।
प्रवृद्धतृष्णोपहता जलार्थिनो न दन्तिनः केसरिणोऽपि बिभ्यति ॥
ऋतुसंहार, सर्ग १; १५।

३. तृषा महत्या हतविक्रमोद्यमः श्वसन्मुहुर्दूरविदारिताननः।
न हन्त्यदूरेऽपि गजान् मृगेश्वरो विलोलजिह्वश्चलिताग्रकेसरः ॥
ऋतुसंहार, सर्ग १; १४।

कामियों का प्यारा यह पावस राजाओं का-सा ठाठ-बाट लेकर आ पहुँचा है।"[१] "बरसात में नदियाँ बहती हैं, बादल बरसते हैं, मस्त हाथी चिंघाड़ते हैं, जंगल हरे-भरे हो जाते हैं, अपने प्रिय से बिछुड़ी हुई स्त्रियाँ रोती-कलपती हैं, मोर नाचते हैं और बन्दर चुप मार कर छिप जाते हैं।"[२] 'नये-नये बादलों के बार-बार गरजने से जब बनैले हाथी मस्त हो जाते हैं और उनके माथे से बहते हुए मद पर भौंरे आकर लिपट जाते हैं, उस समय उन हाथियों के माथे स्वच्छ कमल जैसे दिखायी देने लगते हैं।"[३] "यह देखो, यहाँ पर हाथियों ने इकट्ठे होकर आपस में लड़-भिड़ कर इस ताल के सब कमल उखाड़ डाले, मछलियों को रौंद डाला और सब सारसों को डरा कर भगा दिया।"[४] "मद में भरे हुए राजा उदयन के नलगिरि नामक हाथी ने अपना खूंटा उखाड़ दिया और वह पागल होकर विशाला में इधर-उधर घूमने-फिरने लगा।"[५]

श्रीकृष्ण की सेना के हाथियों का रोचक वर्णन माघ ने इस प्रकार किया है :

सेना के एक विशाल गजराज ने सरोवर की विशाल तरंगों में अपनी हिलती हुई परछाईं को देखकर समझा कि कोई दूसरा हाथी उससे लड़ने आ रहा है।

---

१. ससीकराम्भोधरमत्तकुंजरस्तडित्पताकोऽशनिशब्दमर्दलः।
समागतो राजवदुद्वतद्युतिर्घनागमः कामिजनप्रियः प्रिये॥
ऋतुसंहार, सर्ग २; १।

२. वहन्ति वर्षन्ति नदन्ति भान्ति व्यायन्ति नृत्यन्ति समाश्रयन्ति।
नद्यो घना मत्तगजा वनान्ताः प्रियाविहीनाः शिखिनः प्लवंगाः॥
ऋतुसंहार, सर्ग २; १९।

३. वनद्विपानां पववारिदस्वनैर्मदान्वितानां ध्वनतां मुहुर्मुहुः।
कपोलदेशा विमलोत्पलप्रभाः सभृङ्गयूथैर्मदवारिभिश्चिताः॥
ऋतुसंहार, सर्ग २; १५।

४. समुद्धृताशेषमृणालजालकं विपन्नमीनं द्रुतभीतसारसम्।
परस्परोत्पीडनसंहतैर्गजैः कृतं सरः सान्द्रविमर्दकर्दमम्॥
ऋतुसंहार, सर्ग १; १९

५. अत्रोद्भ्रान्तः किल नलगिरिः स्तम्भमुत्पाट्य दर्पात्
इत्यागन्तुन् रमयति जनो यत्र बन्धुनभिज्ञः॥
मेघदूत, पूर्वमेघ; ३५।

गुस्से में भरा हुआ वह झट खड़ा हो गया।[१] धारा में लोट लगाने वाले एक हाथी का मद-जल नदी के पानी में घुल गया था। उस कड़वे पानी को दूसरा हाथी पीना नहीं चाह रहा था और गुस्से में भर गया था। पीलवान के अंकुश की परवाह न करने वाले एक क्रुद्ध हाथी ने लेट कर धारा के वेग को ही रोक दिया था। घाट पर पानी न पहुँचने से बहुत से लोग खाली बरतनों को हाथ में लेकर देर तक खड़े रह गये थे।[२]

प्रचण्ड मद की गरमी से उत्पन्न कष्ट को शान्त करने के लिए हाथी अपनी सूँडों में पानी भर कर गण्डस्थलों और कान के समीप फेंक रहे थे। खिले हुए कांस के फूल के समान सफेद जल की फुहारें ऐसी लग रहीं थीं मानो सफ़ेद चंवर को डुलाकर मद के लोभी भंवरों को उड़ाने के लिए ही यह सब किया जा रहा है।[३]

दूसरे हाथी के मद की गन्ध पाकर ही एक हाथी को इतना गुस्सा आ गया कि उसने झट अपने मुख के पानी को तो फेंक दिया और अपने मूसल जैसे दाँतों से चोट करने लपका। लेकिन, वहाँ तो सामना करने के लिए कोई हाथी था ही नहीं। उसने चोट इतनी ज़ोर से की थी कि वह खुद ही गिर पड़ा।[४]

कड़ाहे के समान खुले कान से बहते हुए मद के वेग के आगे भंवरों के झुण्ड टिक नहीं सके और ऊपर मंडराने लगे।[५]

---

१. आत्मानमेव जलधेः प्रतिविम्बितांगमूर्मौ महत्यभिमुखापतितं निरीक्ष्य।
क्रोधादधावदपभीरभिहन्तुमन्यनागाभियुक्त इव युक्तमहो महेभः॥
शिशुपालवध, सर्ग ५; ३२।

२. नादातुमन्यकरिमुक्तमदाम्बुतिक्तं धूतांकशेन न विहातुमपीच्छताम्भः।
रुद्धे गजेन सरितः सरुपावतारे रिक्तोदपात्रकरभास्त चिरं जनौघः॥
शिशुपालवध, सर्ग ५; ३३।

३. कीर्णं शनैरनुकपोलमनेकपानां हस्तैर्विगाढमदतापरुजः शमाय।
आकर्णरुल्लसितमम्बु विकासिकाशनीकाशमाप समतां सितचामरस्य॥
शिशुपालवध, सर्ग ५; ३५।

४. गण्डूषमुज्झितवता पयसा सरोषं नागेन लब्धपरवारणमारुतेन।
अम्भोधिरोधसि पृथुप्रतिमानभागरुद्धोरुदन्तमुसलप्रसरं निपेते॥
शिशुपालवध, सर्ग ५; ३६।

५. दानं ददत्यपि जलैः सहसाधिरुढे को विद्यमानगतिरासितुमुत्सहेत।
यद् दन्तिनः कटकटाहतटान्निमंक्षोर्मंड्क्षूदपाति पारितः पटलैरलीनाम्॥
शिशुपालवध सर्ग, ५; ३७।

पानी के भीतर डूबे हुए हाथी के कपोलों को छोड़कर ऊपर आकाश में पंखों को फैलाए हुए भंवरों की पंक्तियाँ ऐसी दिखायी पड़ रही थीं मानो हाथी का काला रंग आसमान में चक्कर लगा रहा हो।[१]

हाथी के मस्तक पर पुता हुआ सिन्दूरी रंग नदी के पानी में घुल गया था और नदी में खिले हुए कमल-पुष्पों का लाल पराग हाथी के बदन पर लिपट गया था। ऐसा लगता था कि क्रीड़ा में हाथी और नदी दोनों ही अपने तन-मन की सुध विसरा गये हैं और हबड़ा-दवड़ी में उन्होंने एक-दूसरे के कपड़े पहन लिये हैं।[२]

जल में तेल की बूंद के समान हाथी का मद चारों ओर चन्द्राकार मण्डलों में फैलता जा रहा था। ऐसा लगता था मानो ये नदी की बड़ी-बड़ी आँखें बन गयी हैं। हाथी जब स्नान करके पानी से बाहर निकलते तो उनके अंगों पर ताज़े खिले हुए नीलोफर की पंखुड़ियाँ चिपकी रहतीं जो आँखों के समान शोभायमान होतीं।[३]

एक हाथी अपने प्रतिस्पर्द्धी हाथी से भिड़ने के लिए बेताव हो रहा था। महावत ने उसके कान के पास इतने ज़ोर से अंकुश भोक दिया कि खून वहने लगा! फिर भी वह उस बलशाली को काबू नहीं कर सका।[४]

मिन्नत-खुशामद करके महावत ने किसी तरह उसे बाँधने के लिए राज़ी कर लिया। जिस पेड़ से वह उसे बांधने जा रहा था उसके तने पर किसी दूसरे जंगली

---

१. अन्तर्जलौघमवगाढवतः कपोलौ हित्वा क्षणं विततपक्षतिरन्तरिक्षे।
द्रव्याश्रयेष्वपि गुणेषु रराज नीलो वर्णः पृथग्गत इवालिगणो गजस्य॥
शिशुपालवध, सर्ग ५; ३८।

२. ससर्पिभिः पयसि गैरिकरेणरागैरम्भोजगर्भरजसांगनिपङ्क्तिणा च।
क्रीडोपभोगमनुभूय सरिन्हेभावन्योन्यवस्त्रपरिवर्तमिव व्यधन्ताम्॥
शिशुपालवध, सर्ग ५; ३९।

३. यां चन्द्रकैर्मदजलस्य महानदीनां नेत्रश्रियं विकसतो विदधुर्गजेन्द्राः।
तां प्रत्यवापुरविलम्बितमुत्तरन्तो धौतांगलग्ननवनीलपयोजपत्रैः॥
शिशुपालवध, सर्ग ५; ४०।

४. प्रत्यन्यदन्ति निशितांकशदूरभिन्न निर्याणनिर्यदसृजं चलितं निषादी।
रोद्धुं महेभमपरिव्रढिमानमागादाक्रान्तितो न वशमेति महान् परस्य॥
शिशुपालवध सर्ग, ५; ४१।

हाथी का मद लगा था। उसकी गन्ध से वह फिर विदक खड़ा हुआ और उसने पेड़ को ही तोड़ डाला।[1]

रैवतक पर्वत के कुंजों में विचरने वाले हाथियों के कपोलों की रगड़ से जिन वृक्षों पर मद का स्राव लग गया था उन्हें सेना के हाथियों ने झकझोर दिया था। उनके फूल कुम्हला गये थे। भौरों के झुंण्ड उनका रस पीने आते परन्तु निराश होकर उड़ जाते।[2]

कई हाथी इतने वड़े थे कि ऊँचे वृक्षों के नीचे भी नहीं आ सकते थे। महावतों ने उन वृक्षों को वलशाली हाथियों द्वारा तुड़वा दिया। उनकी मोटी-मोटी मूल-शाखाएं ही उन्हें वांधने के काम आ गयीं।[3]

गरमागरम मद की वूंदों को छोड़ने वाले, गरमी से भरे हुए, खिले हुए नीलोफर के भीतरी भाग की भांति कांति वाले विशाल हाथियों को महावतों ने हरिचन्दन के वृक्षों के साथ वांध दिया।[4]

हाथियों ने पहाड़ी वृक्षों के जिन तनों पर अपने गण्ड-स्थलों को रगड़कर खुजली मिटायी थी वहाँ उनके मद का सुगन्धित स्राव लग गया था। उसे पीने के लिए भौरों की पंक्तियाँ इस तरह वैठ गयी थीं मानों वह इन्द्रनील मणियों से वनायी हुई माला हो।[5]

---

१. सेव्योऽपि सानूनयमाकलनाय यन्त्रा नीतेन वन्यकरिदानकृताधिवासः।
नाभाजि केवलभभाजि गजेन शाखी नान्यस्य गन्धमपि मानभृतः सहन्ते ।।
शिशुपालवध, सर्ग ५; ४२।

२. अद्रीन्द्रकुंजचरकुंजरगण्डकापसंक्रान्तदानपयसो वनपादपस्य।
सेनागजेन मथितस्य निजप्रसूनैर्मम्ले पथागतगामि कुलैरलीनाम् ।।
शिशुपालवध, सर्ग ५; ४३।

३. नोच्चैर्यदा तरुतलेपु मुमुस्तदानीमाधोरणैरभिहिताः पृथुमूलशाखाः।
वन्धाय चिच्छिदुरिभास्तरसात्मनैव नैवात्मनीनमथवा क्रियते मदान्धैः ।।
शिशुपालवध, सर्ग ५; ४४।

४. उष्णोष्णशीकरसृजः प्रवलोष्मणोऽन्तरुत्फुल्लनीलनलिनोदरतुल्यभासः।
एकान् विशालशिरसो हरिचन्दनेपु नागान् ववन्धुरपरान्मनुजा निरासुः ।।
शिशुपालवध, सर्ग ५; ४५।

५. कण्डूयतः कटभुवं करिणो मदेन स्कन्धं सुगन्धिमनुलीनवता नगस्य।
स्थूलेन्द्रनीलशकलावलिकोमलेन कण्ठे गुणत्वमलिनां वलयेन भेजे ।।
शिशुपालवध, सर्ग ५; ४६।

चित्र ४—हाथी की आँखें छोटी होती हैं।

चित्र ६—हाथियों को नहाने का बड़ा शौक है।

चित्र ५—पालती दून (उत्तर प्रदेश) में चरता हुआ हाथियों का एक दल

चित्र ३—एकदन्ता, गणेश

इधर-उधर स्वच्छन्दता से विचरने वाले पाँच साल के एक शरारती गज-किशोर को एक महावत ने अपने गज-शास्त्र के ज्ञान के बूते झिड़कियों और प्यार-दुलार के द्वारा काबू में किया। पैरों की चोटों से तथा अंकुश के प्रयोग से भी वह वश में नहीं आ रहा था।[1]

एक हाथी ने ढेर सारे मद को गिराया, पिछले पैरों को बांधने वाली बेड़ियों को तोड़ डाला, जिस बड़े खम्भे से वह बंधा था उसे एकाएक उखाड़ फेंका और स्वच्छन्द हो गया।[2]

एक मन्दबुद्धि हाथी को महावत ने बड़ी निष्ठुरता से अंकुश चुभाये। इस पर भी वह चुपचाप आंख मूंदे खड़ा रहा; उसने अपना ग्रास तक ग्रहण नहीं किया।[3]

एक हाथी के आगे बार-बार ईख के टुकड़े डाले जाते लेकिन वह उन्हें उठाता ही नहीं था, अपने पास आयी हुई हथिनी की ओर भी वह नहीं ताकता था; दोनों आँखें मूंदे वह वन में स्वेच्छा से विहार करने के महान् आनन्द का ही स्मरण करता रहा।[4]

अत्यन्त उन्नत शरीर वाला एक हाथी इस बात में अपनी बेइज्जती मान रहा था कि उसे बांधा क्यों गया है? खाने के लिए वह अपनी सूंड नीचे झुकाता ही नहीं था। उसको दिये जाने वाले भोजन का गोला बनाकर पालक ने दोनों हाथों

---

१. निर्धूतत्रीतमपि बालकमुल्ललन्तं यन्ता क्रमेण परिसान्त्वनतर्जनाभिः।
शिक्षावशेन शनकैर्वशमानिनाय शास्त्रं हि निश्चितधियांक्व न सिद्धिमेति॥
शिशुपालवध, सर्ग ५; ४७।

२. स्तम्भं महान्तमुचितं सहसा मुमोच दानं ददावतितरां सरसाग्रहस्तः।
बद्धापराणि परितो निगडान्यलावी त्स्वातन्त्र्यमुज्ज्वलमवाप करेणुराजः॥
शिशुपालवध, सर्ग ५; ४८।

३. जज्ञे जनैर्मुकुलिताक्षमनाददाने संरब्धहस्तिपकनिष्ठुरचोदनाभिः।
गम्भीरखेदिनि पुरः कवलं करीन्द्रे मन्दोऽपि नाम न महानवगूहयं साध्यः॥
शिशुपालवध, सर्ग ५; ४९।

४. क्षिप्तं पुरो न जगृहे मुहुरिक्षुकाण्डं नापेक्षते स्म निकटोपगतां करेणुम्।
सस्मार वारणपतिः परिमीलिताक्षमिच्छाविहारवनवासमहोत्सवानाम्॥
शिशुपालवध, सर्ग ५; ५०।

में ऊपर उठा लिया। गोले में से चूती हुई चिकनाई से उसकी बांहें तर हो गयी थीं। पालक बड़ी मुश्किल से उसे खिलाने में सफल हुआ।[१]

रस्सियों से तने हुए सफ़ेद तम्बू ऐसे लग रहे थे मानो चन्द्रमा से चारों ओर किरणें बिखर रही हों। उनके बाहर घेरे में पास-पास बंधे हुए हाथी ऐसे दीखते थे मानों काले बादलों की घनघोर घटा हो।[२]

रैवतक पर्वत पर फैले हुए श्रीकृष्ण की सेना के हाथी खेल में वृक्षों को तोड़ रहे थे जिससे रह-रह कर ऊँचे शब्द उठते थे। ऐसा लगता था कि पहाड़ चिल्लाकर श्रीकृष्ण को उलाहना दे रहा है—'हे हरि! तुम तो सब जगह पहाड़ों के उद्धार करने वाले के रूप में प्रसिद्ध हो, फिर पहले से ही बोझिल मुझे आप इन हाथियों के भारी बोझ से रसातल को क्यों ले जा रहे हैं?'[३]

विरह-अग्नि में तपते यक्ष को आषाढ़ के प्रथम मेघ ने भी तो एक विशालकाय हाथी के रूप में दर्शन दिये थे। वह उसे लक्ष्य करते हुए कहता है—'जब तुम देव-गिरी पहाड़ की ओर आओगे तब वहाँ धीरे-धीरे बहता हुआ वह शीतल पवन तुम्हारी सेवा करेगा जिसमें तुम्हारे बरसाए हुए जल से आनन्द की सांस लेती हुई धरती का गन्ध भरा रहेगा और जिसे चिंघाड़ते हुए हाथी अपनी सूँडों से पी रहे होंगे।'[४] रेवा नदी से आगे बढ़ जाने पर मेघ से यक्ष कहता है कि जंगल की धरती

---

१. दुःखेन भोजयितुमाशयिता शशाक तुंगाग्रकायमनमन्तमनादरेण।
उक्षिप्तहस्ततलदत्तविधानपिण्डस्नेहस्नुतिस्नपितबाहुरिभाधिराजम्॥
शिशुपालवध, सर्ग ५; ५१।

२. शुक्लांशुकोपरचितानि निरन्तराभिर्वेश्मानि रश्मिवितानि नराधिपानाम्।
चन्द्राकृतीनि गजमण्डलिकाभिरुच्चैर्नीलाभ्रपंक्तिपरिवेषमिवाधिजमुः॥
शिशुपालवध, सर्ग ५; ५२।

३. धरस्योद्धर्ताऽसि त्वमिति ननु सर्वत्र जगति प्रतीतस्तत्किं मामतिभरमधः प्रापिपयिषुः।
उपालब्धेवोच्चैर्गिरिपतिरिति श्रीपतिमसौ बलाक्रान्तः क्रीडद्द्विरदमथितोर्वीरुहरवैः॥
शिशुपालवध, सर्ग ५; ६९।

४. त्वन्निष्यन्दोच्छ्वसितवसुधागन्धसम्पर्करम्यः
स्रोतोरन्ध्रध्वनितसुभगं दन्तिभिः पीयमानः।
मेघदूत, पूर्वमेघ; ४६।

से उठती हुई तेज़ सुगन्ध को सूंघते हुए हाथी तुम्हें आगे का मार्ग बताते चलेंगे।'[१]

अलकापुरी में अपने घर के आस-पास की चीज़ों की पहचान बताते हुए यक्ष मेघ से कहता है—'हे मेघ! तुम तो हो घुटे हुए चिकने अंजन के समान काले और कैलाश पर्वत है तुरन्त काटे हुए हाथी-दाँत के समान चिट्टा।'[२] 'तुम देखोगे कि पहाड़ जैसे ऊँचे डीलडौल वाले अलकापुरी के हाथी वैसे ही मद बरसाते हैं जैसे मेघ पानी बरसाता है।'[३] 'मन्दिर के उपवन के ऊँचे पेड़ों पर तुम्हें छाया हुआ देखकर शिवजी की हाथी का खाल ओढ़ने की इच्छा पूरी हो जायेगी। पार्वतीजी पहले तो यह सोचकर डर जायेंगी कि यह हाथी की खाल आ कहाँ से गयी।'[४] यक्ष उसे समझाता है कि 'हाथी के बच्चे जैसे छोटे बनकर तुम मेरे घर के बगीचे में घुस जाना।'[५]

शरद् ऋतु के आने पर उन गजेन्द्रों की गति मन्द पड़ गयी है जो हथिनियों से युक्त तालाबों को प्यार करते थे, वन में मस्त घूमते थे, फूलों को सूंघकर आनन्द

---

१. जग्ध्वारण्येष्वधिकसुरभिं गन्धमाघ्राय चोर्व्याः
सारंगास्ते जललवमुचः सूचयिष्यन्ति मार्गम्।
मेघदूत, पूर्वमेघ; २२।

२. उत्पश्याभि त्वयि तटगते स्निग्धभिन्ना नाभे सद्यः
कृत्तद्विरददशनच्छेदगौरस्य तस्य।
मेघदूत, पूर्वमेघ; ६३।

३. शैलोदग्रास्त्वमिव करिणो वृष्टिमन्तः प्रभेदात्।
मेघदूत, उत्तर मेघ; १३।

४. पश्चादुच्चैर्भुजतरुवनं मण्डलेनाभिलीनः
सान्ध्यं तेजः प्रतिनवजपापुष्परक्तं दधानः।
नृत्तारम्भे हर पशुपतेरार्द्रनागाजिनेच्छां
शान्तोद्वेगस्तिमितनयनं दृष्टभक्तिर्भवान्या।
मेघदूत, पूर्वमेघ; ४०।

५, गत्वा सद्यः कलभतनुतां शीघ्रसंपातहेतोः
क्रीडाशैले प्रथमकथिते रम्यसानौ निषण्णः।
मेघदूत, उत्तरमेघ; २१।

मनाते थे और जिनके कपोलों से मद टपका करता था।"[1] इन दिनों अति कामातुर हुई, अनुराग से अपने बच्चे को साथ लेकर मन्द चाल से चलती हुई हथिनियाँ वन में जाते हुए अपने मतवाले पतियों के पीछे-पीछे जाती हुई नज़र आती हैं।[2]

---

१. प्रियान्वितानां नलिनीप्रियाणां वनप्रियाणां कुसुमोद्गतानाम्।
मदोत्कटानां मदलालसानां गजोत्तमानां गतयोऽद्य मन्दाः॥
रामायण, किष्किन्धा काण्ड, सर्ग ३०; ३५।

२. समन्मथा तीव्रतरानुरागा कुलान्विता मन्दगतिः करेणूः।
मदान्वितं संपरिवार्य यान्तं वनेषु भर्तारमनुप्रयाति॥
रामायण, किष्किन्धा काण्ड, सर्ग ३०; ३६।

४. मस्ती का दौरा

किन्हीं-किन्हीं युवा हाथियों को कभी-कभी मस्ती का दौरा पड़ता है। कुछ लेखकों के अनुसार अन्य मौसमों की अपेक्षा सर्दियों में अधिक दौरे पड़ते हैं। उत्तर-प्रदेश के तराई-भावर क्षेत्र में जंगली हाथियों को मैंने मई महीने में मस्त देखा है।

मस्ती में हाथी के फूले हुए गण्ड-प्रदेशों (temples) में अवस्थित एक छोटे प्राकृतिक छिद्र में से मद बहने लगता है। महावतों की बोली में इस छिद्र को 'दान' कहते हैं। तिरछा, लगभग एक सेण्टीमीटर लम्बा दान सामान्य अवस्था में बंद रहता है और खाल पर स्पष्ट नज़र नहीं आता। जब मद निकलने को होता है तो गण्ड प्रदेश फूल जाते हैं और दान खुल जाते हैं तथा स्पष्ट रूप से दिखायी देने लगते हैं। संस्कृत में मद को दान भी कहते हैं।

नर और मादा दोनों की कनपटियों पर आँख और कान के बीच में दोनों ओर दो दान होते हैं। परन्तु मादा के दानों में से मद नहीं बहता। पुराने कुछ ऐसे उल्लेख मिलते हैं जिनमें वन से ताज़ा पकड़ी गयी हथिनियों का मद चूता हुआ देखा गया था। पालतू हथिनियों में यह भाव कभी नहीं देखा गया। हथिनियों में बहने वाले इस स्राव को पुराने पीलवान मद न कहकर मैल कहते हैं। मद में खुशबू अधिक होती है, मैल में नहीं। मैल तीन-चार इंच से अधिक बहता भी नहीं। हथिनियों को मस्ती में कभी असन्तुलित नहीं देखा गया। क्योंकि नर हाथी मस्ती में आते हैं और खतरनाक हो सकते हैं इसलिए चिड़ियाघरों और सरकसों में हथिनियों को रखा जाता है।

मद गंदले-काले या भूरे रंग का, चरपरी-सी गन्ध वाला, गाढ़ा तैलीय द्रव है। प्रौढ़ और बूढ़े हाथियों में इसका रंग काला होता है, जबकि कम उम्र के हाथियों में भूरा। हाथी की उम्र और स्वास्थ्य के अनुसार इसकी मात्रा कम या अधिक हो सकती है।

पन्द्रह साल की उम्र से मद निकलना शुरू हो सकता है। लेकिन यह इतना कम होता है कि दान से निकलकर लगभग एक बालिश्त नीचे तक ही आ पाता

है। मद से इतना स्थान गीला रहता है। पैंतीस साल की उम्र तक मद की मात्रा कम रहती है और हाथी अधिक मस्ती में नहीं आता। इस अवस्था को छरेरी कहते हैं। पैंतीस-चालीस साल की उम्र के स्वस्थ और पुष्ट हाथियों में इसकी मात्रा इतनी बढ़ जाती है कि दान से निकलकर गण्ड प्रदेशों से कपोलों पर बहता हुआ नीचे भी टपकने लगता है। यह वास्तविक मदावस्था है। इस अवस्था में आये हुए हाथी को 'मद्दी हाथी' कहा जाता है। गुस्सा करने से मद अधिक निकलता है। वाल्मीकि ने रामायण में अच्छी नस्ल के हाथियों को पर्वत के समान विशाल, मदोन्मत्त और बलवान् बताया है, उनके गण्ड-प्रदेशों से निरन्तर मद चूता रहता था। हाथियों का मद से हीन होना अपशकुन माना जाता था।

मद की गन्ध बहुत तेज़ होती है जो वातावरण में दूर तक फैल जाती है। जानकार आदमी इस गन्ध से जान जाता है कि आसपास कोई मद्दी हाथी है। तीव्रता के कारण बहुत से महावत इस गन्ध को दुर्गन्ध बताते हैं। संस्कृत के काव्य-ग्रंथों में इसे आकर्षक गन्ध माना गया है। किरातार्जुनीय में इस गन्ध को सप्त-पर्ण (Alstonia scholaris R. Br.) या इलायची के फूलों की सुगन्ध के समान बताया है।[1]

जीव-विज्ञान के अनुसार मद वह स्राव है जो हाथी के गण्ड-प्रदेशों में अवस्थित ग्रन्थियों से बाहर निकलता है। मदावस्था में ये ग्रन्थियाँ फूल जाती हैं जिससे गण्ड-प्रदेश ज़रा से सूजे हुए और पोले नज़र आते हैं।

हाथियों की अवस्था के अनुसार मद चालीस दिन तक बहता है। शुरू के दिनों में कम मात्रा में, बीच के दिनों में सबसे अधिक और, फिर कम होता हुआ, चालीसवें दिन सूख जाता है।

इन चालीस दिनों तक उसे लगातार पेशाब आता रहता है। उसके मूत्राशय में पेशाव रुकता नहीं। चौबीस घण्टे लगातार टपकता रहता है। इन दिनों पेशाव का रंग गाढ़ा पीला हो जाता है और उसमें मद की गन्ध के समान तेज़ गन्ध आती है।

इन शारीरिक परिवर्तनों के अलावा उसके स्वभाव में जो परिवर्तन आ जाते

---

१. निःशेष प्रज्ञमितरेणुवारणानां सोतोमिर्मदजलमुच्झतामजस्रम्
आमोदं व्यवहितभूरिपुष्पगन्धो मिन्नेलासुरभिमुवाह गन्धवाहः॥

किरात, ७; ३८।

हैं वे बहुत गम्भीर हैं। मद के बहिःस्राव से पूर्व चालीस दिन और स्राव बन्द होने के पश्चात् चालीस दिन, अर्थात् कुल १२० दिन तक, जानवर का मिज़ाज बदला रहता है। इस सारे समय वह जो परिवर्तन दिखाता है उसे मस्ती का दौरा कहते हैं। कुछ विशेषज्ञों ने हाथी की आयु और शारीरिक अवस्था के अनुसार मस्ती की मियाद कुछ दिन या कुछ सप्ताह से लेकर चार-पाँच महीने तक बतायी है। अच्छे स्वास्थ्य वाले हाथी ही मस्ती के इस दौरे में आते हैं, बूढ़े और रोगी हाथी नहीं।

मद बहने से पहले की अवस्था में कालिदास ने हाथी को अन्तर्मदावस्थ बताया है। वे लिखते हैं—किसी मतवाले हाथी के माथे से मद की धारा न भी निकलती हो तो भी देखते ही उसके तेज का अनुमान हो जाता है। राजा दिलीप ने गौ की सेवा के व्रत के कारण यद्यपि छत्र, चंवर आदि राजसी चिह्न छोड़ दिये थे फिर भी अन्तर्मदावस्थ हाथी के समान उनके गठे हुए शरीर और मुख के तेज को देख कर कोई भी कह सकता था कि ये सम्राट् ही हैं।[१]

मस्ती का दौरा शुरू होने से पहले ही अनुभवी पीलवान जान जाता है कि दौरा पड़ने वाला है और मद निकलना शुरू होने वाला है। हाथी की आँखें चढ़ी होती हैं। वह ऐसी मस्ती की हालत में रहता है कि किसी की परवाह नहीं करता। उसकी मानसिक अवस्था में गड़बड़ी देखी जाती है। ऐसा हाथी जो काम करता है वह उसके प्रतिदिन के काम करने के तरीकों से भिन्न होता है।

मदावस्था में वह आदेशों का पालन कर तो लेता है पर सदा नहीं। वह अपनी मर्ज़ी से चलता है। अत्यन्त आज्ञाकारी और विनयशील हाथी भी इन दिनों अपने पीलवान के आदेशों का पालन करने से इन्कार करते हुए देखे गये हैं। मदावस्था में हाथी निश्चित रूप से असन्तुलित हो जाता है। उसके स्वभाव में उत्तेजना तो आ जाती है परन्तु आवश्यक नहीं कि वह आक्रामक और खतरनाक भी हो जाय। उसे क्षुब्ध किया जाय तो वह आक्रामक भी बन जाता है।

मस्ती के दौरान हाथी जब किसी भी तरह काबू में नहीं आता और जान-माल का नुकसान करने पर उतारू हो जाता है तो उसे पागल करार कर देते हैं

---

१ स न्यस्तचिह्नामपि राजलक्ष्मीं तेजोविशेषानुमितां दधानः।
आसीदनाविष्कृतदानराजिरन्तर्मदावस्थ इव द्विपेन्द्रः॥
रघुवंश, सर्ग २; ७।

और गोली से उड़ा देते हैं। मोटे तौर पर प्रत्येक मदमस्त हाथी को पागल हाथी कह देते हैं। यह ठीक नहीं है, क्योंकि पागलपन निश्चित रूप से एक अवस्था है। पालतू हाथियों के अचानक उद्यत हो जाने तथा सहसा खूनी बन जाने का एक कारण मदावस्था भी हो सकता है। सताये जाने से भी ये खतरनाक बनते देखे गये हैं।

ज्यों-ज्यों वेग बढ़ता जाता है, मस्त हाथी के स्वभाव में उग्रता तथा चिड़चिड़ापन आ जाता है। वह हर आदमी पर गुस्सा करता है। जिन लोगों को वह सबसे अधिक प्यार करता था और जिन पर भरोसा करता था, उन पर अधिक गुस्सा दिखाता है। सब से पहले सफाई करने वाला भंगी या पीलवान उसके क्रोध का शिकार बनते हैं। ऐसा बेकाबू हाथी अजनबी पीलवान का थोड़ा-बहुत कहना मान लेता है। इसलिए ऐसे अवसरों पर बाहर के पीलवानों को बुलाकर मस्त हाथियों को काबू किया जाता है। यदि ये छूटे हुए हैं तो डरा धमका कर किसी तरह इन्हें बांधा जाता है। दस गज की एक बेल (जंजीर) अगले पैर में और एक पिछले पैर में बेड़ी के साथ बांध देते हैं। अगली जंज़ीर को लोड और पिछली को बन्धन कहते हैं।

होशियार पीलवान तो मस्ती में आने से पहले ही उसे मज़बूत बांध देता है। उसे अपने थड़े पर ही रखा जाता है। उसके भोजन की संख्या और मात्रा में कमी कर दी जाती है और उसमें नींद लाने वाले द्रव्य भी मिला देते हैं। पुराने पीलवान तो गुंधे हुए आटे के गोले के अन्दर अफीम की गोली रखकर खिला दिया करते थे। आधुनिक पशु-चिकित्सक इन्हें ब्रोमाइड की भारी मात्रा पर रखते हैं। तम्बाकू भी मस्ती का इलाज बताया गया है। प्रत्येक हाथी को प्रतिदिन लगभग एक पौंड सूंघनी खिलाने से वे मस्ती में ऊधम नहीं मचाते। वाल्टीमोर की पशुवाटिका में तो सूंघनी तम्बाकू हाथियों की दैनिक खुराक बन गयी है।

जब तक वह पूरी तरह दौरे से मुक्त नहीं हो जाता, दूर से ही उसके आगे चारा फेंक दिया जाता है। सामान्यतया मस्ती के तीन-चार महीनों में उससे काम नहीं लिया जाता और इसी तरह बांध कर रखा जाता है। मस्ती की हल्की अवस्था में, जिसे छरेरी कहते हैं, काम लेने में विशेष खतरा नहीं होता।

जंगल में आवश्यक नहीं कि मदमस्त हाथी अपनी मर्ज़ी से इधर-उधर भटकते फिरें। वे बहुधा झुण्ड के साथ ही दिख जाते हैं, परन्तु कभी-कभी झुण्ड से ज़रा

दूर, लेकिन वगल में ही, थोड़ा वहुत चर लेते हैं। मस्त हाथी असाधारण रूप से वलशाली वन जाता है और वह भयंकर भी बन सकता है। दूसरे नर हाथी उसे देखते ही या उसके मद की गन्ध पाते ही, दूर भाग जाते हैं।

पुराने पीलवान मद के संवंध में कई प्रकार की वातें कहते हैं। उनके अनुसार मद दिमाग का रस है और यदि यह रुक जाय तो हाथी पागल हो जाता है। उनकी राय में हाथी की काम-प्रवृति से इसका संवंध हो सकता है। मस्ती के पहले चालीस दिनों में यदि सम्भोग कर ले तो वह मस्त नहीं होता। प्रजनन अंगों के विकास और कामेच्छा के साथ मद के संवंध में अभी पूर्ण ज्ञान नहीं प्राप्त हो सका है।

हाल के वर्षों में मदावस्था में बिगड़े हाथी का प्रसिद्ध उदाहरण उदयगिरि है। राष्ट्रीय समारोहों में भाग लेने के लिए यह भारत के राष्ट्रपति की गजशाला में था। लगभग आठ वरस की उम्र में इसे असम के वनों में पकड़ा गया था और वड़ी सावधानी से काजीरंगा के प्रसिद्ध हाथी अकवर के ढंग पर सधाया जा रहा था। १९५४ में इसे राष्ट्रपति के लिए दिल्ली भेज दिया गया। १९५६ में एक जुलूस का नेतृत्व करते हुए वह वीमार हो गया। वाद में उसे निमोनिया हो गया। अगले साल उसने अचानक अपने सेवादार को मार डाला जव वह उसे सांकल में बांधने की कोशिश कर रहा था, उसने उसे पैर के नीचे कुचल दिया। इसके तुरन्त वाद उसने भोजन ग्रहण कर लिया और बिलकुल शान्त हो गया।

उसमें मस्ती के चिह्न प्रकट हो रहे थे, इसलिए कुछ समय के लिए उसे बाँध दिया गया था। परन्तु बाद में वह ठीक हो गया और उसे खोल दिया गया। सैर के लिए उसे घुमाया जा रहा था कि वह अचानक बिगड़ गया। गुज़रते हुए एक मिलिट्री ट्रक पर उसने हमला किया और उसे टक्कर दे मारी। फिर एक आदमी के पीछे भागा जिसने घर में घुस कर अपनी जान वचायी। उसका महावत कोई तीन घण्टे तक वड़ी हिम्मत से उसके सिर पर डटा रहा और उसे काबू करने की कोशिश करता रहा। अपनी जान को खतरे में समझ कर महावत भी पास के एक मकान की छत पर कूद कर चढ़ गया। काबू करने की सव कोशिशें व्यर्थ जान कर उसे गोली मार दी गयी।

ऐसा लगता है कि उदयगिरि असम के जलवायु से आकर यहाँ अपने को अनुकूल नहीं बना पाया। दिल्ली जैसी कड़ाके की ठण्ड, भयंकर गरमी और

कुछ लोग गेण्डों को जंगल में चरता हुआ देखने गये। अचानक ही गेण्डों के एक जोड़े ने उस पर हमला वोल दिया। अकवर ने मैदाने जंग में डट कर वड़ी वहादुरी से इस विपत्ति का सामना किया। वह झट घुटनों के वल बैठ गया। सूँड को लपेट कर उसने दोनों उद्दन्तों के वीच में सुरक्षित कर लिया। अपने ताकतवर उद्दन्तों के ऊपर दोनों गेण्डों को वारी-वारी से उठाकर ऐसी पटकनी दी कि उन्हें छठी का दूध याद आ गया। चीखते हुए वे झाड़ियों के झुरमुट में जा छिपे। हाथी ने यह सारा युद्ध बैठे-बैठे अपने सिर से इस खूवी के साथ किया कि महावत और सवारियाँ गिर कर उन दोनों दैत्यों के चंगुल में न पड़ जाये। अपने शरीर की मांसपेशियों पर उसका कितना अच्छा नियन्त्रण था!

हाथियों का शिकार

अव तो हाथी को बन्दूकों से मारना वहुत आसान हो गया है। पुराने ढंग की एकनली .५०० वोर राइफल की गोली से एक वार एक हथिनी मार डाली गयी। कान के सूराख से लगभग नौ इंच नीचे गरदन में गोली घुसी और फेफड़े को छेदती हुई हृदय तक पहुँच गयी। कुल मिला कर इसने लगभग एक गज़ छेद कर दिया था। गोली घातक न हो तो दस टन का पशु किस तेज़ी से दौड़ कर हमला करता है, इस पर विश्वास नहीं होता। दिमाग में गोली लगे तो हाथी मर जाता है। मर्मस्थल पर निशाना ठीक बैठने पर यह ऐसे गिर पड़ता है मानो एक ध्वस्त इमारत गिर पड़ी हो।

५. रोग

हाथियों को तरह-तरह के रोगों का शिकार होते देखा गया है। प्लीह-ज्वर, चेचक, पैर और मुख के कुछ रोग भी इन्हें दबा लेते हैं। पागल कुत्तों के काटने से ये पागल भी हो जाया करते हैं। उत्तर भारत की कड़ाके की सरदियाँ पालतू हाथी को माफ़िक नहीं आतीं। १९६२ के फरवरी महीने में साधुओं की एक जमात ने एक शहर से बाहर डेरा डाला। उपहार में मिले जमात के हाथी को सरदी से बचाने और रात को छप्पर के नीचे बाँधने का प्रबन्ध साधू लोग नहीं कर पाये। शीत के प्रकोप में वह खुले मैदान में ठिठुर कर मर गया।

सहसा सरदी लग जाने से या अचानक गर्म-सर्द हो जाने से हाथी को निमोनिया या प्लूरोनिमोनिया हो जाता है। पकड़ने की कशमकश में हाथी का शरीर गरम हो जाता है। ऐसी अवस्था में उसे सहसा ठंडा पानी पिला दिया जाय या ठंडे पानी में नहला दिया जाय तो उसे निमोनिया या शूल होने का अन्देशा रहता है। असम में हाथी पकड़ने वालों की इस धारणा के विपरीत दक्षिण में नये पकड़े हाथी को खूब पानी दिया जाता है जिससे वह अपनी देह और मिज़ाज को ठंडा कर सके।

जंगली हाथी जब बस्तियों पर धावा बोलते हैं तो गुड़, आटा जो कुछ मिले और जितना मिले सब खा जाते हैं। तम्बाकू तक को ये नहीं छोड़ते। अन्धाधुन्ध खाने से तब ये उदरशूल और पेचिश जैसे उदर-विकारों से बीमार पड़ जाते हैं। बाज़ी दफा तो इतना सख्त बीमार हो जाते हैं कि एकान्त में कई दिनों तक पड़े-पड़े दस्त करते रहते हैं। कहते हैं कि खारा (ज़िला बिजनौर, उत्तर प्रदेश) के जंगल में कटान करने वालों की झोंपड़ी पर इक्कड़ हाथी ने हमला कर दिया। १९६६ की गरमियों का मौसम था। मज़दूरों को बाँटने के लिए ठेकेदार ने पाँच मन तम्बाकू और सोलह भेली (एक मन) गुड़ जमा कर रखा था। खूंखार इक्कड़ के सामने जाने की किसी में हिम्मत नहीं बँधी। उसने अपनी मर्जी से छक कर गुड़ और तम्बाकू खाया। झोंपड़ी में रखे चार मटकों में से शीतल पानी पीकर तृप्त हो गया। इतने में उस पर तम्बाकू का नशा चढ़ गया। वह वहीं गिर पड़ा।

उसे दस्त होने लगे। पन्द्रह दिन तक वह अर्द्धचेतनावस्था में पड़ा रहा। तम्बाकू का विष दस्तों में निकल गया। तब वह खुद ही वन में चला गया।

हाथी की आँतों में पराश्रयी पैदा हो जाते हैं जो उसके स्वास्थ्य को खराब करते हैं। इससे बचने के लिए वह कुछ प्राकृतिक दवाओं को जानता है। मुख्यतया वह खनिज लवण से युक्त मिट्टी और पानी पर निर्भर करता है। जंगल में कहीं-कहीं ऐसी मिट्टी मिलती है। वहाँ जाकर यह मिट्टी फाँकता है, मानो कि हाज़मे का चूर्ण फाँक रहा हो। नमकीन मिट्टी के इन स्थानों को लेह-भूमियाँ (salt-licks) कहते हैं।

एक बीमारी में हाथी के मांस का क्षय हो जाता है और उसके अंगों में पानी संचित होने लगता है। ऐसे बीमार हाथी पर से सभी प्रकार के नियन्त्रण उठा लिये जाते हैं और उसे स्वेच्छा से जहाँ-तहाँ चरने की छूट दे दी जाती है।

उत्तर प्रदेश के तराई जंगलों में मई, १९६७ में मैंने एक बड़ी हथिनी देखी थी जिसकी पिछली बायीं टाँग के बीचों-बीच एक बड़ा उभार था। यह लंगड़ा कर चलती थी। झुण्ड के सदस्यों को आत्मरक्षा के लिए तेज़ी से भागना पड़ता था तो वह पिछड़ जाती थी। लंगड़ी टाँग तेज़ी से भागने में पूरी तरह साथ नहीं देती थी। टाँग में इस विकार के दो कारण हो सकते हैं। एक यह कि किसी दुर्घटना में फँस जाने से टाँग की हड्डी टूट गयी हो और कालान्तर में स्वतः ही जुड़ गयी हो। दूसरा यह कि किसी विद्रधि (abcess) या अर्बुद (tumour) की उपस्थिति के कारण सोज नज़र आ रही हो। हाथियों को गठिया भी हो जाया करता है जिससे वे लंगड़ा कर चलते हैं और पूरे वेग से भाग नहीं पाते।

जंगली हाथियों को गड्ढों में गिराने तथा उसके बाद पकड़ कर कैम्प तक लाने में और उनको सधाने में अनेक बार चोटें लग जाती हैं। बहुत से जख्म तो ऐसे होते हैं जिन्हें एक अनुभवहीन आदमी देख कर घबरा जाता है, परन्तु वास्तव में वे ऊपरी सतह तक ही सीमित होते हैं और जल्दी भर जाते हैं। रस्सों द्वारा बनाये गये जख्म अक्सर अधिक गम्भीर होते हैं। खेदे के अधिकारी को सबसे अधिक भय इस बात का रहता है कि कस कर बाँधे गये रस्से से कहीं उस जगह की वाहिनियाँ (nerves) और मांसरज्जु (tendons) न कट जायें। इसलिए शिविर में नये हाथी के पहुँचते ही बन्धनों का दबाव कम किया जाता है।

बड़े हाथी की अदम्य शक्ति ही उसकी सबसे बुरी दुश्मन बन जाती है!

चित्र ८—जंगल में दो हाथी

चित्र ९—हाथी की सूंड में गिरफ्तार सैनिक—कोणार्क

चित्र १० —लकड़ी ढोता हुआ मेहनती हाथी

चित्र ११—खेदा के दौरान हाथियों को नदी में से ले जाया जा रहा है ।

भयंकर कशमकश में वह अपने को बुरी तरह जख्मी कर लेता है। उसे काबू करने में भी बड़ी ताकत व मारपीट का सहारा लेना पड़ता है।

टखनों और गले पर रस्सों के द्वारा जख्म हो जाना एक सामान्य क्षति है। इनको भरने देने के लिए यह ध्यान रखना होता है कि रस्से इनके ऊपर न बाँधे जायें। ये जख्म अधिक गम्भीर हों तो टाँगों या गरदन से बाँधने की बजाय उसके शरीर पर रस्सा कसा जाता है।

हाथी को गिरने से बचाना चाहिये। गिरने पर कुहनियों तथा घुटनों पर लगी चोटों के कारण सख्त सोज आ जाती है। मुँह के बल गिरे तो उद्दन्तों और दंतलियों के टूटने से चेहरे और सूँड पर खतरनाक ज़ख्म बन सकते हैं।

गरदन पर रस्सों की रगड़ से बाज़ी दफा ऐसे गहरे और चौड़े घाव बन जाते हैं कि उनमें पूरी मुट्ठी चली जाती है। नाखूनों और टखनों पर घावों के सड़े हुए मांस से ऐसी बू फैलती रहती है कि वहाँ खड़ा होना मुश्किल होता है। मक्खियाँ इनमें अण्डे दे देती हैं जो कुछ ही दिनों में कुलबुलाते पोतकों का रूप धारण कर लेते हैं। व्यथा से प्राणी बेहद परेशान होता है। प्रतिदिन उसकी शक्ति क्षीण होती जाती है। ज़ख्मों का ज़हर सारे खून में फैल जाता है। कष्ट से वह लेट भी नहीं पाता। उसकी आँखों में खुमारी भरी रहती है पर असह्य वेदना के कारण वह सो नहीं पाता। जहरबाद के इन लक्षणों को देखकर हाथी को जंगल में मुक्त करना ही श्रेयस्कर होता है।

पालतू हाथियों से टक्कर हो जाने पर जंगली हाथी कई बार उद्दन्तों की चोट से ऐसे बड़े घाव बना देते हैं कि उनमें कुहनी तक समा जाती है। इलाज के बाद ऐसा हाथी ठीक भी हो जाय तो वह पहले जैसा ताकतवर नहीं रहता। उससे हलका काम ही लिया जा सकता है।

गम्भीर बीमारी में हाथी यद्यपि कभी लेटता नहीं और लम्बे अरसे तक खड़े-खड़े ही नींद पूरी कर लेता है परन्तु यह देखा गया है कि ऐसा हाथी अन्तिम समय तक खाना नहीं छोड़ता। इससे उसे कुछ शक्ति मिलती रहती है। आश्चर्य है कि ऐसा बीमार हाथी जंगल में भाग निकलने की चेष्टा नहीं करता। उन दिनों वह नाम मात्र के ही बन्धन में बन्धा होता है।

ज़ख्म जब घातक बन रहे हों, या प्रशिक्षण की यातनाओं में हाथी बुरी तरह हार गया हो या वह किसी ऐसी अज्ञात अन्दरूनी तकलीफ का शिकार हो जिसमें

रोग मुक्ति के कोई चिह्न न दिखायी दें और प्राणी की सामान्य अवस्था में सुधार होता ही न हो तो उसे फिर पड़ोस के जंगल में छोड़ दिया जाता है। निश्चय ही पकड़ने वालों को इससे भारी आर्थिक हानि उठानी पड़ती है।

शिविर के अन्दर हाथी का मर जाना अशुभ माना जाता है। इस विश्वास के पीछे मुख्य कारण तो यही होगा कि इतनी बड़ी लाश को ठिकाने लगाना आसान काम नहीं है।

ज़ख्मों पर जब दवा लगायी जाती है तो हाथी बुरी तरह चीख उठता है। बाँस के सिरे पर एक कूची बाँध कर उसको दवा में डुबो लेते हैं। इस कूची के द्वारा दूर से ही ज़ख्म पर दवा लगाना आसान हो जाता है। एक आदमी गन्ने का लालच देकर हाथी का ध्यान बँटाता है और दूसरा दवा पोत देता है। लेकिन जब सूँड ज़ख्मी हो गयी हो तो उस पर दवा लगाने में बहुत दिक्कत पेश आती है! बाँस के सिरे को वह झट सूँड में पकड़ लेता है और पटक कर तोड़ देता है। इससे सूँड के घावों को भरने में लम्बा समय लग जाता है।

हाथियों की चिकित्सा विषयक साहित्य

चिकित्सा विज्ञान की अलग-अलग शाखाओं के विकास के साथ-साथ, प्राचीन भारत में हाथियों के विविध रोगों का विधिवत् अध्ययन किया जाने लगा था। उनके रोगों का निदान तथा इलाज का वर्णन करने वाले शास्त्र को गजायुर्वेद या हस्त्यायुर्वेद कहते थे। असम में हाथियों की संख्या अत्यधिक रही है। इसीलिए इन प्राणियों के जीवन के संबंध में प्रामाणिक जानकारी देनेवाला साहित्य यहीं रचा गया और इनके बारे में अनेक प्रकार की लोक-कथाओं की सृष्टि भी यहाँ हुई। ईसा के जन्म से लगभग एक हज़ार साल बाद असम में पालकाप्य नामक एक ऋषि पैदा हुए जिन्होंने उस समय के हाथियों संबंधी ज्ञान को लिपिबद्ध किया। यह ज्ञान संस्कृत भाषा में उपलब्ध है।

एक कल्पना के अनुसार पालकाप्य की उत्पत्ति सामान्य मनुष्य के समान नहीं हुई थी। उन्होंने एक हथिनी के गर्भ से जन्म लिया था। जंगली हाथियों के साथ ही वे पले और उनके साथ ही विचरण करते रहे। उनका भोजन भी वही था जो हाथियों का था। इन प्राणियों को सताने वाले रोगों और उनके इलाज से भी भलिभांति परिचित हो गये थे। तब उन्होंने हाथियों की नस्लों पर, उनके

रोगों की पहिचान तथा चिकित्सा पर हस्त्यायुर्वेद नामक एक ग्रन्थ लिखा। समुद्र की ओर बहनेवाली लोहित नदी के तट पर पालकाप्य तप करते थे। दिहांग (या त्सांग-पो) से जो नदी मिलती हे उसे लोग भ्रमवश ब्रह्मपुत्र कहते हैं, पर वास्तव में वह लोहित है।

असम के अहोमों के अलावा तन्जोर के चोल राजाओं ने भी हाथियों के बारे में वृहत् साहित्य की सृष्टि की थी। उत्तर भारत में तो चार सौ ईस्वी से पहले ही हाथियों के रोगों का इलाज करने में दिलचस्पी पैदा हो गयी थी। चरक नाम के एक मेधावी चिकित्सक ने अपने ग्रन्थ में मुख के अलावा 'एनीमा' के द्वारा भी बीमार हाथियों को दवाएँ देने के निर्देश लिखे हैं।

भारत में हाथियों के लालन-पालन और प्रशिक्षण में मुसलमान लोगों ने अधिक दिलचस्पी ली। इस पेशे में अब भी मुख्यतया वही लोग हैं। इनमें हबीब नामक एक उस्ताद हो गये हैं। उन्होंने संस्कृत में लिखी पुस्तकों को आधार बनाकर अपने अनुभवों के निचोड़ रूप में, क्रियात्मक प्रयोजन के लिए, सरल चौपाइयों में एक पुस्तक लिखी जिसका नाम हबीब चौपाई है। पुरानी पीढ़ी के किसी-किसी पीलवान के पास यह मिल जाती है। अपने हाथियों के इलाज के लिए वह हबीब चौपाई में लिखे देसी जड़ी-बूटियों के नुस्खों पर भरोसा करता है।

हिन्दी के सरल छन्दों में लिखी गयी पुस्तकें पुराने पीलवानों के पास सुरक्षित हैं। कुछ किताबें तो सचित्र हैं जिनमें हाथियों की नस्लों के चित्र तथा रोगों में उनकी बदली हुई अवस्था के चित्र हैं। एक अरसे से ऐसी नयी पुस्तकों का प्रणयन और लेखन समाप्त हो गया है। पुरानी हस्तलिखित पुस्तकें ही पीलवानों के कुनबों में पीढ़ी दर पीढ़ी चली आ रही हैं। ये लोग किसी को, यहाँ तक कि अपने आश्रयदाताओं को भी, गजपोथियाँ नहीं दिखाते। महावतों की सेवा करके और उनका विश्वास प्राप्त करके मैंने कुछ पुस्तकें देखी हैं। मेरी धारणा है कि उन्हें प्रकाशित करने का काम प्राच्य विषयों में शोध करने वाली संस्थाओं ने तुरन्त हाथ में न लिया तो ज्ञान का यह दुर्लभ भण्डार लुप्त हो जायेगा।

एक गजपोथी की बन्दिश में कहा गया है :

गुरमुख वेग हिले, नुगरा भटकत आन।

अर्थात् गुरु की कृपा से ज्ञान के द्वार खुलते हैं, बिना गुरु के (नुगरा) तो भटकता ही रहता है।

भाव के तेक हैं फील के, ये महादुःख की खान ।

पीलवान की परिभाषा में भाव का अर्थ बीमारी से है । यद्यपि वे हाथी (फील) को महान् दुःखों की खान बताते है परन्तु सुविधा के लिए उनके रोगों का वारह भागों में श्रेणीकरण करते हैं । इस पोथी की अन्तिम वन्दिश है :

सम्वत् १७२० का सम्वत् परवीन

कारतिक सुदी गुरपंचमी गजपोथी पूरी कीन ।

दाँत के रोग

दन्तरोगों से आक्रान्त होने पर हाथी अपने उद्दन्त स्वयं ही तोड़ने को बाध्य हो जाते हैं । आर० सी० मोरिस को एक वार एक वृक्ष की दुसंखी के बीच में फँसा हुआ हाथी के उद्दन्त का अठारह इंच लम्बा टुकड़ा मिला था । श्री मोरिस का ख्याल था कि हाथी के उद्दन्त की जड़ में तकलीफ थी जिससे छुटकारा पाने के लिए हाथी ने जानबूझकर उद्दन्त तोड़ा था । पहले तो उसने चट्टनों की दरारों के वीच में अड़ाकर उसे तोड़ने की कोशिश की थी परन्तु जब इसमें सफलता नहीं मिली तो उसने दुसंखी में अड़ाकर उद्दन्त को तोड़ दिया । जंगली नर हाथियों में कई वार तुमुल युद्ध होता है, जिसमें उनके उद्दन्त टूट जाते हैं । पालतू दन्तुर हाथियों के उद्दन्त जंगली हाथियों के साथ भिड़न्त में टूटते हुए देखे गये हैं ।

हाथी को आयु

हाथी दीर्घजीवी प्राणी माना जाता है । प्राचीन भारत में विश्वास था कि ये तीन सौ वर्ष तक जिन्दा रहते हैं । सामान्य विश्वास के अनुसार इनकी उम्र डेढ़ सौ से दो सौ वर्ष तक होती है । मुगलों के मत में इनका औसत जीवन-काल एक सौ बीस वरस है । सैण्डर्सन की सम्मति में जगली अवस्था में हाथी कम-से-कम डेढ़ सौ साल तक जिन्दा रहता ही है । फ्लावर्स यह संख्या पचहत्तर तक ले आये हैं । उनके ख्याल में यह मनुष्य के समान ही लम्बी उम्र भोगता है । उनके पर्यवेक्षण पालतू हाथी के जीवन पर आधारित थे ।

हाथियों के विशेषज्ञों ने इन विचारों को एक मत से स्वीकार नहीं कर लिया । लंका का हुर्ताला नामक हाथी इसका ऐतिहासिक साक्षी है । डचों के आधिपत्य के

समय यह उनकी सेवा में एक सौ चालीस वर्ष तक रहा था। विश्वास किया जाता है कि मरते समय यह एक सौ सत्तर साल का था। इस शताब्दी के शुरू में प्रिन्सेस एलिस नामक एक हाथी एक अंग्रेज़ी सरकस कम्पनी के साथ आस्ट्रेलिया ले जाया गया था। यह एक सौ बावन साल की उम्र भोगकर मरा था। बेतिया रियासत के एक उदाहरण में इमान प्यारी नामक हथिनी निन्न्यानवे साल में पहुँच गयी थी। अस्सी साल तक तो कई पालतू हाथी ज़िन्दा रहते देखे गये हैं। जंगल में ये सम्भवतः अधिक उम्र भोगते हैं। वहाँ की स्वास्थ्यप्रद परिस्थितियों में ये सौ वर्ष तक ज़िन्दा रहते होंगे। इनकी ज़िन्दगी के सबसे अच्छे साल पैंतीस और पैंतालीस के बीच होते हैं।

हाथी की उम्र पर बहुत-सी बातों का प्रभाव पड़ता है। पालतू हाथी को सख्त मशक्कत के काम पर लगा रखा है तो उसकी उम्र का कम हो जाना स्वाभाविक है। यदि वह आलसी और निष्क्रिय जीवन बिता रहा है तो इससे उसके स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव अवश्य पड़ेगा। जंगल में हाथी का व्यायाम ज़रूरत के मुताबिक हो जाता है।

पालतू हाथियों को वह कुदरती खुराक भी नहीं मिल पाती जिसमें पर्याप्त विविधता रहती है। जंगली हाथी जिन अवस्थाओं में रहते हैं वे बिलकुल ही भिन्न हैं। उन वनस्पति बहुल जंगलों और चरागाहों की कल्पना कीजिये जहाँ जंगली हाथियों को मनपसन्द खाना मिलता है और जलधाराओं तथा सोतों में स्नान का आनन्द मिलता है। पुष्ट नर हाथी को जंगल में देखकर मैं दंग रह जाता हूँ। कैसा गोल-मटोल, लेकिन गठा हुआ, शरीर कुदरत ने इन्हें दिया है। इनके झुण्ड की हथिनियाँ भी प्रायः ऐसे भरे बदन वाली होती हैं। उनके देह में भी हड्डियाँ नज़र नहीं आतीं। उद्दन्तों वाले एक जंगली हाथी को मनुष्य के सिवाय किसी और से डर भी तो नहीं होता।

उम्र का अंदाज़ लगाना

खानदानी पीलवान बचपन से ही हाथियों के जन्म को और उनके विकास की विभिन्न अवस्थाओं को गौर से देखते रहते हैं। इसलिए उन्हें हाथियों की उम्र का अन्दाज़ लगाने में दक्षता प्राप्त हो जाती है। हाथियों के विकास के आरम्भिक वर्षों में उनके द्वारा लगाया गया अन्दाज़ करीब-करीब बिलकुल विश्वसनीय होता

है। ज्यों-ज्यों शरीर विकसित होता जाता है उम्र के अन्दाज़ में कठिनाई बढ़ती जाती है। जब तक शरीर बढ़ रहा होता है तब तक उसकी ऊँचाई को नाप कर अन्दाज़ की गयी उम्र पर भरोसा किया जा सकता है। सामान्यतया पच्चीस साल के लगभग हाथी की वृद्धि रुक जाती है। इसके बाद ऊँचाई से कोई सहायता नहीं मिलती। जिन हाथियों की उम्र का हमें सही ज्ञान है उनकी देह से तुलना करना भी इस दिशा में विश्वसनीय मार्गदर्शन होता है। उम्र का पता लगाने में निम्न-लिखित बातों पर गौर किया जाता है :

१. गण्ड प्रदेश उभरे हुए हैं या धँसे हुए ?
२. कनौतियाँ (कान का ऊपरला किनारा) कितनी गिरी हुई हैं ?
३. कान की लौल (नीचे लटकने वाला भाग) कितनी शिथिल पड़ गयी है ?
४. गालों पर सफेदी कितनी आ गयी है ?
५. सूँड का आधार कैसा है ?
६. टाँगों और सूँड का पतले होते जाना।
७. पूँछ की जड़ के दोनों ओर नालियों की गहराई।
८. चाल और गति।
९. लीद की अवस्था। बूढ़े हाथी की लीद में अनपचे पदार्थ तथा रस्सीनुमा रेशे निकलने लगते हैं।
१०. दाँतों की हालत। मुख्यतया दाँत हाथी की उम्र के सूचक होते हैं।
११. शरीर के ढाँचे में सामान्य रूप से गिरावट।

बड़े हाथियों की उम्र का अन्दाज़ उतनी बारीकी से नहीं लगाया जा सकता जितना बच्चों और बढ़ते हुए हाथियों का जिनमें ऊँचाई मुख्य मानदण्ड होती है। किन्तु किसी भी हाथी की भलीभाँति परीक्षा करने के बाद सभी पीलवान उसकी उम्र के बारे में एक ही राय पर पहुँचते हैं।

रहस्यपूर्ण समाधि

आदिवासी की मान्यता है कि हाथी कहीं दूर घने जंगल में जाकर अपना शरीर छोड़ते हैं, इसलिए इनकी मौत का पता नहीं चलता। मरे हुए हाथियों के अवशेष बहुत कम मिलने के कारण उसकी जीवन लीला की समाप्ति के बारे में कितनी ही रोचक कल्पनाओं को जन्म मिला है। इन कल्पनाओं में मृत्यु और उसके

बाद उनकी रहस्यमय समाधि के बारे में दिलचस्प परिकल्पनाओं की सृष्टि हुई है।

जंगली हाथी 'वाइल्ड एलिफेण्ट' नामक पुस्तक में सर इमर्सन टेन्नेण्ट ने लंका के आदिवासियों के विश्वास के बारे में बताया है। ये लोग मानते हैं कि एडम्स पीक के पूर्व में एक घाटी के अन्दर हाथियों का गुप्त समाधि-स्थल है। चट्टानों के एक तंग दर्रे से गुज़रकर हाथी वहाँ पहुँचते हैं। भारत में मैसूर के कुर्राबा लोग भी हाथियों के समाधिस्थ होने में विश्वास रखते हैं।

आर्लिन्स के ड्यूक ने मध्य अफ्रीका में एक अभियान दल संगठित किया था। जिसका उद्देश्य हाथियों का कब्रिस्तान तलाश करना था। बोंगो कबीले के एक बहुत बूढ़े आदमी ने दल को बताया था कि कई साल पहले उसने एक लड़खड़ाते हाथी का पाँच दिन तक लगातार पीछा किया था। अन्त में वह उस गुप्त कब्रिस्तान तक पहुँच गया था जिसकी रक्षा में सन्तरी हाथी तैनात थे। उन्होंने उस पर हमला कर दिया।

हाथियों की मृत्यु से सम्बद्ध एक बात दिलचस्प है कि ये प्रायः पानी के पास या पानी के अन्दर प्राण त्यागते हैं। इस प्रसंग में मुझे एक घटना स्मरण है। उत्तर प्रदेश के तराई क्षेत्र में लाल ढाँग से कुछ मील दूर, ज़मींदार के खेतों में जंगली हाथियों के कुछ झुण्ड धावा बोला करते थे। एक बार कनस्तर पीटने पर भी जब वे न डरे तो उन्हें भगाने के लिए ज़मींदार ने हवा में गोली दागी। रात के अँधेरे में वह झुण्ड के नेता की कनपटी पर जा लगी। झुण्ड के साथ ज़ख्मी हाथी भी भाग खड़ा हुआ। कोई आधा मील जाकर वह झुण्ड से अलग हो गया और एक जोहड़ में बैठ गया। ज़मींदार के कारिन्दे उसे हर रोज़ देखने जाते थे। उन्होंने उसे सदा पानी में ही बैठा पाया। खाने के लिए भी वह जोहड़ से बाहर नहीं निकला। तीन-चार दिन बाद वह मरा हुआ पाया गया। बरसात के चार महीने गुज़र जाने के बाद मैंने उसकी हड्डियाँ देखी थीं। वह एक शानदार दन्तुर हाथी था।

चिटागोंग पर्वत पथ की कर्णफूली नदी में जल-समाधि लेनेवाले एक हाथी का आँखों देखा वृत्तान्त एक लेखिका ने दिया है। वह और उसका भाई दोनों घटना स्थल पर मौजूद थे। उनके बिलकुल नज़दीक से ही वह दन्तुर जंगल से निकला। सिर हिलाने के ढँग से पता चलता था कि वह सख्त दर्द से परेशान है। अपने भारी शरीर को सम्हाल न पाने के कारण वह बुरी तरह लड़खड़ा रहा था।

जैसे-तैसे वह देह को घसीट रहा था। हर एक कदम पर लगता था कि वह गिर पड़ेगा। आखिर वह पानी तक पहुँचने में कामयाब हो गया और बड़े शोर के साथ वहाँ गिर पड़ा। मर्मान्तिक वेदना से अन्त पाने की इस घटना को वे दोनों बहिन-भाई आश्चर्य के साथ प्रत्यक्ष देखते रहे। पानी की सतह पर वह भारी लाश फिर कभी दिखायी नहीं दी।

चण्डी वनशृंखला में घासीराम सोत के अन्दर मरे हुए एक हाथी की हड्डियाँ मैंने १९५२ में देखी थीं। नील नदी में स्टीमर पर यात्रा करते हुए सर विलियम गोवर्स को एक बड़े दन्त-विहीन नर हाथी की लाश मिली थी। उसे मरे हुए तीन-चार दिन हो गये होंगे। गोवर्स की राय है कि भूमध्य रेखा के साथ वाले अफ्रीका के पूर्वी भाग में अधिकतर हाथी नरकुलों से व्याप्त दलदली भूमियों में मरते हैं। खारतूम में ब्लूनाइल ब्रिज के स्तम्भों को नीचे बिठाते समय नदी के तल से कोई बीस फ़ुट नीचे हाथी, दरियाई घोड़ों और दूसरे जानवरों की हड्डियाँ पायी गयी थीं। यह अब प्रायः सभी स्वीकार करने लगे हैं कि प्राकृतिक परिवेश में हाथियों की मृत्यु पानी के अन्दर या पानी के निकट होती है।

असम में असाध्य और मरणासन्न हाथी को पानी के पास छोड़ दिया जाता था। यदि किसी पंकिल क्षेत्र में पहुँचाना सम्भव होता था तो उसे वहाँ ले जाते थे। शिविर का कोई न कोई आदमी प्रति दिन उसे देखने अवश्य जाता था। बीमार हाथी अनेक दिनों तक उसी जगह पर रहता था। वहीं पर दम तोड़ देने या कुछ ठीक हो जाने पर अन्यत्र चले जाने तक वह खाता तो बहुत कम था, परन्तु पानी पीता रहता था। सूँड के सिरे को पानी में डुबोते हुए उसे कई बार देखा जाता था। यदि वहीं मर गया तो गिद्धों व जंगल के दूसरे भंगियों द्वारा सफाचट कर दिया जाता था। उसकी हड्डियाँ मृदु पङ्क में गायब हो जाती थीं।

पालती दून में आठ मार्च १९५७ में आपसी लड़ाई में एक हाथी मारा गया था। मई में मैंने दो स्थानीय गेम गार्डों की सहायता से उसकी हड्डियाँ तलाश करनी चाहीं। इन दोनों व्यक्तियों ने उसकी लाश को वहाँ दो महीने पहले सड़ते देखा था। एक घन्टे तक हम लोग उसके अवशेषों को तलाश करते रहे, परन्तु उनका कहीं नामोनिशान तक नहीं मिला। इस हाथी की लाश पर शेर, गुलदार, गीदड़, सेह, गिद्ध—सभी दावत उड़ाते देखे गये थे। हो सकता है कि इनके द्वारा हड्डियाँ कहीं दूर घसीटी गयी हों।

इन मांसाहारी लुटेरों का तो जंगल की लाश पर कानूनी हक है। उनके द्वारा जाने या अनजाने अवशेषों का विखर जाना स्वाभाविक है। गैर कानूनी लूट से भी हड्डियों के गायब होने का खतरा रहता है। मीठी-बेरी में मरे एक हाथी की हड्डियों को देख कर मैंने गुरुकुल कांगड़ी के जीव-विज्ञान संग्रहालय के लिए प्राप्त करने का विचार प्रकट किया। हाथी एक बड़ा दन्तुर था, किसी भी संग्रहालय में उसका अस्थि-पंजर होना गौरव की बात होती। अधिकारियों को मेरा विचार पसन्द आया। लिखा-पढ़ी करने के बाद हमें उसकी हड्डियाँ उठाने की अनुमति मिल गयी। हम लोग एक ट्रक लेकर वहाँ पहुँचे तो हड्डियाँ नदारद थीं। खोज-बीन से पता चला कि हड्डियाँ जमा करने वाला एक आदमी उन्हें काट-काट कर गधों पर लाद ले गया है और उसने उन्हें पास के हड्डी-गोदाम में बेच दिया है।

जंगली हाथी आग से डरते हैं। जब ये फसलें खाने आते हैं तो खेतों में आग जला कर, जलती हुई मशालें घुमा कर, ढोल और पीपे पीट कर शोर-गुल के साथ इन्हें खदेड़ दिया जाता है। जंगलों के किनारे बसे किसानों का अनुभव है कि अकेली आग की सहायता से इन्हें खदेड़ने के प्रयत्नों में हमेशा सफलता नहीं मिलती। गाँवों के पास-पड़ोस के वनों में रहने वाले हाथी मनुष्य की इस युक्ति को निष्फल करने का उपाय भलीभाँति जान गये हैं। खेत के सिरे पर आग जला कर जब किसान चले जाते हैं तो सूँडों में पानी भर कर हाथियों का झुंड आता है और दमकल के पाइपों की तरह उनकी सूँड़ें देखते ही देखते आग को बुझा देती हैं।

हिंसक जानवरों के समान हाथी भी कभी-कभी खौफनाक और खूँखार प्राणी बन जाता है। मनुष्य या दूसरे जानवरों की जान लेने के इरादे से यह भिन्न-भिन्न तरीकों से हमला करता है। पैर या सूँड से ज़ोर की ठोकर मार कर वह उसे गिरा देता है। कभी-कभी सूँड में उठा कर धरती पर दे पटकता है। कई बार पैरों के नीचे रौंद देता है, खोपड़ी को चकनाचूर कर देता है और छाती को कुचल देता है। अनेक बार उद्दन्तों से देह को बींध डालता है।

दोनों टाँगों को चीर कर मनुष्य को मारने की बात भी अक्सर सुनने में आती है। हम्पी, विजयनगर (पन्द्रहवीं शताब्दी) में एक प्रस्तर फलक पर राजा की गजशाला के एक सुन्दर पलकदन्ते को इसी तरह संहार करते दिखाया गया है। आगे की ओर खिंची हुई इसकी पुतली और कोर की बड़ी सफेदी से यह पगला

हाथी प्रतीत होता है। पाँच गजग्रह इसे वश में करने की कोशिश में हैं। एक गजग्रह उसकी पकड़ में आ गया है। अपने बाँये पैर से पलकदन्ते ने उसकी एक टाँग दबा ली है। दूसरी टाँग को सूँड में लपेट कर वह ऊपर की ओर खींच रहा है जिससे दोनों टाँगें बीच में से चिर जायें। संहार को प्रभावशाली बनाने के लिए पलकदन्ता अपने दांयें पैर की अँगुलियों को गजग्रह की टाँगों के सन्धिस्थल पर रख कर नीचे की ओर दबाव डाल रहा है। पीछे से हमला करने वाले गजग्रहों में से एक की टाँग को पलकदन्ते ने अपने पिछले पैर से दबा लिया है। इसे छुड़ाने के लिए दूसरा साथी इसके केशों को पकड़ कर खींच रहा है। हत्यारे को वश में करने का यह संघर्ष बड़ा ओजस्वी है। मौत से जूझते हुए गजग्रह की हिम्मत प्रशंसनीय है। सुनिश्चित मौत की इस घड़ी में भी वह पूरे होश में है। दीनता से वह अपनी जान हत्यारे के हवाले नहीं करना चाहता। एक कोहनी और एक हाथ को धरती पर टिका कर वह अब भी उठने की कोशिश कर रहा है।

सिंगापुर में एक सरकस कम्पनी के हाथी ने छह वर्षीय चीनी बालक को कुचल कर मार दिया था। इस लड़के ने केले के अन्दर लाल मिर्चे भर कर हाथी को खिला दी थीं। हाथी को इतना गुस्सा आया कि उसने सूँड मार कर लड़के को परे फेंक दिया और फिर उसकी छाती पर पैर रख कर उसे कुचल दिया।

कानपुर का एक ज़मींदार किसी विवाह में शामिल होने के लिए हाथी पर जा रहा था। लम्बे सफर को तय करने के कारण हाथी प्यास से व्याकुल हो गया था। पीलवान ने चाहा कि ज़रा रुक कर उसे पानी पिला लिया जाय। जल्दी के कारण ज़मींदार इससे सहमत न हुआ। उल्टे वह हाथी पर बिगड़ने लगा। इस पर हाथी को गुस्सा आ गया। गाँव पहुँच कर उसने अपनी पीठ पर बैठे हुए ज़मींदार को तथा उसके साथियों को नीचे गिरा दिया। इस पर भी उसका क्रोध शान्त न हुआ। बदला लेने के इरादे से उसने ज़मींदार को सूँड में उठा कर ज़मीन पर दे पटका, और अपनी क्रोधाग्नि को शान्त करने के लिए वह उसकी देह को पैरों तले बार-बार रौंदता रहा।

इसी प्रकार भूखा रहने पर भी यह कभी-कभी भयंकर रूप धारण करता हुआ देखा गया है। बुलन्दशहर की एक घटना है। एक हाथी किसी बरात में गया हुआ था। महावत दूसरे कामों में फँसा था। हाथी को खाना नहीं मिला, वह भूखा ही बँधा रहा। ज्यों ही उसके पैर की जंजीर खोली गयी उसने महावत को

पकड़ लिया और पैरों के नीचे कुचलना शुरू कर दिया। अपना राशन चुराने वाले महावत को भी हाथी नहीं बख्शता। इस अपराध के दण्डस्वरूप वह उसका खून कर देता है।

कई वार विना किसी प्रकट कारण के किसी-किसी हाथी में मनुष्य-विरोधी भावना पैदा होती देखी गयी है। दक्षिण भारत के गुरुवायुर मन्दिर के पद्मनाभन हाथी ने यद्यपि पालतू हाथियों के अति प्राचीन वंश में जन्म लिया था, परन्तु बड़ा होने पर न जाने कैसे वह खूँखार हो गया था। वह अचानक ही निरपराध चरकटों पर झपट पड़ता और अपने दाँतों तथा पैरों से उन्हें मार डालता। इस तरह गुरुवायुर में इसने छह चरकटों का खून कर दिया था। महन्त ने तब उसे गोली से उड़ा देने का आदेश दिया। इस बीच महाराजा मैसूर ने उसे खरीद लिया।

अब तक जिस हाथी ने आराम से ज़िन्दगी बितायी थी उसे लट्ठे ढोने के कठोर काम पर लगा दिया गया। इससे उसकी खूनी प्रकृति फिर जाग उठी। उसने अपना गुस्सा एक चरकटे पर उतारा। सफाई करते समय जब उसने पद्मनाभन को हट जाने के लिए कहा तो झपट कर उसने बेचारे लड़के को अपने उद्दन्तों पर उठा लिया। इसी हालत में वह सीधा नदी के सूने किनारे जा पहुँचा। वहाँ पहले तो उसने धरती पर पटक कर उसकी देह में अपने उद्दन्त गाड़ दिये और फिर कोई सौ फुट तक वह उसे इधर-उधर पटकता रहा। महावत जब घटना-स्थल पर पहुँचा तो अचरज की बात है कि हत्यारे ने आज्ञाकारी बन कर उसके आदेशों का पालन किया। उसके उद्दन्तों से तब खून टपक रहा था।

कहा जाता है कि सन् १५८३ में अकबर के दरबारी बीरबल पर चाचर नामक मस्त हाथी ने हमला किया था। बादशाह बड़ी फुर्ती से उनके और हाथी के बीच आ खड़े हुए थे जिससे उनकी जान बच सकी थी।

पश्चिम जर्मनी के निवासी श्री फ्रिट्ज़ क्राम्पे अपने एक यूरोपियन साथी श्री रॉडक्लिफ़ के साथ ऊटकमण्ड से लगभग बीस मील दूर अनाइकुट्टी क्षेत्र के जंगल में वन्य-जीवन का अध्ययन करने की गरज़ से निकले थे। ये लोग पश्चिमी जर्मनी के निवासी थे। तिरपन वर्षीय श्री क्राम्पे कुछ समय से दक्षिण-पश्चिम अफ्रीका के विण्डहौक स्थान में निवास कर रहे थे। वहाँ से वे भारत, नेपाल, आदि देशों के दौरे पर निकले थे। वन्य-जीवन के अध्ययन के साथ-साथ वे जीव-

जन्तुओं के चित्र भी बनाया करते थे। उनकी खास दिलचस्पी हाथियों और शेरों में थी।

अठाईस जुलाई १९६६ की शाम के साढ़े छह बजे थे। नाले में से जंगली हाथियों द्वारा बाँस तोड़ने की आवाज़ आ रही थी। उन्हें देखने के लिए ये पर्यटक नाले में उतर गये। उन्हें एक हाथी दिखायी दिया। श्री क्राम्पे ने अपनी दूरबीन से उसकी गतिविधियों पर गौर करना शुरू किया। उनसे पन्द्रह गज़ की दूरी पर हाथी चल रहा था। अचानक वह घूमा और उसने आगन्तुकों पर हमला कर दिया। ये दोनों भाग खड़े हुए। दस गज़ पर ही हाथी ने श्री क्राम्पे को पकड़ लिया और अपने उद्दन्त से मार दिया। बाँस के एक झुण्ड के पीछे छिप कर उसके साथी ने हमलावर को छका दिया और अपनी जान बचायी। तब हाथी लाश के ऊपर खड़ा हो गया।

श्री रॉडक्लिफ़ अकेले रह गये। उसी हालत में लाश को छोड़ कर वे अनाईकुट्टी में गाँव वालों की सहायता पाने के लिए अपनी जीप लेकर चल दिये। वहाँ पहुँचने पर रात हो गयी थी, इसलिए उस रात लाश नहीं उठायी जा सकी।

अगले दिन सुबह एक फौरेस्ट गार्ड, एक फौरेस्ट वाचर और पन्द्रह देहातियों के साथ श्री रॉडक्लिफ़ जंगल में पहुँचे। सबने देखा कि उस समय तक हाथी लाश के पास खड़ा था। तब उन्होंने हत्यारे को भगाया। लाश का निरीक्षण करने पर देखा कि श्री क्राम्पे पीठ के बल पड़े हुए हैं। उनकी छाती में दायीं ओर एक बड़ा छिद्र था जो हत्यारे के उद्दन्त से बना था।

उगाण्डा के नेशनल पार्कों में एक बार एक जर्मन कार से नीचे उतरा और पास से हाथी की फोटो खींचने लगा। हाथी ने उस पर वार किया तो वह कूद कर एक झाड़ी के बीच में चला गया। हाथी ने अपनी सूँड से छिपे हुए आदमी को उठा लिया और हवा में तीन बार ऊँचा उछाला। जब वह ज़मीन पर गिरा तो उसने अपने उद्दन्तों से उसे बींधने की कोशिश की। इस फोटोग्राफर की उम्र अभी शेष थी, इसलिए वह बचा तो लिया गया परन्तु उसका एक गट्टा टूट गया और जाँघ ज़ख्मी हो गयी।

१९६८ की मई में मैं जंगली हाथियों का अध्ययन करने उत्तर प्रदेश के तराई क्षेत्र में गया था। उस प्रदेश में फैले हुए हाथियों के आतंक के प्रति मुझे सावधान किया गया था। इसका कारण यह था कि उस इलाके में, जहाँ मुझको काम करना

था, जंगली हाथियों ने चार लोगों को जान से मार दिया था। इस साल मेरे यूनिट में सोलह मिलीमीटर के दो मूवी कैमरे और चार स्टिल कैमरे थे। फोटोग्राफी की दृष्टि से मेरा यूनिट अच्छे साधनों से सम्पन्न था। हमारे पास शक्तिशाली 'टेली-लैन्स' भी थे। जीप या संचार का दूसरा साधन हमारे पास नहीं था इसलिए हमने अधिकतर काम पैदल ही किया या वन-विभाग की हथिनी की पीठ पर बैठ कर। कई बार मद्दी दन्तुरों ने हमारा पीछ किया।

हाथियों की आदतों का भलीभाँति ज्ञान होने से ही हम अपने कीमती कैमरों की हिफाज़त करते हुए सफलतापूर्वक काम कर सके। तीन अप्रैल १९६८ को शाम की छुट्टी के बाद ठेकेदार के मज़दूरों ने गट्ठर सिर पर उठाये और डेरे की ओर चल दिये। गैरल के पास ही दुमरिया चौड़ में फूस की झोंपड़ी में वे रहते थे। उन्हें मालूम था कि हाथियों का झुण्ड वहीं पर चर रहा है। झुटपुटा हो गया था। जिस रास्ते से वे गैरल जा रहे थे उसके दोनों किनारों के साथ-साथ हाथी झाड़ियों को खा रहे थे। इस इलाके में मैंने मज़दूरों को अक्सर शोर मचाकर हाथियों को अकारण ही भगाते देखा है। इतने बड़े जानवर को घबराकर भागते हुए देखने में लोगों को बड़ा मजा आता है। इन डोटियाल मज़दूरों के हाथ में एक खाली कनस्तर था जिसे पानी से भरकर ये जंगल में ले गये थे। कनस्तर पीटते हुए और होहल्ला करते हुए ये डोटियाल रास्ते पर बढ़ने लगे। कुछ हाथी तो डर कर और दूर हट गये। चार-पाँच हाथियों की एक टोली को कुछ न सूझा तो वह वन-पथ पर डोटियालों के आगे-आगे भागने लगी। कुछ दूर भागने के बाद टोली की एक धुई मुड़कर इन लोगों पर दौड़ी। साथ ही अपने बच्चे की रक्षा और सहायता के वह लिए चिंघाड़ने लगी। सारा झुण्ड डोटियालों पर टूट पड़ा। गट्ठर पटककर वे भाग खड़े हुए। दो डोटियाल हाथियों की पकड़ में आ गये। डेरा वहाँ से एक फर्लांग दूर था। शेष छह मज़दूर वहाँ तक पहुँच तो गये पर तब तक अंधेरा हो चुका था। वे इतने अधिक सहम गये थे कि उनमें अपने साथियों को तलाश करने के लिए जाने की हिम्मत नहीं थी। सुबह लाशों की खोज की गयी। एक लाश पर हाथियों ने बहुत ठोकरें मारी थीं। वह बहुत क्षत-विक्षत और लहू से लथपथ थी। इस इलाके के कई लोगों से मैंने इस घटना का विवरण पूछा। वे बताते हैं कि डोटियाल की खाल को कई जगह से हाथी ने सूँड से पकड़कर खींच लिया था।

छापावाला में भाभर घास का कटान हो रहा था। आदमियों के साथ औरतें

भी काम पर थीं। तीन औरतों ने घास के गट्ठरों को सिर पर लिया और डिपो की ओर चल दीं। बोझ ऐसी लापरवाही से बाँधे गये थे कि लटकती हुई घास उनके चेहरों के आगे आ गयी थी। उन्हें काम चलाऊ रास्ता तो दीख ही रहा था, इसलिए वे आगे बढ़ती गयीं। रास्ता पहाड़ी था। पानी की तलाश में एक हाथी नीचे जा रहा था। मोड़ पर उसकी इन औरतों से टक्कर हो गयी। इन्हें हाथी दीखा ही नहीं। उसने एक औरत को मुक्का मारा। वह परे जा पड़ी। पैर से दबाकर हाथी ने निश्चय कर लिया कि वह मर गयी है; फिर अपने रास्ते चला गया।

फसल खाने के लिए हाथियों का झुण्ड खेत में चला गया था। फार्म के मालिक ने छर्रों से घायल कर के हाथियों को भगा दिया। जिस दन्तुर को छर्रे लगे थे वह बदला लेने की ताक में था। जंगल में उसे जो पहला आदमी मिला उसका पीछा करके उसने उसे पकड़ लिया और सूँड में उठाकर पटक दिया।

ये बुद्धिमान प्राणी मनुष्य और राइफल को पहिचानते हैं, इसलिए इन्सान पर सामान्यतया हमला करने का साहस नहीं करते। अचकचरे शिकारियों की गोली द्वारा घायल होकर ये भी गोली की तेज़ी से झपटते हैं। अफ्रीका में चार चौर-आखेटक हाथीदाँत की तलाश में घूम रहे थे। उन्हें समुन्नत उद्दन्तों वाले हाथियों का एक झुण्ड चरता नज़र आया। नज़दीक के हाथी पर एक शिकारी ने गोली चलायी। गरजता हुआ सात टन का वह प्रति-वैरी इन पर लपका। चारों शिकारियों ने दबादब उस पर गोलियाँ दागनी शुरू कर दीं। उसकी दर्दभरी चिंघाड़ सुनकर सारा झुण्ड हमला करने लगा। भारी टैंकों की टुकड़ी के समान उन्होंने शिकारियों पर धावा बोल दिया। बचने का कोई मार्ग नहीं था। चारों शिकारी पकड़े गये। उनकी लाशों से पता चलता था कि हाथियों ने किस बेरहमी से खून का बदला खून से लिया था। पहला हाथी जो मर गया था उसकी देह में गोली के चौंतीस निशान थे।

उड़ीसा में फूलबनी जिले के चकापाड़ा फिरका वाले घने जंगलों में एक उन्मत्त हाथी द्वारा एक पखवाड़े में बीस व्यक्तियों को मार डालने का समाचार सुनने में आया था। आदमियों के अलावा उसने कुछ पशु भी मारे थे। फलस्वरूप, फूलबनी के पुलिस सुपरिंटेण्डेण्ट के नेतृत्व में पुलिस का एक शिकारी-दल हत्यारे को मारने के उद्देश्य से जंगल में गया। यह दल जब उसकी तलाश में आगे बढ़ रहा था तो वह अचानक सामने आ गया। दल के सभी सदस्य घबराकर इधर-उधर

भाग गये। उसके हमले से सुपरिंटेण्डेण्ट और कुछ लोग घायल हो गये। दल के नेता—पुलिस सुपरिंटेण्डेण्ट—को तो अपनी जान बचाने के लिए सारी रात एक पेड़ पर बैठकर बितानी पड़ी। इस अभियान में उसे सख्त चोट आयी और इलाज के लिए उसे अस्पताल में भरती करना पड़ा। उस उन्मत्त हत्यारे को मारने के लिए अधिकारियों ने एक हज़ार रुपयों के इनाम की घोषणा कर दी थी।

प्राचीन भारत में अपराधियों को हाथियों के पैरों तले रौंदवाकर मौत के घाट उतारा जाता था। इस तरह मृत्युदण्ड देने के उदाहरण हमें इतिहास में और पुरानी प्रस्तर-मूर्तियों में मिल जाते हैं। कोणार्क के सूर्य मन्दिर के बायें द्वार के बाहर एक विशाल हाथी की प्रतिमा बनायी गयी है जिसे मनुष्य का संहार करते हुए दिखाया है। मन्दिर के निर्माता उड़ीसा के प्रतापी राजा नरसिंहदेव (१२३८-१२६४ ई०) ने अपनी प्रजा को सचेत करने के लिए यह दृश्य बनवाया था। राजा ने आज्ञा दी थी कि यदि कोई पापी मन से या कलुषित हृदय से सूर्य भगवान की अर्चना करने मन्दिर में प्रविष्ट हो तो द्वारपालक हाथी के द्वारा उसकी यह गति की जाय। कोणार्क में ही युद्ध के हाथी की एक सजीव मूर्ति है। इसने शत्रु के एक योद्धा को सूँड में उठा रखा है और उसे फेंकने ही वाला है।

भगवान बुद्ध के चचेरे भाई देवदत्त उनसे जला करते थे। ईर्ष्यावश वे उन्हें मरवा डालना चाहते थे। इसके लिए उन्होंने अनेक उपाय किये परन्तु सभी निष्फल गये। तब उन्हें मारने के लिए एक मतवाला हाथी छोड़ा गया। देवदत्त की आशा के विपरीत, भगवान बुद्ध के समीप पहुँचकर वह सहम कर खड़ा हो गया और उनके चरणों में नतमस्तक हो गया। अजन्ता के भित्ति-चित्रों में एक कलाकार ने बड़े मार्मिक ढंग से इस घटना को अंकित किया है। श्रीकृष्ण की लीलाओं में वर्णन किया जाता है कि उन्हें मारने के लिए भी एक हाथी भेजा गया था।

दिल्ली के अफ़गान शासक सिकन्दर लोदी ने हुक्म दिया था कि सन्त कबीर को हाथियों के पैरों तले कुचल दिया जाय। राम के उपासक कबीरजी के पास जब जंगली हाथी पहुँचे तो वे सीधी-सादी भेड़ों के समान नतमस्तक हो गये। सन्त के सामने वे घुटने टेककर बैठ गये।

हाथी यद्यपि महान बलशाली प्राणी है जो मनुष्य को आसानी से मार डालता है, परन्तु उसके दर्प को भी चूर करने वाला वनराज सिंह है। उसके आक्रमण के सामने वह भी दयनीय स्थिति में चुपचाप धरती पर सिमटकर बैठ जाता है।

कोणार्क के मन्दिर में यह दृश्य विशाल पत्थरों को घड़ कर बड़ी सजीवता से मूर्तिमान् किया गया है। हाथी की सूँड में एक आदमी मरा पड़ा है। सम्भवत: यह उसका महावत है जिसे उसने अपनी उन्मत्त अवस्था में मार दिया है। हाथी की साज-सज्जा से पता चलता है कि वह किसी समारोह के लिए सजाया गया है।

बच्चों से प्यार

बड़े जानवरों में हाथी में सबसे अधिक बुद्धि और पारिवारिक भावना देखी जाती है। यह लगभग मनुष्य जैसा ही आचरण करता है। अनेक बार तो उसका बर्ताव इन्सान से भी ज़्यादा अच्छा होता है, खासकर बच्चों के मामले में।

अफ्रीका में एक मौके पर एक हथिनी को अपने एक-दो दिन के मरे हुए बच्चे को ले जाते हुए देखा गया था। वायलिन के समान उसने इसे अपने जबड़े और कन्धे पर रखा हुआ था। जब कभी उसे खाना या पीना होता था, वह रुक जाती थी और उसे नीचे रख देती थी। एक उद्दन्त और सूँड से वह उसे फिर उठा लेती थी। सारा दिन उसने इसे इसी तरह ऊपर उठाये रखा।

हाथी के शिशु प्रेम का एक अन्य उदाहरण लान्स कोर्पोरल वाटालेमायो ने रिकॉर्ड किया है। क्वीन एलिज़बेथ पार्क में गश्त करते हुए उन्होंने एक हाथी की असाधारण चीख सुनी। कुल दो सौ गज़ की दूरी पर उन्होंने एक हाथी को देखा जिससे छह या सात गज़ की दूरी पर एक भूखा सिंह और सिंहनी लेटे थे और ज़ोर से हाँफ रहे थे। उनके मुँह से लार टपक रही थी। हाथी भयावह आक्रमण कर रहा था, इस लिए वे अधिक नज़दीक नहीं गये। डेढ़ घण्टे वे वहीं खड़े रहे। सारे समय हाथी दुश्मनों को भगाने की कोशिश में कभी आगे बढ़ता और कभी पीछे हटता।

अगले दिन वे फिर उधर ही गश्त पर निकले। अब तक हाथी बहुत थक चुका था और सिंह उसके बिलकुल पास पहुँच गये थे, मानो वे एक ही परिवार के सदस्य हों। नज़दीक से देखने पर पता चला कि हथिनी ने अपने मरे हुए बच्चे को पेड़ की शाखा के नीचे छिपा रखा है। तीन दिन बाद सिंह तो वहाँ से चले गये पर हथिनी छह दिन के बाद गयी। मरे हुए बच्चे को उसी तरह छोड़ गयी।

हथिनी को उसके बच्चे से अलग करने का दृश्य हृयद-विदारक होता है। नन्हा शिशु बार-बार चीख-पुकार करता है। उसका यह विरोध और क्रन्दन बड़ा

कारुणिक लगता है। माँ की ज़ोरदार चिंघाड़ों में क्रोध और वेदना के साथ-साथ उसकी कारुणिक पुकारों में सहानुभूति पाने की आशा भी होती है। माँ को मालूम भी हो कि उसका दुलारा पास ही में कहीं बँधा है, परन्तु यदि आँखों से ओझल है तो वह चीख-पुकार करने लगती है।

पालतू हाथी अपने पालकों के प्रति अधिकतर स्नेह और सहृदयता का वर्ताव करते हैं। छोटे बच्चों का तो उनसे बेहद लगाव हो जाता है। भारत-भूटान की सीमा के जंगलों से पकड़े गये एक बरस की उम्र के एक हस्ति-शावक को अमेरिका के सेण्ट लुई चिड़ियाघर भेजना था। बच्चे का नाम ज्योति था। कलकत्ते के दमदम हवाई अड्डे पर उसे एयर-इण्डिया हवाई जहाज़ पर चढ़ाया जा रहा था। उसे विदाई देने वालों में छह बरस का एक बच्चा भी था जो ज्योति के मालिक का बेटा था। दोनों बच्चों में बेहद दोस्ती थी और वे अपना अधिकांश समय एक साथ गुज़ारा करते थे।

जब ज्योति के पिंजरे को धकेलकर हवाई जहाज़ पर ले जाया जा रहा था तब वह अपनी सूँड निकालकर बार-बार अपने साथी का हाथ पकड़ लेता और उसे अपनी ओर खींचने की कोशिश करता। पिंजरे के दरवाज़े के पास खड़े हस्ति-शावक की आँखें भर आयीं, उधर लड़के की आँखों से टपटप आँसू गिरने लगे। विदाई की घड़ी आ गयी। दरवाज़ा बन्द कर दिया गया। क्रोध और विदाई का दु:ख प्रकट करने के लिए ज्योति ज़ोर से चिंघाड़ उठा। पर कुछ ही क्षणों में एयर-इण्डिया का हवाई जहाज़ दूर निकल गया।

कमला सर्कस की एक हथिनी की घटना तो इससे भी अधिक हृदय-स्पर्शी है। इसका नाम लक्ष्मी था। जब दर्शकों की असाधारण भीड़ दरवाज़े पर जमा हो जाती तो सर्कस का मालिक दामोदरन ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाकर उन्हें हटाने की चेष्टा करता। मालिक की आवाज़ सुनकर लक्ष्मी झट वहाँ आ जाती और अपनी सूँड से हल्का-सा 'लाठी चार्ज' करके भीड़ को तितर-बितर कर देती। कई मौकों पर लक्ष्मी ने बाहर खड़े होकर बेकाबू भीड़ को सफलता से नियन्त्रित किया था।

महत्त्वपूर्ण व्यक्ति जब सर्कस देखने आते तो लक्ष्मी उनके गले में पुष्पहार डालकर स्वागत करती थी। इस काम को वह बहुत पसन्द करती थी। इसके अलावा, सर्कस के तम्बू के अन्दर होनेवाली दैनिक पूजा में वह सच्चे भक्त के

समान नियमित रूप से शामिल हुआ करती थी। ज्योंही पूजा की घण्टी बजनी शुरू होती, वह झट वहाँ आ खड़ी होती। पूजा का प्रसाद ग्रहण करने के बाद वह चली जाती।

इस अत्यन्त बुद्धिमती हथिनी ने सर्कस के तीस हाथियों में से मणि नामक एक हाथी को अपना प्रेमी वरण कर लिया। मणि भी उसे बेहद प्यार करता था। जब कभी वह किसी दूसरे हाथी को लक्ष्मी के पास खड़ा पाता तो बर्दाश्त नहीं कर पाता और विरोध स्वरूप बड़े भयंकर रूप से चिल्ला उठता।

महावतों को अभी इनकी प्रेम-लीला का पता नहीं लगा था। वे उन्हें अलग-अलग खूंटों पर बाँधने की कोशिश करते तो लक्ष्मी एक तीखी चीख में अपनी नाराज़गी जताती। आखिर, सर्कस के लोग भी इनके आपसी प्यार को समझ गये और उन्हें सदा एक साथ रखने लगे।

साल गुजरते चले गये। एक दिन, अचानक मणि के पेट में दर्द उठा। बढ़िया से बढ़िया इलाज किया गया, परन्तु कोई लाभ न हुआ। कुछ दिनों तक वह असह्य पीड़ा से कराहता रहा और अन्त में इस घातक रोग ने उसके प्राण ले लिये। लक्ष्मी उसकी शिथिल, निर्जीव देह को खड़ी देखती रही। उसकी छोटी आँखों से बहती हुई आँसुओं की धारा रुकती ही नहीं थी।

सर्कस के हर सदस्य ने मणि को अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की और तब उसका अन्तिम संस्कार विधिवत् कर दिया गया। लक्ष्मी अपने साथी के वियोग को नहीं सह सकी। वह बार-बार उसके खूंटे के स्थान पर चक्कर काटती रही।

पूजा की घण्टी बजनी शुरू हुई। सभी सदस्य धीरे-धीरे जमा हो गये। परन्तु लक्ष्मी नहीं आयी। यह पहला मौका था जब उसने घण्टी की पुकार को अनसुना कर दिया था—वह पूजा में शामिल नहीं हुई, न ही उसने पूजा का प्रसाद स्वीकार किया। उसने कुछ भी तो नहीं खाया। मणि के मरने के पन्द्रह दिन बाद वह भी मर गयी। इस तरह उसने लैला-मजनू और रोमियो-जूलियट की अमर प्रेम कहानियों की शृंखला में एक नयी कड़ी जोड़ दी।

एक उपयोगी पशु

जहाँ एक ओर हाथी फसलों को नष्ट करता है और अन्य प्रकार से मनुष्य का नुकसान करता है, वहाँ दूसरी ओर यह मनुष्य की सेवा भी करता है। दक्षिण

में धार्मिक जुलूसों और देवताओं की सवारी के जुलूसों का यह अनिवार्य अंग है। शेर के शिकार में भी यह काम आता है।

ब्रिटिश शासन के आरम्भिक काल में सड़कें बनाने और जंगल साफ़ करने के लिए हाथियों की परम आवश्यकता थी। वनों, पहाड़ों और घाटियों में, जहाँ संचार साधन नहीं होते, ये बोझ ढोने का काम देते हैं। असम के चाय बागान वाले संचार के लिए हाथी पाला करते थे। जिन नदियों पर पुल नहीं थे उन्हें पार करने के लिए भी उनका इस्तेमाल किया जाता था। चाय बागानों में कुछ बंगलों के आगे ऊँचा पोर्च बना होता था जिससे बरसात के दिनों बागानों के मालिक आराम से हाथी पर सवार हो सकें। असम और उत्तर बंगाल जैसे क्षेत्रों में प्रत्येक ज़िला अधिकारी के पास दौरे के लिए तथा सामान ले जाने के लिए हाथियों का काफ़िला रहता था।

ये वनों में लट्ठों को लुढ़काने, घसीटने या उठाकर ले जाने के कामों में लगाये जाते हैं। इस प्रयोजन के लिए राज्यों के वन-विभाग पालतू और प्रशिक्षित हाथियों को रखते हैं। एक जवान हाथी हज़ार-बारह सौ पौण्ड का वजन ले जाता है। लकड़ी के पैंतीस से आठ घन फुट नाप के एक बोझ को घसीट सकता है।

लट्ठों को उठाने और लादने का काम हाथी कुशलता, बुद्धिमत्ता और सूझ-बूझ से करते हैं। श्री सुरेश वैद ने असम के जंगलों में काम करने वाले छह हाथियों का रोचक वृत्तान्त दिया है। वे लिखते हैं—एक डीज़ल एंजिन ने जब चार वैगनों को वहाँ लाकर खड़ा कर दिया तो हाथियों का काम शुरू हो गया। तुरन्त ही एक हाथी दूसरी तरफ जाकर सब से आगे वाले वैगन के पीछे खड़ा हो गया। महावत के पैर के अँगूठे का संकेत पाकर उसने वैगन के साथ लटकते हुए लोहे के पिन को अपनी सूँड से पकड़ कर वैगन के कोने में बने हुए एक सूराख में डाल दिया। इसी प्रकार, दूसरे पिन को वैगन के दूसरे सूराख में डाल दिया। इसके बाद दूसरे दो हाथी, जो शहतीरों के ढेर के पास खड़े थे, आगे बढ़े और उन्होंने ढेर में से एक शहतीर को अपनी सूँडों में उठा लिया तथा उसे करीब बीस फुट दूर तक, सबसे आगे वाले वैगन के पास, पहुँचा दिया। यहाँ बायीं तरफ वाला हाथी तो अब भी उस शहतीर के बाँयें भाग को उसी तरह आगे धकेलता रहा, परन्तु दायीं तरफ वाला उसके दायें भाग को पैर से इस तरह दबाकर

खड़ा हो गया कि वह इंच भर भी आगे न बढ़ सके। इस प्रकार उन्होंने शहतीर को वैगन के समानान्तर कर लिया।

इतना कर चुकने पर, दोनों हाथियों ने उस वैगन में से एक-एक वल्ली उठा ली और उन्हें वैगन के सहारे तिरछा खड़ा कर दिया। यहाँ तक तो काम सरल था। अगले काम में पूरी चतुराई की ज़रूरत थी। क्योंकि अब उन्हें इस भारी शहतीर को इन दोनों वल्लियों के सहारे वैगन में चढ़ाना था। शहतीर के दोनों सिरों के नीचे सूँड डाल कर वे उसे बड़ी सावधानी से उन ढलाऊ वल्लियों पर चढ़ाने लगे। इस कठिन काम में उन्हें कितना बल और सावधानी बरतनी पड़ रही थी यह उनके कसे हुए जबड़ों से स्पष्ट पता चलता था।

शहतीर धीरे-धीरे ऊपर चढ़ता गया और अन्त में दाँतों और सूँड के सम्मिलित झटके के साथ उन्होंने उसे वैगन में पटक दिया। शहतीर के वैगन में निर्विघ्न पहुँच जाने पर हाथियों ने सन्तोष प्रकट करने के लिए अपने कान हिलाये। लेकिन अभी आखिरी काम करना बाकी था। वैगन के और नज़दीक जाकर उन्होंने उसके भीतर पड़े हुए शहतीर को लुढ़का कर लोहे के दोनों पिनों के सहारे जमा कर दिया। इस अन्तिम काम में पीछे खड़े हुए हाथी को ब्रेक का काम करना पड़ा। अपनी सूँड का गद्दा बना कर उसने शहतीर के साथ इस तरह जमा दिया कि शहतीर के तेज़ झटके खाकर भी वे दोनों पिन टूटने से बच गये। यह कार्य अत्यन्त आवश्यक था, क्योंकि शहतीर का भार लगभग एक सौ आठ मन रहा होगा।

इस सारे कार्य में दोनों हाथियों को पूर्णतया एक-दूसरे पर भरोसा करना था। शहतीर को वल्लियों पर चढ़ाते समय उसके दोनों सिरे बिलकुल समानान्तर रखने थे। कोई सिरा एक इंच भी नीचे झुका रह जाता तो वह नीचे गिर कर हाथी के पैरों को भी कुचल देता। यदि कभी एक हाथी से शहतीर का सन्तुलन बिगड़ जाता तो दूसरा हाथी अपने सिरे को उतना ही नीचे झुका देता। केवल असाधारण बुद्धि वाले हाथी ही यह समझ सकते हैं कि ऐसा कब और कैसे करना चाहिए।

इसके बाद जब दूसरा शहतीर भी इसी तरह वैगन में डाल दिया गया तो हाथियों ने उन दोनों वल्लियों को वैगन के साथ इस ढंग से खड़ा किया कि उनके सहारे चढ़ता हुआ तीसरा शहतीर उन दोनों शहतीरों के ठीक बीच में जा गिरा।

तब, उन्होंने वैगन के दोनों कोनों में लोहे के दो पिन भी लगा दिये और काम समाप्त हो गया। हाथियों का यह सारा कार्य आश्चर्यजनक तो था ही, नये दर्शकों के लिए रोमांचकारी भी।

लदान के मामले में निस्संकोच मानना पड़ेगा कि मशीन हाथी की बराबरी नहीं कर सकती। इस कार्य में जिस विचार-शक्ति की ज़रूरत होती है वह अचेतन मशीनों के पास नहीं है। फिर, इसमें समय भी कुछ अधिक नहीं लगा। शहतीरों को वैगन तक पहुँचाने में कुल मिलाकर पैंतालीस मिनट और उन्हें वैगन में लादने में तीन घण्टे लगे। इस प्रकार कुल पौने चार घण्टों में उन्होंने लगभग तेरह सौ मन शहतीरों का लदान सफलतापूर्वक कर दिया।

इन हाथियों पर बैठे हुए महावतों को भी साधारण महावतों की अपेक्षा अधिक होशियार मानना होगा। हाथियों पर उनका नियन्त्रण अद्‌भुत था। अंकुश का प्रयोग तो उन्हें करना ही नहीं पड़ा। आदेश सूचक शब्दों को भी बहुत कम बोलना पड़ा। बहुधा तो वे केवल अपने पैर के अँगूठे से ही सब काम ले लेते थे। इस सफलता में महावत को यदि साठ प्रतिशत श्रेय दिया जा सकता है तो हाथी को चालीस प्रतिशत। इनके मालिक इन्हें संसार के सर्वोत्तम हाथी मानते थे।

इनके सम्पूर्ण परिश्रम का अधिकतर बोझ उद्दन्तों के सिरों पर ही पड़ता है। इसलिए, वे प्रतिवर्ष छह इंच घिस जाते हैं। इस हानि को रोकने के उद्देश्य से इन्हें हर साल छह महीने की छुट्टी दी जाती है। इस अवधि में घिसे हुए सिरे बहुत हद तक पूरे हो जाते हैं। तो भी सत्य यह है कि वे जितने घिसते हैं उतने पूर्ण नहीं हो पाते और पन्द्रह वर्ष में ही इतने घिस जाते हैं कि केवल बटन सरीखे दिखायी पड़ते हैं। ऐसे हाथियों को लदान के काम से हटा लिया जाता है और केवल घसीटने का काम ही उनके ज़िम्मे रह जाता है।

जंगल में बोझ उठाने, लट्ठों को लादने और घसीटने के लिए हथिनियों की अपेक्षा हाथी अधिक उपयोगी सिद्ध होते हैं, क्योंकि इस प्रकार के कार्यों के लिए उनमें आवश्यक बल होता है।

लगातार तीन घण्टों से अधिक उनको काम पर नहीं लगाया जाता। एक स्वस्थ हाथी सुबह व शाम की शीतल वेला में छह-सात घण्टे काम कर सकता है। बोझ उठाये हुए हाथी को दिन में दस मील से अधिक नहीं चलाना चाहिए

और हर हालत में उसे सूरज की गरमी तथा लू से बचाना चाहिए।

पुलों के निर्माण में हाथी बड़े-बड़े शहतीरों और लोहे के ढाँचों को उठाने में महत्वपूर्ण योगदान करते हैं। किसी नदी पर पुल न बना हो और उसके पार सामान पहुँचाना हो तो शहतीरों को बाँध कर बनाये बेड़े पर सामान रख दिया जाता है। हाथी इसे पानी में खींचते या धकेलते हुए नदी के पार पहुँचा देते हैं। सड़क कूटने के रोलरों को हाथी बखूबी खींच लेता है।

पेट्रोल और डीज़ल से चलने वाली भारी लॉरियाँ अब घने जंगलों के अन्दर पहुँच कर लट्ठों का ढुलान करने लगी हैं। इससे हाथियों की कद्र कम होती जा रही है। बर्मा के उदाहरण से यह स्पष्ट है। सागवान के जंगलों में काम करने वाले हाथियों की संख्या वहाँ १९३८ में छह हज़ार थी जो १९६४ में डेढ़ हज़ार ही रह गयी।

दिसम्बर १९६८ में प्रकाशित एक समाचार से पता चलता है कि थाईलैण्ड में अब भी हाथी पुलिस की सेवा में नियुक्त हैं। उत्तर-पूर्व थाईलैण्ड के सुरीन नामक स्थान में हाथियों के वार्षिक समारोह को देखने के लिए बीस हज़ार से अधिक लोगों की भीड़ जमा हो गयी थी। उसे नियंत्रित करने के लिए मिलिटरी पुलिस हाथियों पर सवार थी।

हाथियों की देखभाल में बड़ी सावधानी की ज़रूरत होती है। उन्हें मल-मल कर नहलाया जाता है और अच्छा आहार दिया जाता है। देखभाल के लिए प्रत्येक हाथी पर दो आदमी रहते हैं। बीस साल से कम आयु के हाथी पर एक आदमी रहता है। उनके साथ जितना अच्छा व्यवहार किया जाता है वे उतनी ही अधिक मनुष्य की सेवा करते हैं।

घास-पात खाने वाले पालतू पशुओं और हाथियों के स्वभाव में एक बड़ा अन्तर यह है कि पालतू बन जाने पर भी हाथी के मन में जंगल की ओर लौट जाने की इच्छा जड़ से नहीं मिट पाती। यह इच्छा गजशाला में पैदा हुए हाथियों के मन में भी किसी समय जागृत हो सकती है। इसलिए हाथियों को कोमल, सभ्य और सहानुभूति पूर्ण बरताव द्वारा स्नेहपूर्वक वश में करना आवश्यक होता है। काम पर जाने से पहले और काम से लौटने के बाद उनके शरीर की जाँच करके देखा जाता है कि कहीं गुमड़ियाँ (galls) तो नहीं बनी हुई है। सूँड और पैर कहीं से कट कर ज़ख्मी तो नहीं हो गये या उन पर छोटी-मोटी खरोंचें तो

नहीं पड़ गयीं। काठियाँ ठीक तरह न बैठती हों तो पीठ पर जख्म बन जाते हैं।

काम के अनुसार हाथियों पर दो किस्म की काठियाँ लगायी जाती हैं—(१) बोझ खींचने में सहायक, और (२) बोझ लादने में उपयोगी। बोझ घसीटने के लिए सामान्य संनाह (harness) में बोरियों का बना एक नमदा होता है जो पीठ पर रखकर बाँध दिया जाता है। इसके ऊपर दो लट्ठे टिकाये जाते हैं जिनके अन्दर लोहे की जंजीरों को टिकाने के लिए नालीदार गढ़े बने होते हैं। चमड़े का एक पटा छाती पर आता है जो जंजीरों को अपनी जगह पर टिकाये रखता है। काठी के जो भाग हाथी की खाल के सम्पर्क में आते हैं उन्हें सूअर की चरबी से पोत दिया जाता है और उन्हें बालु-कणों से मुक्त रखा जाता है।

आमतौर पर अगली टाँगों में लोहे की या बेंत की बेड़ियाँ डाल कर हाथियों को बाँधा जाता है। बेंत की बेड़ियाँ सामान्यतया प्रशिक्षण पाते हुए बच्चों के पैरों में बाँधते हैं। एक टाँग में लम्बी जंजीर बाँध कर हाथियों को किसी पेड़ के साथ बाँधना भी आम रिवाज है।

हाथियों के निवास-स्थान को गजशाला कहते हैं। गजशालाओं के फर्श ईंटों के बने होते हैं और भूमि की सतह से कुछ उठे रहते हैं जिससे पेशाब और पानी नालियों से बह जाय। गजशालाओं की छत फूस के छप्पर की या खपरैल की होती हैं। गजशालाओं में सूर्य की सीधी किरणों से हाथियों को बचाया जाता है।

हाथी की दिनचर्या में स्नान महत्वपूर्ण है। जल-क्रीड़ा में हाथी को बहुत आनन्द आता है। जब वह पानी में स्नान के लिए उतर जाता है तो उसकी सूँड और रीढ़ के अलावा कोई अंग नहीं दिखायी देता। पहले कुछ देर वह एक करवट लेटता है और तब दूसरी करवट। इस तरह लोट लगा चुकने पर महावत उसके सिर, सूँड और रीढ़ पर क्रमशः पानी डाल-डाल कर उन्हें मलता जाता है। उसके बाद टाँगों की बारी आती है। पीठ, पेट और छाती को भी इसी तरह पानी के साथ मल कर साफ़ किया जाता है। इस सफाई में पैर के नाखूनों और उनके बीच की तहों को भी महावत सावधानी से साफ़ कर देता है।

इतने से हाथी तरोताज़ा और प्रसन्न हो जाता है। फिर वह गहरे पानी में तैरने या दूसरे हाथियों के साथ जल-क्रीड़ा में मगन हो जाता है। पालतू हाथियों को स्नान का यह आनन्द दिन में दो बार मिलता है। एक तो सुबह छह बजे, जब

रात भर चरने के वाद उन्हें जंगल से वापस लाया जाता है और फिर तीसरे पहर जव वे काम करके लौटते हैं—कोई पाँच वजे।

जंगली हाथी भी घण्टों पानी में स्नान करते हैं। पानी थोड़ा है तो उसमें खड़े-खड़े ही घण्टों गुज़ार देते हैं। सूँड में पानी को भर कर वदन के ऊपर तथा दायें और वायें फेंकते रहते हैं। मैंने देखा है कि चाहे कितना ही स्वच्छ पानी नदी में वह रहा हो यह उसके तल में से कीचड़ या रेत को सूँड में लेकर अपने ऊपर फेंकता है। इसका कारण यह है कि वदन पर पड़ी हुई मिट्टी में देर तक नमी वनी रहती है जो उसे ठंडक देती रहती है। एक ही जगह वह स्थिर होकर नहीं खड़ा रह सकता। वार-वार वह अपनी स्थिति को वदलता रहता है।

कुछ हाथी पानी में लेट जाते हैं और घण्टों पड़े रहते है। साँस लेने के लिए सूँड का सिरा वाहर रखते हैं।

वच्चे पानी में खूव खुश होते हैं। नन्हें वच्चों को नहलाने के लिए उनकी माताएँ उन्हें सूँड में उठाकर पानी में दायें-वायें फेरती हैं जैसे कि कपड़ों को धो रही हों। मई के महीने में एक दिन मैंने देखा कि पानी के दो जोहड़ों की ओर जंगली हाथी वढ़ रहे थे। कुण्ड पर पहुँच कर छोटे वच्चों ने ज़रा-सा पानी पिया। फिर यह टोली दूसरे कुण्ड पर पहुँची। वहाँ दो बच्चे तो पानी में लोट गये, पानी में खूव डुवकियाँ लगाने लगे। साढ़े दस वजे की धूप तेज़ हो गयी थी। पाँच मिनट स्नान करके ये चरने निकल गये। वड़ों ने स्नान नहीं किया। उनके पेट तक पानी था। वे पानी में घुस कर कुण्ड के दूसरे पार जंगल में चले गये। दूसरे कुण्ड में वारह हाथियों का एक झुण्ड गाढ़ा कीचड़ अपनी पीठ पर फेंकने में लगा था। कोई दो घण्टे तक हाथी यहाँ पंक स्नान करते रहे। हाथी को पानी में खेलना उतना नहीं भाता जितना कीचड़ में।

डेढ़ वजे फिर मैंने इस झुण्ड को एक अन्य जोहड़ पर देखा। सारा झुण्ड कुण्ड में घुस गया। एक बच्चा सिर को और कभी सूँड को पानी में पटक-पटक कर नहा रहा था। इससे सारा कुण्ड मथा गया। पानी गंदला हो गया और कुण्ड से वाहर वहने लगा।

दो दिन से हम जिस मद्दी हाथी पर गौर कर रहे थे वह आज शाम चार वजे ही शालवन से निकल आया था। उसका मद वह कर नीचे तक आ गया था। झुण्ड के अन्य हाथियों से यह असाधारण वरताव करता था। सभी हाथी अभी

जंगल के अन्दर थे। कुछ ही मिनटों में यह नदी की ओर चल दिया और सीधा पानी में जा घुसा। सूँड में पानी भर कर वह अपने दानों पर, मुख पर और बाजुओं पर फेंकने लगा। आधा घण्टा स्नान करने के बाद यह ठण्डा और तरो-ताज़ा हो गया। उसका मद धुल गया था। शरीर चमकीला काला बन गया था। उसने फिर गरम रेत सूँड में भर कर फेंकी। फिर यकायक झुका, दोनों उद्दन्तों को तट की बालू में गाड़ दिया, मस्तक से ज़ोर लगाया जिससे मद की ग्रन्थियों पर दबाव पड़ा और मद बहना शुरू हो गया।

हाथी की एशियाई और अफ्रीकी दोनों जातियाँ कुशल तैराक हैं। एक मील प्रति घण्टे की रफ्तार से ये पानी को काट लेती हैं। ढाका और बैरकपुर के बीच में गंगा और ब्रह्मपुत्र की संयुक्त धारा में हाथियों को लगातार छह घण्टे तक तैरते देखा गया है। यहाँ पानी इतना गहरा है कि नदी के तल में उनके पैर भी नहीं छू पाते। पिछली दो टाँगें बँधी होने पर भी एक हाथी एक बार तीन सौ गज़ चौड़ी नदी को तैर कर पार कर गया था।

तैरते समय इनका शरीर पानी के अन्दर डूबा रहता है। सूँड बाहर सीधी तन कर खड़ी होती है जिससे वह साँस लेता रहता है। गहरे पानी में तैरते हुए हाथी की सूँड के सिरे को देख कर अफ्रीका के आदिवासी अपनी डोंगियों को उधर दौड़ाते हैं। पास पहुँचकर वे भालों से सूँड पर हमला करते हैं। इस तरह ये पानी के अंदर ही हाथी का शिकार कर लेते हैं।

क्योंकि हाथी को तैरने और पानी में लोट लगाने में बड़ा मज़ा आता है इस-लिए जब उससे नदी पार करवायी जा रही हो तो सवारियों को बड़ा खतरा रहता है कि कहीं वह पानी में लोट न लगाने लगे। महावत तब बार-बार अंकुश मार कर उसके इरादों को बदलता है।

६. पकड़ना और सधाना

हाथियों को पकड़ना

हाथियों को पकड़ने और उन्हें सिखाने का पहला उल्लेख ईस्वी पूर्व पाँचवीं शती में उपलव्ध होता है। मेगस्थनीज (२०० ईस्वी पूर्व), स्टैवो (१३० ईस्वी पश्चात्) और इण्डिकोप्लेन्स्टेस (६०० ईस्वी पश्चात्)—इन तीनों ग्रीक लेखकों ने इस विषय पर लिखा है। हैदरअली ने सत्रहवीं शताव्दी के आरम्भ में इस कला को प्रोत्साहन दिया था। अपनी सेना को सुदृढ़ वनाने के उद्देश्य से उसने हाथियों का विशाल समूह जुटाना चाहा था। मैसूर से पन्द्रह मील दूर काकनकोट के वनों में उसने पहली बार हाथी पकड़ने का अभियान किया था। वीसवीं शती के आरम्भ तक हाथियों को पकड़ना लाभदायक व्यवसाय रहा। उसके बाद इसका ह्रास होने लगा।

भारत के वहुत से वनों में जंगली हाथियों को पकड़ने का काम होता है। इस अभियान का मौसम वरसात के वाद शुरू होता है। पकड़ने की मुख्य रूप से निम्नलिखित विधियाँ प्रचलित हैं :

१. गढ़े में गिराना

२. खेदा—नदी का खेदा
भूमि का खेदा

३. मेला शिकार

४. नमक के स्थानों या पानी के जोहड़ों के चारों ओर गाड़े गये खम्भों के अन्दर पकड़ना।

अव प्रत्येक का संक्षिप्त विवरण यहाँ देते हैं।

गढ़ों में पकड़ना

दूसरे तरीकों की तुलना में यह कम खर्चीला है। इसलिए बहुत-सी जगहों पर इसी तरीके से हाथी पकड़े जाते हैं। हाथियों के आने-जाने के रास्ते जहाँ मिलते हैं उसके चारों ओर गढ़े खोदे जाते हैं। प्रत्येक मार्ग पर गढ़ों को इस तरह खोदा

जाता है कि कई त्रिभुजों का एक समूह बन जाता है। गढ़ों की गहराई बारह से पन्द्रह फुट रखी जाती है। भूमि की सतह पर ये बारह फुट लम्बे और बारह फुट चौड़े होते हैं तथा तल में नौ फुट लम्बे और नौ फुट चौड़े। इससे गढ़े की दीवारें ढलवाँ बन जाती हैं। इससे, अन्दर गिरते समय हाथियों की हड्डियाँ टूटने का खतरा कम हो जाता है। चोट से बचाने के लिए गढ़ों के तल से छह फुट की ऊँचाई तक झाड़ियों की टहनियाँ और घास भर दी जाती है। पूरी सावधानी बरतने के बावजूद भी गढ़ों में गिरने से अनेक हाथी क्षत-विक्षत हो जाते हैं और कई बार उनके अंगभंग हो जाते हैं।

इस नाप के गढ़ों में हाथी पूरा समा तो जाता है परन्तु इनमें गिर जाने पर वह हिल-डुल नहीं सकता, और न ही गढ़ों से बाहर निकल सकता है।

बाँस की खपच्चियों से इन्हें छत दिया जाता हैं। फिर पत्तियों से ढक कर मिट्टी की हलकी तह छिड़क दी जाती है। इसके ऊपर घास, बाँस के पत्ते या आस-पास जो भी ऐसी चीज़ मिले उसे इस तरह बिछा देते हैं कि वह जगह साथ की जगह के समान ही नज़र आती है। यह सब हाथियों को धोखा देने के उद्देश्य से किया जाता है।

हर रोज़ कुछ आदमी गढ़ों का निरीक्षण करने जाते हैं। उस क्षेत्र में उन्हें बार-बार देखते रहने से हाथियों के मन में उनके प्रति सन्देह नहीं रहता। गढ़े में गिरते ही हाथी चिंघाड़ना शुरू करता है। यह चिंघाड़ एक मील दूर से या अधिक दूर से भी सुनायी देती है। तुरन्त कुशल महावत घटनास्थल पर पहुँच जाते हैं। वे हाथी के गले में और पिछले एक पैर में रस्से बाँध देते हैं। अब मोटी-मोटी लकड़ियों से गढ़े को पाटना शुरू करते हैं जिससे उन पर चढ़ कर हाथी गढ़े से बाहर निकल आये।

कुमकियों (सधाये हुए हाथियों) के घेरे में इन्हें सबसे नज़दीक के क्राल में ले जाया जाता है। मज़बूत लकड़ी की दीवार से बनाये बीस फुट लम्बे और बीस फुट चौड़े घेरे को क्राल कहते हैं। इसके नीचे बढ़िया फर्श होता है और इसमें पेशाब तथा पानी की निकासी की ठीक व्यवस्था होती है।

यहाँ हाथी को खिलाया जाता है और भरपूर पानी दिया जाता है। महावत के प्रति हाथी का विश्वास बढ़ता जाता है। इसके विपरीत, पहले जमाने में नये पकड़े गये हाथी को भोजन न देकर कमज़ोर किया जाता था जिससे वह हताश

अनुभव करने लगता था और लाचारी में पूर्णतया आत्म-समर्पण कर देता था।

कम उम्र (चार-पाँच साल) के बच्चे लगभग दस दिन में इतना हिल जाते हैं कि महावत के हाथ से भोजन स्वीकार करने लगते हैं। इन पर इतना भरोसा हो जाता है कि एक या दो पालतू हाथियों के संरक्षण के अन्दर इन्हें बाहर घुमाने और चराने के लिए ले जाया जा सकता है। अठारह से बीस साल के हाथी कहीं एक महीने के बाद घुटने टेकते है। प्रौढ़ हाथियों को कम से कम अठारह महीने लग जाते हैं और तब वे कुछ उपयोगी कार्य पर लगाये जा सकते हैं।

हाथी की सूँड बड़ी संवेदनशील होती है। यदि वह सूँड पर महावत से थपकी लेना स्वीकार कर लेता है तो यह इस बात का संकेत होता है कि उसका जंगलीपन खतम हो गया है।

मद्रास राज्य में पचास साल से ऊपर के हाथी बिलकुल नहीं पकड़े जाते। यदि वे फंस भी जायें तो उन्हें तुरन्त छोड़ दिया जाता है। छोटे बच्चों को भी सामान्यतया पकड़ना पसन्द नहीं किया जाता। इसका एकमात्र कारण आर्थिक है। जब तक वे पन्द्रह साल के नहीं हो जाते उनसे बोझ उठाने का या कोई दूसरा कमाने का काम तो लिया नहीं जा सकता और इस बीच उन्हें खिलाने-पिलाने का भारी बोझ उठाना पड़ता है। इसलिए यदि बच्चे पकड़ में आ जायें तो उन्हें छोड़ दिया जाता है। अठारह और पच्चीस बरस की बीच की आयु के हाथी पकड़े जाने के लिए सर्वोत्तम सिद्ध होते हैं।

रामायण कालीन भारत में भी गढ़ों में हाथी पकड़ने का उल्लेख मिलता है। वाल्मीकि ने लिखा है कि रात के समय बहुत से लोग मशाले लेकर वन में हाथियों का पीछा करते हैं और उन्हें तिनकों से आच्छादित गढ़ों में खदेड़ देते हैं।

खेदा

हाथी को पकड़ने का सबसे अधिक जाना-पहिचाना तरीका खेदा (stockade) है जिसमें हाथियों के झुण्डों को खदेड़ कर पकड़ा जाता है। खेदा एक प्रकार का आखेट है और सम्भवतः इससे बड़ा शिकार दुनिया में दूसरा नहीं होगा। एक बारी के खेदे में लाखों रुपयों का खर्च आ जाता है और अब तक कभी भी एक खेदे में सौ गज नहीं पकड़े गये।

उड़ीसा के राजा नरसिंहदेव तेरहवीं शताब्दी में खेदा पद्धति से जंगली हाथियों को पकड़वाया करते थे। कोणार्क मन्दिर की दीवारों पर खेदे की विविध क्रियाएँ मूर्तिमान् की गयी हैं। वनगजों को खदेड़ने वाले शिकारी दल के कुछ सदस्य तो कुनकियों पर और कुछ घोड़ों पर सवार हैं। कुछ लोग पैदल ही इस अभियान में शरीक हो गये हैं। ढोल पीट कर और तुरही वजाकर हाथियों को खदेड़ा जा रहा है। झुण्ड में प्रायः सभी धुई हैं जिनके साथ छोटे वच्चे हैं। इन्हें खदेड़ कर एक घेरे में पहुँचा दिया गया है जो लकड़ी के खम्भों को गाड़ कर वनाया गया है। खम्भों के साथ आड़े रुख वल्लियाँ वाँध कर घेरे को अधिक मज़वूत वना लिया गया है।

अठारहवीं शताब्दी के मध्य हैदरअली ने पहला खेदा किया था। ब्रिटिश शासन में कर्नल पियर्सन ने उन्नीसवीं शती के मध्य में दूसरा प्रयत्न किया। ये दोनों प्रयत्न असफल रहे। पहला सफल खेदा जी० पी० सेण्डर्सन ने १८७३ में किया जिसमें तिरपन हाथी पकड़े गये थे। यह कहा जा सकता है कि मैसूर के खेदे की नींव उसी वर्ष पड़ी। तव से वहाँ समय-समय पर खेदे द्वारा हाथी पकड़े जा रहे हैं।

१९५० के खेदे में मैसूर राज्य के वन-विभाग को ढाई लाख रुपये खर्च करने पड़े थे। इसमें कुल सत्तर हाथी पकड़े गये थे। इसमें एक हाथी के पकड़ने का खर्च साढ़े तीन हज़ार से अधिक बैठा था।

हरिद्वार के जंगलों में हाथियों को पकड़ने के वहुत कम प्रयत्न किये गये हैं। प्राकृतिक कठिनाइयाँ होने से सफलता भी कम मिलती है। १८९९-१९०० की शीत ऋतु के खेदे में कुल सात गज हाथ आये थे। ज्वालापुर के रांगड़ों (मुसलमान राजपूत) ने मुझे वताया है कि उनके पुरखे जब इन जंगलों के मालिक थे तो वे लोग हाथियों को पकड़ने और उन्हें वेचने का काम करते थे। पण्डों की वहियों में ऐसा उल्लेख मिलता है कि हाथियों को खरीदने की गरज़ से कुछ राजा हरिद्वार आया करते थे। शुभ अवसरों पर हाथियों को दान देने की प्रथा संवत् १८७६ तक हरिद्वार में मिल जाती है। श्रवणनाथ मठ में मुझे एक शिलालेख मिला है। मठ के संस्थापक ने जव महादेव जी तथा गंगा जी का मन्दिर बनवाया था तो दूसरी चीज़ों के साथ पाँच हाथी भी दान में दिये थे।

किसी ज़माने में यह लाभदायक धन्धा था। उदाहरणार्थ १९४८ के खेदे में

पकड़े गये पैंतीस हाथियों की विक्री से छियासठ हज़ार रुपये आ गये थे। १९४९ में पकड़े गये उनतालीस गजों में से पैंतीस की विक्री से एक लाख सैंतालीस हज़ार तीन सौ सत्तर रुपये मिल गये थे। यह एक रिकॉर्ड था। इससे अधिक कीमत पर खेदे में पकड़े हुए हाथी कभी नहीं विके। १९५४ में इतनी मन्दी आ गयी कि पकड़े गये अड़सठ दन्ती मिट्टी के भाव वेचने पड़े। शानदार दन्ती को कुल पाँच सौ रुपये में नीलाम करना पड़ा था। शायद यही कारण था कि मैसूर में खेदे के प्रति निराशा हो गयी थी और यह छोड़ दिया गया था।

कुल मिला कर अव तक चौंतीस खेदे किये जा चुके हैं जिनमें १८७३ जंगली हाथी पकड़े जा चुके हैं। १९६० के वाद अन्तिम खेदा जनवरी १९६७ में हुआ था। खेदे के लिए आमतौर पर ऐसे स्थान चुने जाते हैं जहाँ हाथियों के झुण्ड पर्याप्त संख्या में उपलब्ध हों। हाथियों को खेदे द्वारा घेर कर पकड़ने से पहले मैसूर में भी गढ़े में गिरा कर हाथी पकड़े जाते थे। दक्षिण भारत के कुछ भागों में अव भी यह पद्धति व्यवहार में है। निर्दयतापूर्ण कार्य समझ कर मैसूर में इसे विलकुल वन्द कर दिया गया है। मैसूर में खेदा शुरू करने से पहले वंगाल में इस पद्धति द्वारा शताब्दियों पहले हाथी पकड़े जा रहे थे। दोनों प्रदेशों की पद्धतियों की वारीकियों में वहुत अन्तर थे। मुख्य भेद यह है कि वंगाल में हाथियों को पहले जंगलों में घेर लिया जाता है। उसके वाद पास में लकड़ी का घेरा खड़ा किया जाता है। तव हाथी इसमें खदेड़े जाते हैं और पकड़े जाते हैं। इस प्रकार लकड़ी के घेरे एक जगह पर स्थिर नहीं होते, परन्तु एक जगह से दूसरी जगह पर आवश्यकतानुसार वदल दिये जाते हैं। मैसूर में निश्चित जगहों पर घेरे स्थापित रहते हैं। ये इस वात को ध्यान में रख कर वनाये जाते हैं कि दर्शक खेदे के सभी क्रिया-कलापों को काफ़ी पास से देख सकें।

खेदे के लिए सर्वोत्तम मौसम दिसम्वर या जनवरी है जव कि जंगल गीला नहीं होता, पानी पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होता है और वन में आग लगने का अन्देशा भी अधिक नहीं होता। खेदे का प्राथमिक उद्देश्य तो हाथियों को पकड़ कर वन-सेवा में लगाना है।

मैसूर डिविज़न में दो जगहों में खेदा होता है : चामराज नगर तालुक में बूढ़ीपड़गा और हेग्गाडा देवाना काटे तालुक में काकनकोटे। इनमें काकनकोटे अधिक आकर्षक स्थल है क्योंकि यहाँ नदी का खेदा सम्पन्न होता है। मैसूर शहर

से काकनकोटे पचास मील दूर वनशृंखला का मुख्यालय है।

हाथियों का झुण्ड जब नज़र आता है तो उसकी गतिविधियों को सावधानी से देखा जाता है। हाथियों को मनुष्यों की उपस्थिति का भान नहीं होने दिया जाता। खेदे के घेरे के स्थान से यह झुण्ड सात-आठ मील दूर भी हो सकता है। जब यह झुण्ड घेरे की ओर बढ़ता है तो इसकी गतिविधियों पर इस सावधानी से गौर किया जाता है कि हाथियों को पता नहीं चले। इसी काम के लिए भरती किये गये आदमियों के घेरे में यह बढ़ रहा होता है। आदमी से आदमी की दूरी लगभग साठ फीट रहती है। दिन में तो ये धुआं किये रखते हैं और रात को आग जलाये रहते हैं। फटे हुए बाँस के पटाकों से ये लैस रहते हैं। हाथी घेरे से बाहर निकलने का रुख करें तो इन्हें धरती पर पटक-पटक कर शोर मचाते रहते हैं और उन्हें वापिस भगा देते हैं। धीरे-धीरे घेरा छोटा करते रहते हैं। खेदे के अन्तिम दिन जब दर्शकगण अपना स्थान ग्रहण कर लेते हैं तो आदमियों की परिधि तेज़ी से सिकुड़ने लगती है और हाँके वाले बाड़े की दिशा की ओर बढ़ते हैं जिससे झुण्ड भी उधर खदेड़ा जाता है।

हाँके के दल में कुछ अफसर कुनकियों पर सवार होते हैं और शेष पैदल। कुछ खोजिये जगह-जगह पर नियुक्त रहते हैं। वे ऊँचे पेड़ों पर चढ़ कर झुण्ड की गतिविधियों को देखते रहते हैं और हाँका करने वाले दल को संकेत देते रहते हैं। बाड़े की ओर वाले हिस्से में एकदम चुप्पी रखी जाती है जिससे उधर बढ़ते हुए हाथियों को ज़रा भी आशंका न हो।

खेदे की मूल पद्धति में एक बड़े स्थान को गोल खाई खोद कर घेर लिया जाता था। यह खाई तीस फुट चौड़ी और चौबीस फुट गहरी होती थी। खुदाई में निकली मिट्टी को बाहर की ओर फेंक कर खाई की गोलाई के साथ-साथ एक सीधी दीवार खड़ी कर ली जाती थी। घेरे के अन्दर घुसने के लिए केवल एक प्रवेश स्थान रखा जाता था जो वस्तुतः एक गहरा गढ़ा होता था। इसके ऊपर घास-फूस व मिट्टी की एक मोटी तह बिछा कर एक पुल बना दिया जाता था। घेरे के अन्दर पालतू हथिनियों को छोड़ दिया जाता था। जो जंगली हाथियों को लुभाने का काम करती थीं। घेरे की दीवार में जगह-जगह छिपने के स्थान बने होते थे जहाँ बैठे हुए लोग जंगली झुण्डों पर निगाह रखते थे। हथिनियों से आकृष्ट होकर नर हाथी अपने झुण्डों समेत उधर आते थे और देर या सवेर घेरे के अन्दर

घुस जाते थे। उचित अवसर देख कर अन्दर दाखिल होने का पुल तोड़ दिया जाता था।

पकड़े गये हाथियों को कुछ समय तक पानी और भोजन के वगैर रख कर कमज़ोर किया जाता था। तब दुवारा पुल वना कर पालतू हाथियों को घेरे के अन्दर दाखिल करते थे। जंगली और पालतू हाथियों में तुमुल युद्ध छिड़ जाता था। एक-एक हाथी को घेर कर पहले उनकी टाँग में और वाद में गले में रस्से वाँध दिये जाते थे। उनकी गरदनें भी आपस में वाँध दी जाती थीं। बूढ़े और वेकार हाथी तथा वहुत छोटे वच्चे छोड़ दिये जाते थे।

पकड़ने के इस तरीके में कुछ सुधार होते रहे। अव इस घेरे का व्यास साठ फुट से लेकर एक सौ अस्सी फुट तक रखा जाता है। वारह फुट ऊँची मज़बूत वल्लियों को गाड़ कर घेरे की हदवन्दी की जाती है। कभी-कभी घेरे के अन्दर परिधि के साथ-साथ छह फुट चौड़ी तथा चार फुट गहरी खाई भी खोद दी जाती है। इसके अन्दर घुसने का वारह फुट चौड़ा रास्ता खुला रखा जाता है। हाथियों को अन्दर खदेड़ने के वाद झट दरवाज़ा वन्द कर दिया जाता है। झुण्ड को घरे की ओर ले जाने में प्रशिक्षित हाथियों की भी सहायता ली जाती है।

घिरे हुए हाथियों को असहाय तथा निराश पाकर सुशिक्षित चतुर महावत पालतू हाथियों के साथ घेरे के अन्दर प्रवेश करते हैं। जंगली हाथियों को काबू करने के लिए उनकी पिछली टाँगों में से किसी एक टाँग में फन्दा डाल कर एक मोटे तने के साथ वाँध दिया जाता है। इससे उनकी आक्रमण और प्रतिरोध करने की क्षमता में कमी आ जाती है। ज़रूरत के अनुसार उनके अन्य भागों पर भी वन्धन डाल कर उन्हें पूरी तरह जकड़ लिया जाता है।

वचाव के सभी मार्ग वन्द हो जाने पर, और रस्सियों से पूरी तरह जकड़े जाने पर हाथी अव पालतू हाथियों के समूह द्वारा घेरे हुए नये वन्दी-स्थान —पीलखाने या क्राल में ले जाये जाते हैं।

हाथियों को वाँधने का वाड़ा चालीस फुट व्यास का घेरा होता है। इसमें नाना प्रकार के घास-पत्ते, टहनियाँ और गन्ने का कचरा पड़ा रहता है। रात के ठण्डे समय में इसमें हाथियों को दाखिल करते हैं। छह से आठ तक हाथी अन्दर चले आयें तो दरवाज़ा वन्द कर देते हैं। अगले दिन कुनकियों को अन्दर ले जाकर वन्धन का काम शुरू होता है। कुनकी जंगली हाथी को घेर कर उसके इतने पास

चित्र १२— माँ और बच्चा

चित्र १३—नकली लड़ाई

चित्र १४—जल क्रीड़ा

चित्र १५—माथे से "मस्त" चू रहा है

आ जाते हैं कि वह हिलडुल नहीं सकता। तब उसके गले के चारों ओर रस्सा फेंकते हैं। टाँगों को भी बाँध देते हैं।

जो हाथी एक समय वन में स्वच्छन्द घूमते थे अब पस्त होकर बन्दी बनाने वालों के आदेश मानने के लिए विवश हो जाते हैं। एक समय जो शक्ति का प्रतीक था, वह गजराज अब पूरी तरह स्वामिभक्त बन जाता है—ठीक पालतू घोड़े या गाय की तरह। लेकिन, यह भी देखा जाता है कि कई साहसी तथा शक्तिशाली हाथी इन यातनाओं के सामने सिर झुकाने की बजाय आत्महत्या करना पसन्द करते हैं। वे खाना-पीना छोड़ देते हैं। उपवास के कारण उनमें कमज़ोरी बढ़ती जाती है, उनके माथे की हड्डियाँ बाहर निकल आती हैं और गाल गढ़ों में धंस जाते हैं।

नदी का खेदा

यह कार्य बहुत ही साहस और चतुराई का होता है। जंगल में हाथियों के मुख्य केन्द्रों का पता लगाकर वन के सभी नाकों पर कोई दो हज़ार आदमी तैनात कर दिये जाते हैं। ये लोग जंगली हाथियों की आदतों से परिचित रहते हैं और उन्हें पकड़ने की कला में कुशल होते हैं। उन्हें यह पता होता है कि हाथी प्रतिदिन साथ बहती हुई नदी में जल-क्रीड़ा के लिए जाते हैं। झूमते-इठलाते हुए हाथियों का बड़ा झुण्ड जब उधर रुख करता है तो उनके पिछवाड़े से तथा दोनों ओर से उन्हें घेर लिया जाता है। एक निश्चित समय पर नाकेवाले लोग हवा में गोलियाँ चलाते हैं और उसके साथ भीषण आवाज़ में नगाड़े तथा ढोल पीटना शुरू कर देते हैं। चारों ओर मशालें जला दी जाती हैं। इससे हाथियों का झुण्ड भयभीत हो जाता है। उसे नदी की ओर जाने वाले एक नियत मार्ग पर बढ़ने के लिए मज़बूर किया जाता है। कोशिश यह की जाती है कि सबसे पहले हाथियों का राजा उस ओर दौड़े। फलतः दल के अन्य हाथी भेड़-चाल की तरह नेता के पीछे चलने के लिए मज़बूर हो जाते हैं।

काकनकोटे में खेदा को देखना दिलचस्प और रोमांचक है। छोटे-बड़े और विभिन्न उम्रों के हाथी चिंघाड़ते हुए नदी के अन्दर घुसते हैं। कभी तो वे धारा के विपरीत तैर जाते हैं। तब इन्हें घेरकर नदी के पार बाड़े की ओर भेजने में कठिनाई होती है। दर्शकों के लिए यह रोचक अनुभव होता है। इस

संकट के समय बुजुर्ग हाथी नन्हे बच्चों को अपने बड़े उद्दन्तों, पर उठा लेते हैं और इसी तरह तैरते हुए जलधारा को पार कर लेते हैं। डूबने से रक्षा करने का यह प्रयत्न देखते ही बनता है। भागने का साहसिक प्रयत्न भी कुछ हाथी करते हैं। कुमकियों के पास आने पर घुई अधिक विरोध दिखाती हैं। यदि उनका उपद्रव कुमकियों द्वारा वश में न आये तो गोली चलाकर डराते हैं और उन्हें नदी में खदेड़ देते हैं। नदी पार करने के बाद झुण्ड का नेता घेरे के अन्दर घुस जाय तो शेष सभी उसके पीछे हो लेते हैं। घेरे की वल्लियों को पत्तों और टहनियों से ढक दिया जाता है जिससे हाथी समझें कि घने उगे हुए वृक्षों की ही पंक्ति है। अन्तिम हाथी अन्दर जाता है तो दरवाज़े के ऊपर बैठा आदमी रस्से को काट देता है। उनके जंगली जीवन पर यह सील लग जाती है।

पास ही एक ऊँचा मचान होता है जहाँ से हाथियों को बन्दी बनाने की सारी प्रक्रिया देखी जाती है।

मेला शिकार

इसे एक प्रकार का खेल कहा जा सकता है। कुमकियों पर सवार होकर फन्दी लोग जंगली हाथियों के झुण्डों का पीछा करने निकलते हैं। फन्दों की सहायता से हाथियों को फाँसने वाले लोगों को फन्दी कहते हैं। पहले प्रायः बच्चे पकड़ में आते हैं।

हाथियों का झुण्ड जैसे ही किसी ऊबड़-खाबड़ जगह पर, तंग घाटी में या टेढ़ी-मेढ़ी पहाड़ी जगह पर पहुँचता है, ये लोग झट मशालें जला देते हैं, पटाखे छोड़ते हैं, आतिशबाजियाँ चलाते हैं और कनस्तरों को पीटते हैं। डर के मारे झुण्ड भाग खड़ा होता है। ये लोग उसका पीछा करते हैं। हाथियों को और अधिक भयभीत करने के उद्देश्य से ये उसी तरह शोर-गुल के साथ उनके पीछे भागते जाते हैं। झुण्ड के शेष सदस्यों के साथ बच्चे दौड़ नहीं पाते और साथियों से पिछड़ जाते हैं।

नमक के स्थानों पर पकड़ना

शाकाहारी प्राणियों के समान हाथी भी नमक चाटता है। वनों में कुछ जगहों पर प्राकृतिक रूप में भूमि की सतह पर नमक पाया जाता है। रघुवंश में ऐसे स्थानों को सैन्धव-शिलाएँ कहा गया है। जिन सैन्धव-शिलाओं पर हाथियों के

झुण्ड अक्सर आया करते हैं उनके चारों ओर मज़बूत खम्भे गाढ़ कर घेरे बना दिये जाते हैं। इसी तरह पानी से भरे उन तड़ागों के चारों ओर भी घेरे बना दिये जाते हैं जहाँ हाथी बहुधा आया करते हैं। कुछ दिनों में हाथी घेरों को देखने के आदी हो जाते हैं और उन्हें जंगल की ही एक प्राकृतिक रचना समझकर उनसे नहीं डरते। हाथियों को पकड़ने वाले लोग उन पर कड़ी निगाह रखते हैं। ज्योंही कोई हाथी या हाथियों का झुण्ड वाड़े के अन्दर घुसा कि प्रवेश मार्ग बन्द कर दिया जाता है। घिर गये हाथियों को तब उसी तरह वश में किया जाता है जैसे कि खेदे के प्रसंग में वर्णन किया गया है।

प्रशिक्षण

प्रशिक्षण के समय हाथी के साथ निर्दयता का व्यवहार नहीं किया जाता। महावत अत्यन्त धैर्य से काम लेते हैं। वे जानते हैं कि नया कैदी उजड्ड और हत्यारा है और महावत को मार डालने के दाव भी लगा रहा है। परन्तु महावत की कुशलता, स्नेह भरा बरताव, सेवाभाव और मेहनत से ये सब मुश्किलें धीरे-धीरे दूर हो जाती हैं। इस समय कुमकी हाथी उनके नज़दीक पहुँच जाते हैं और उन्हें घेर लेते हैं। तब फन्दी आगे बढ़ता है और फन्दा डालकर बच्चे को कुमकियों के साथ बाँध देता है।

प्रतिरोध में बच्चा ज़ोर से चिंघाड़ उठता है। जिसे सुनकर उसकी माँ और कभी-कभी सारा झुण्ड उसे छुड़ाने के लिए आ जाता है। परन्तु कुमकियों पर सवार गज-बन्धकों द्वारा किये जाने वाले शोर-गुल के कारण उन्हें सफलता नहीं मिलती।

एकाकी नर हाथियों को सोते समय पकड़ने का भी एक तरीका है। पीछा करके उन्हें लगातार दौड़ाते रहते हैं। उन्हें सोने का मौका भी नहीं देते। जब वे थक कर चूर हो जाते हैं तो रुक जाते हैं। अब हस्ति-बन्धकों का दल धीर व स्थिर प्रकृति वाले हाथियों पर सवार होकर उनकी ओर बढ़ता है। हस्ति-बन्धकों ने काले कम्बल ओढ़े होते हैं जिससे जंगली हाथी उन्हें देख न पायें। वे हाथी पर सतर्क दृष्टि रखते हैं। जब हाथी सो जाता है तो कुमकियों को समीप ले जाते हैं। हस्ति-बन्धक नीचे उतरते हैं और फुर्ती से पिछली टाँगों को एक साथ बाँध देते हैं।

लंका में शिकारी इससे भी अधिक साहसपूर्ण तरीका अपनाते हैं। भागते हुए

हाथियों की पिछली टाँगों में फन्दा डालकर वे उन्हें वश में कर लेते हैं। इस जोखिमपूर्ण कार्य में अतिशय दक्षता की ज़रूरत होती है। कोई बिरले ही शिकारी इस तरीके से हाथी पकड़ पाते हैं।

प्रशिक्षण के दौरान ज़रूरत पड़ने पर महावत बेंत से हाथी को पीटता है। शारीरिक दण्ड देने के साथ-साथ वह उसके मन को भी अपने वश में करने की कोशिश करता है।

घटनाओं तथा शब्दों को स्मरण रखने और व्यक्तियों को पहचानने की हाथी में असाधारण योग्यता होती है। हाथी के समान समझदार शायद ही कोई जंगली जानवर हो।

प्रशिक्षण में उसे सामान्यतया कुल सत्ताईस शब्द याद करने होते हैं। इन्हें सीख लेने पर वह घूमना, बैठना, उठना पैर या सूँड उठाना और ठोकर लगाना आदि क्रियाएँ कर लेता है। इन शब्दों को सिखाना तथा उनके अनुसार कार्य कराना इतना आसान नहीं होता। प्रशिक्षण में अच्छे कार्यों के लिए महावत हाथी को पुरस्कार रूप में गन्ने का टुकड़ा देकर उसका उत्साह बढ़ाता है। गन्ने के लालच से वह उसे नमस्ते करना तथा दूसरी बातें सिखा देता है। बाद में, गन्ने दिये बिना ही वह इन शब्दों को सुनकर आदेशों का पालन करने लगता है। तीन महीने में वह बारह शब्दों का अर्थ समझ जाता है। दक्षिण भारत में लट्ठे खींचनेवाले हाथी को आदेश सूचक चालीस शब्द सिखाये जाते हैं।

आहार

यह शाकाहारी प्राणी बेहद पेटू है। जंगल में तो लगभग चौबीसों घण्टे घास, पेड़ों के पत्ते, बेलें तथा फल खाता रहता है। बीच-बीच में दोपहर के आराम के लिए रुक जाता है और फिर पेट भरने के धन्धे में लग जाता है। रात को कुछ समय के लिए यह लेट कर गाढ़ी नींद सो जाता है और कभी-कभी तो खुर्राटे भी भरने लगता है। पालतू हाथी के आगे पर्याप्त परिमाण में नाना प्रकार के चारे डाल दिये जाते हैं। प्रशिक्षण की अवधि में उसे कुछ स्वादिष्ट पकवान भी दिये जाते हैं।

पालतू हाथियों का यह भोजन होता है : पीपल, बरगद, पिलखन, कटहल आदि के पत्ते और टहनियाँ; बाँस, बाँस व ताड़ के अंकुर तथा सुकुमार पत्ते; धान, ज्वार,

वाजरा व मक्की की चरी; गन्ने; अनेक प्रकार की घासें; सब तरह के अनाज केले के पत्ते व तने; नारियल, केला और सभी फल। ईसा की दसवीं शताब्दी में हाथियों के आहार में जौ, गेहूँ, मटर, चने और शालिधान दिये जाने का उल्लेख मिलता है।

कॉर्बेट नेशनल पार्क में जंगली हाथी निम्नलिखित चीजें खाते हुए देखे जाते हैं : घासें—बाँस, कास, ऊला, नरकुल और कुछ अंश में पटेरा। कोपलें—कम्पिल्ल (रोहिणी), पीपल, वरगद, खावड़, साँदन, कचनार, पिलखन, बहेड़ा, हरड़, खैर, वेंत आदि। पेड़ों की छालें—रोहिणी, शीशम, वरगद, सेमल, साल, कचनार, साँदन आदि। पेड़ों के तनों पर वह उद्दन्तों से चोट करता है और छाल कट जाने पर सूँड से पकड़कर खींच लेता है। ऐसा लगता है कि किसी-किसी पेड़ की छाल अधिक स्वादिष्ट और पोषक होती है। बीस मई १९६८ की सुबह सवा सात बजे मैंने शाल वृक्ष के तने पर आठ-दस हाथियों को छाल के लिए छीना-झपटी करते देखा था। नर हाथी तने पर उद्दन्त को ऊपर से नीचे की ओर गड़ाता था। हाथीदाँत की इस छुरी से ज़रा-सी भी छाल कट जाती थी तो वह स्वयं तथा हथिनियाँ सूँड के अग्रभाग से तथा सूँड के मोड़ से पकड़कर खींचते थे। बच्चे, माताएँ और पट्ठे शाल के दो-तीन पेड़ों पर छाल को नोचने, छुड़ाने और खाने में जुटे थे। ज़रा-से टुकड़े के लिए भी उनमें लूट मचती थी। एक साल की उम्र का सबसे छोटा बच्चा भी छाल खाने की कोशिश कर रहा था और खुद भी तोड़ने की कोशिश कर रहा था। वृक्ष का जीवन इस छाल में प्रवाहित होता है, इसलिए हाथियों को भी इससे अपने जीवन के लिए उत्तम पोषण मिल जाता है। छाल उतर जाने से जिन पेड़ों के तने नंगे हो जाते हैं वे मर जाते हैं।

कॉर्बेट पार्क में जंगली हाथियों का मुख्य भोजन रोहिणी है। हाथी एक पेड़ को गिराकर उसकी कुछ टहनियाँ ही खाता है और आगे चल पड़ता है। एक बार में मैंने कोई बीस हाथियों के झुण्ड को रोहिणी के एक पेड़ पर तीस मिनट तक जमे देखा। इस जंगल में उगने वाले रोहिणी के पेड़ों से यह बड़ा अवश्य था। सम्भवतः यह अधिक स्वादिष्ट भी था जिससे वे उसे खत्म करके ही हिलना चाहते थे।

पार्क में उगने वाली घासों में सरकण्डे को और कलम घास को हाथी सबसे अधिक खाते हैं। इनकी जड़ें उन्हें अधिक पोषण प्रदान करती हैं, इसलिए उनका बस चले तो वे केवल जड़ें ही खायें। ऐसा करने में व्यावहारिक कठिनाई यह है

कि जड़ों को खोदने में अधिक समय लगता है। जब पत्तियाँ खानी होती हैं तो सूँड में पकड़कर वह मरोड़ी देता है और दो-तीन फुट लम्बी घास का गुच्छा तोड़ लेता है। जब जड़ें खाना चाहता है तो पत्तों के गुच्छों को पकड़कर कई झटके देता है। इससे जड़ समेत घास उखड़ आती है। मिट्टी को छुड़ाने के लिए वह जड़ को पैरों पर पटकता है, धोबी जिस तरह कपड़ों को पटकता है उस तरह यह अपनी देह पर दायें-बायें घास को पटकियाँ देता है। अच्छी तरह साफ़ करने के बाद वह जड़ को खाता है। अनेक बार वह घास की केवल जड़ खाता है और ऊपर के पत्र-गुच्छों को कुतर कर फेंकता जाता है। इनसे हम हाथियों के आने-जाने के मार्गों को तलाश करते हैं। गर्मियों में कई जगह घास सूख जाती है परन्तु उसकी लम्बी जड़ें रेतीली भूमि में कई गज़ तक फैली रहती हैं। इन्हें निकालने के लिए हाथी अपने पैर का उपयोग करता है। अगले पैर की ठोकर मार कर वह जड़ को खोद लेता है और सूँड से पकड़ कर खींच लेता है।

असम में काम करने वाले हाथियों का मुख्य भोजन तारा घास या अल्पी-निया है। काम वाले दिन बीस पौण्ड और छुट्टी के दिन दस पौण्ड धान प्रति-दिन दाने के रूप में उन्हें दिया जाता है। कुछ जगहों पर चावल और गेहूँ के आटे से बनायी हुई बीस से तीस पौण्ड चपातियाँ दी जाती हैं। हाथियों को दिन में कई बार खिलाया जाता है। बच्चे वाली हथिनी-धुई को मैसूर में दस नारियल और तीन सेर चावल प्रतिदिन देते हैं।

मद्रास राज्य के माउण्ट स्टुअर्ट और करगुड़ी वन-शृंखलाओं में उन्हें निम्न-लिखित भोजन दिया जाता है :

	दाना (पौण्डों में)	सूखा चारा (पौण्डों में)	हरा चारा (पौण्डों में)	नमक (औंसों में)	तेल (औंसों में)
बड़ा हाथी	१५	२००	४८०	२	१
मझोला हाथी	१५	१७५	४००	२	१
छोटा हाथी	१५	१५०	३२०	२	१

हाथी का पाचन अधिकतर आँतों में होता है। एक जंगली हथिनी को मारने के बाद उस के अमाशय में कुल डेढ़ सौ पौण्ड मिली-जुली वनस्पतियाँ निकली थीं लेकिन उसकी आँतों में १२६२ पौण्ड आहार मिला था। हथिनी का कुल वज़न सात हज़ार पौण्ड से अधिक था। उसकी उदर गुहा में पूरा बना हुआ एक बच्चा

भी था जिसे वाद में स्पिरिट के अन्दर संरक्षित करके रखा गया था। इस उदाहरण से पता चलता है कि हाथी अपने भार के पाँचवें भाग से भी अधिक परिमाण में घास-पात खा जाते हैं।

हाथी एक वार में तेरह से अठारह गैलन तक पानी पी जाता है। दिन भर में लगभग पचास गैलन पानी पीता होगा। पानी पीने के लिए ये दिन में दो बार नदियों या तालों पर जाते हैं। पानी में लोटना और पानी से खेल करना उनको वहुत अच्छा लगता हैं।

आजादी से मुँह मोड़नेवाले ये गुलाम

१९३४ में भोलोभद्र सेकिया ने एक हाथी खरीदा। उस समय वह छह फुट से कम ऊँचा था। कुछ ही वरसों में वह वढ़िया कुमकी वन गया और एक हथिनी के साथ मिल कर हाथियों को पकड़ा करता था। उसके सिर पर घने बाल थे और सूँड की दीवार में एक चीरा था। जव यह पानी पीता था तो कुछ पानी चीरे में से वाहर निकल जाता था। अपने घर से अस्सी मील दूर ये दोनों हाथी मेला शिकार के कार्य में लगे थे। एक सुवह फन्दी ने एक वड़े हाथी पर फन्दा फेंका। उसने ज़वर्दस्त मुकाबला किया। फन्दी और महावत दोनों ही कुनकी की पीठ से गिर पड़े। फन्दे वाला हाथी गलत दिशा में भाग निकला। दूसरा कुनकी एक अन्य हाथी को पकड़ने में लगा था, इसलिए इधर सहायता नहीं कर सका। जंगली हाथी के साथ बँधा हुआ बड़ा मखना वन में दूर ही दूर घसिटता चला गया। वहाँ मौजूद लोग कुछ भी नहीं कर पाये। कुछ देर बाद कुनकी को गुम हो गया मान कर वे शिविर को लौट आये। गाँव में पहुँचकर उन्होंने घटना का विवरण सुना दिया।

नौ महीने बाद कुनकी अपने घर लौट आया। इस वात पर गाँव का हर आदमी अचरज करता था। उसकी कमर में अव भी रस्सा बँधा हुआ था। पीठ को काटता हुआ रस्सा गहराई में चला जा रहा था। वहाँ एक बड़ी और लम्वी विद्रधि बन गयी थी। बात यह हुई कि कुनकी और उसके जंगली साथी एक-दूसरे से तव तक बंधे रहे जव तक कि रस्सा टूट नहीं गया। पालतू मखने ने आज़ादी को चुनने की वजाय लौट आना पसन्द किया। अस्सी मील से भी अधिक दूरी तय कर के उसने गाँव में आकर सन्तोष की साँस ली। मार्ग में उसे कई

जंगलों और दो बड़ी नदियों को भी पार करना पड़ा था। खुले प्रदेश में से भी वह गुज़रा था जहाँ विपत्ति के समय छिपने का स्थान भी नहीं था। जंगल की आज़ादी को छोड़ कर आने के दो कारण हो सकते थे। एक तो यह कि वह रस्से की व्यथा से मुक्ति पाना चाहता था जो उसे पालकों के हाथों ही मिल सकती थी। दूसरे यह कि वह उसी स्थान में रहना चाहता था जहाँ उसने बचपन के पन्द्रह बरस बिताये थे।

गौरीपुर के कुमार का एक दन्तुर हाथी पूरे पाँच साल की अनुपस्थिति के बाद स्वेच्छा से घर लौट आया था। १९२५ में जब वह पकड़ा गया था तो उसकी उम्र लगभग पन्द्रह बरस थी। धीरे-धीरे वह एक सुन्दर मखना हाथी बन गया था। १९४२ में जब हाथी पकड़े जा रहे थे तो वह निकल भागा। उसके मालिक लालजी को बड़ी खुशी और आश्चर्य हुआ जब पूरे पाँच साल बाद वह अपनी मर्ज़ी से वापिस आ गया। यहाँ तक पहुँचने में उसे लगभग पचास मील खुली धरती पर या खेतों के बीच में से गुज़रना पड़ा था। उसके उद्दन्त अधिक लम्बे हो गये थे। उसे तुरन्त हाथियों की देखभाल करने तथा उन्हें सधाने के काम पर लगा दिया गया। देखा गया कि वह कुछ भी नहीं भूला था।

असम के वन-विभाग में कम से कम ऐसे दो उदाहरणों का तो ज्ञान है जिनमें भगोड़े हाथी फिर लौट आये थे। इनमें से एक उत्तर तट पर वन संरक्षक के सरदियों के दौरों में सम्मिलित था। उस दिन यह गोली से मारे गये एक हिरण को लादे ला रहा था। दोपहर के खाने का सामान भी उस पर लदा था। सोडा वाटर की बोतल के फटने के धमाके को सुनकर वह बिदक गया। उसने महावत को गिरा दिया और जंगल में भाग गया। खोज करने पर भी उसका पता न चला तो उसे गुमशुदा मान लिया गया। कई महीनों बाद कामरूप के दक्षिण तट पर उसे अपने घर पर आया देखकर सब अचम्भे में पड़े गये। मरा हुआ हिरण और पिकनिक लंच का सामान उसकी पीठ पर वैसे ही बंधे हुए थे।

वन-विभाग की सुन्दरमाला हथिनी को तो जंगल में भाग जाने की आदत पड़ गयी थी। पुनः पकड़े जाने पर उसके साथ सदा छोटे बच्चे मिलते थे जो जंगली हाथियों की सन्तान होते थे। जंगल से हाथी की पुकार सुनकर वह अपने को रोक नहीं सकती थी और मौका पाते ही उनके साथ भाग खड़ी होती थी। तीसरी बार भागने के कारणों की जाँच करने से पता चला कि उसके पैरों की

जंजीर दोषपूर्ण थी। इस बात की सूचना रेंज औफिसर को देने में महावत से लापरवाही हो गयी। सामान्यतया अन्तिम कड़ियों में पेच के साथ ढिवरी को कसकर जंजीर बांधी जाती थी। इसकी जगह महावत जूट की रस्सी के एक टुकड़े को अन्तिम कड़ियों में पिरोकर काम चलाने लगा। एक दिन गाँठ टूट गयी और सुन्दरमाला भाग गयी।

कई दिनों तक उसकी तलाश की जाती रही, पर व्यर्थ। बेंत के उस रक्षित वन में बहुत-से जंगली हाथी रहते थे और उनके निशान भी इतने अधिक थे कि उनमें सुन्दरमाला को खोज निकालना सम्भव नहीं हुआ। यह किस्सा १९३३ का है।

चौदह बरस बाद १९४७ में हाथियों को पकड़ते समय वह फिर पकड़ ली गयी। मेला शिकार करनेवाले कुनकियों के एक दल ने दो बच्चों वाली एक धुई को घेर लिया। छोटा बच्चा तो अभी माँ के दूध पर निर्भर था। जब धुई ज़रा भी नहीं डरी, उलटे पालतू हाथियों को खड़ी देखने लगी तो एक महावत ने सहसा अनुभव किया कि वह कहीं भगोड़ी तो नहीं है। उसे आदेश देते हुए वह ऊँचे स्वर में चिल्लाया: "बैठ! बैठ!" ताज्जुब की बात कि हथिनी बैठ गयी। पीलखाने के लोग जानते हैं कि भगोड़े हाथी भी बैठ जाने के आदेश को कभी नहीं भूलते। फन्दी झट कुनकी के ऊपर से कूदा, हथिनी की तरफ दौड़कर उसका कान पकड़ लिया और उछलकर उसकी गरदन पर जा बैठा। दोनों बड़े बच्चे भाग गये। हथिनी को जब हाँककर डिपो वापिस ले जाया जा रहा था तो छोटा बच्चा पीछे चलता गया। इतनी आसानी से फिर पकड़े जाने की बात पर डिपो हँसी-मज़ाक और खुशी का केन्द्र बन गया था। उसके आत्म-समर्पण को कुछ महावत निरी मूर्खता और कायरता बता रहे थे जब कि कुछ लोग फन्दी के साहस की प्रशंसा कर रहे थे। इस समाचार को सुनकर वन के अधिकारी उधर दौड़े। पहिचान सूचक निशानों से सुन्दरमाला को पहिचान लिया गया। खुशी की बात तो यह थी कि उसका रजिस्टर अब तक सुरक्षित था जिसमें रिकॉर्ड किये गये निशानों से इसके निशानों की तसदीक कर ली गयी। उसके बच्चे का नाम रुपहि रखा गया। १९५१ में प्रधान-मन्त्री पण्डित नेहरू की ओर से उपहार के रूप में उसे जापान भेज दिया गया। यात्रा के पहले दौर में उसे रेलगाड़ी द्वारा कलकत्ता भेजना था। विदाई के समय बच्चा और सुन्दरमाला दोनों ही बहुत शोका-

तुर थे। अपने वच्चे को ट्रक में चढ़ाने का दुखद काम माँ को स्वयं करना पड़ा था। विदाई अत्यन्त करुणाजनक थी।

एक बार एक हथिनी भागने के बारह वरस बाद दुबारा पकड़ी गयी थी। उसके तीन वच्चे साथ में थे। अढ़तालीस हाथियों के झुण्ड के साथ वह जंगल में विचरण करती थी। टाँगों पर पड़े रस्सों के निशानों से वह पहिचान ली गयी। भाला चुभाकर जव उसे बैठने को कहा गया तो उसने एक दम घुटने टेक दिये।

तीन साल पहले पकड़ी गयी एक कुनकी हथिनी एक हाँके में डरकर भाग खड़ी हुई। साढ़े चार वरस वाद वह भागने की जगह से सौ मील दूर दुबारा पकड़ ली गयी। उसके साथ एक वच्चा और वीस अन्य हाथी भी पकड़ में आ गये। वह इतनी आज्ञाकारिणी थी कि तीन दिन में ही अपने साथियों को पकड़ने और उन्हें प्रशिक्षित करने के काम में लग गयी।

असम में भगोड़े हाथियों का दुवारा पकड़ा जाना एक साधारण वात है। वन-अधिकारी या प्रशासक के लिए ऐसे हाथी स्वामित्व के संवंध में समस्या वन जाते हैं। ऐसे एक उदाहरण में असम के एक न्यायाधीश ने पचास साल पहले एक निर्णय दिया था जिसमें भगोड़ा हाथी दुवारा पकड़ने वाले महलदार के पास ही रहने दिया गया था। इस निर्णय को देते हुए न्यायाधीश ने रोमन साम्राज में प्रचलित न्याय का हवाला दिया था जिसके अनुसार जंगली पशु, पक्षी, मछलियाँ सभी प्राणी जो धरती, समुद्र और आकाश में पैदा हुए हैं, पकड़े जाने के वाद तुरन्त पकड़ने वाले के वन जाते हैं, क्योंकि उससे पहले वे किसी की सम्पत्ति नहीं थे। ऐसा प्राणी तभी तक आपका माना जा सकता है जव तक वह आपके पास है। एक वार यदि वह अपनी प्राकृतिक स्वतन्त्रता में लौटा जाता है तो आपका नहीं रहता। उसके वाद वह उसकी सम्पत्ति वन जाता है जो उसे पकड़ता है। परिणामस्वरूप हाथी की पहिचान भी हो जाय तो वह पुराने मालिक का नहीं माना जाता। परन्तु सरकारी हाथियों के वारे में यह नियम है कि दुवारा पकड़े गये भगोड़े हाथी सरकार को लौटाने होंगे। हाँ, पकड़ने आदि में जो खर्च होता है वह दे दिया जाता है।

७. व्यापार और उद्योग में

सफ़ेद हाथी

कहा जता है कि गौतम बुद्ध की माता महामाया ने स्वप्न में एक सफ़ेद हाथी को अपने शरीर में प्रवेश करते देखा था। ज्योतिषियों ने इस स्वप्न का अर्थ बताया था कि आने वाला बच्चा या तो महान् सम्राट् बनेगा अथवा उच्च कोटि का महात्मा। यह कथा भरहुत स्तूप (दूसरी सदी ईस्वी पूर्व) में "माया देवी का स्वप्न" नामक दृश्य में चित्रित की गयी है।

एशिया में सफ़ेद हाथी को विशेष सम्मान से देखा जाता है। हिन्दू इसे राजा इन्द्र का ऐरावत हाथी मानते हैं। महर्षि वाल्मीकि के एक वर्णन में ऐरावत हाथी कैलाश पर्वत के समान श्वेत, चार उद्दन्तों वाला, विविध प्रकार के आभूषणों से अलंकृत और स्वर्ण-घण्टों से युक्त बताया गया है।

एक जन्म में बोधिसत्व विश्वन्तर नामक युवराज थे। वे हिमालय की चोटी के समान उज्ज्वल, विशाल, मदधारा से अलंकृत मुखवाले, सुलक्षणों से युक्त, विनम्र, वेगवान्, बलवान् तथा विख्यात गन्धहस्ती पर सवार होते थे। नगर के चारों ओर बनाये गये अपने दान-गृहों को देखने के लिए वे इसी हाथी पर सवार होकर जाया करते थे। एक बार पड़ोसी देश के किसी राजा ने विश्वन्तर को नीचा दिखाने की ठानी। विश्वन्तर की दानशीलता की प्रशस्ति दूर-दूर तक फैल चुकी थी। ईर्ष्यालु राजाओं ने ब्राह्मणों को उस श्रेष्ठ हाथी का अपहरण करने के लिए भेजा। जयकार करते हुए ब्राह्मणों ने कहा : सुन्दर चाल वाले आपके इस हाथी के गुणों से तथा आपकी दान वीरता से आकृष्ट होकर हम यहाँ आये हैं।

यह जानते हुए भी कि द्वेष से आकुल चित्त वाले पड़ोसी राजाओं की यह चाल है, युवराज उस श्वेत गन्धहस्ती पर से शीघ्र ही उतर आये। एक हाथ में पानी से भरा सोने का कलश लेकर और दूसरे हाथ में गजेन्द्र की सूँड पकड़कर वे ब्राह्मणों के सामने खड़े हो गये। 'स्वीकार कीजिये'—कहकर युवराज विश्वन्तर ने बिजली से युक्त शरद्ऋतु के बादल सरीखे, सोने के सुन्दर आभूषणों से विभूषित उस गजेन्द्र को दान कर दिया। युवराज अत्यन्त प्रसन्न थे। परन्तु,

सारा शिवि देश आवेश में आ गया। प्रजा कहने लगी : 'यह राज्यलक्ष्मी जा रही है।'

मदमस्त भ्रमरों से अलंकृत एवं मद-धारा से सुगन्धित जिस हाथी के मुख-मंडल का स्पर्श कर पवन दूसरे हाथियों के मद-लेप को अनायास ही पोंछता है, जिस हाथी के तेज से शत्रुओं का वल एवं प्रभाव क्षीण होता है तथा उनका अभिमान विलीन होता है उसको युवराज विश्वन्तर ने दान कर दिया। इस मूर्तिमान विजय को दूसरे देश ले जाया जा रहा है।

गौ, स्वर्ण, वस्त्र और भोजन—यह द्विजों को देने योग्य हैं, किन्तु जिस श्रेष्ठ श्वेत हाथी में विजयलक्ष्मी प्रतिष्ठित है उस का दान करना दानवीरता का अतिक्रमण करना है।

इस गम्भीर अपराध में वोधिसत्व विश्वन्तर को निर्वासित होना पड़ा था। भरहुत से प्राप्त एक प्रस्तर फलक पर वेस्सन्तर जातक में वर्णित गजेन्द्र को दान देने का यह दृश्य अंकित किया गया है। अतिशय विनीत भाव से गन्धहस्ती खड़ा है। एक हाथ में स्वर्ण-कलश और दूसरे में हाथी की सूँड को पकड़ कर वे दान देने की रस्म को सम्पन्न कर रहे हैं।

सफ़ेद हाथी प्रकृति का वैसा ही अद्भुत जीव है जैसे कि कभी-कभी सफ़ेद शेर, सफ़ेद अजगर या कोई दूसरा सफ़ेद प्राणी मिल जाता है। अन्य सफ़ेद जीवों की अपेक्षा सफ़ेद हाथी के पाये जाने के हमें अधिक उल्लेख मिलते हैं। प्रतीत होता है कि प्राचीन भारत में हाथियों की नस्लों को उन्नत करने वाले विशेषज्ञ इस दुर्लभ प्राणी में गहरी दिलचस्पी लेते रहे हैं। रामायण के पाठक जानते हैं कि रावण के महलों में शुभ्र मेघों के समान श्वेत वर्ण के कुछ हाथी विद्यमान थे। दक्षिण विएतनाम की केन्द्रीय तराई के जंगलों में वानगे थू ओट के पास कवायलियों ने १९६१ के मार्च महीने में एक सफ़ेद हाथी पकड़ा था। विएतनामी लोग सफ़ेद हाथी को स्वर्ग के राजाओं का अवतार समझते हैं।

स्याम के उत्तरी जंगल में पकड़े गये एक सफ़ेद हाथी को शाही गजशाला तक ले जाने की रस्म बड़ी रोचक थी। जंगल में कोई सड़क नहीं थी। इसलिए पहला काम एक खुला पथ बनाना था जिस पर सुख-पूर्वक चलता हुआ वह समीप की नदी तक जा सके। वहाँ एक तैरता हुआ घर उसकी प्रतीक्षा में खड़ा था। इस घर की छत फूलों से बनायी गयी थी और उसके चारों ओर लाल रंग

के परदे लटक रहे थे । यात्रा मन्द तथा कुछ थकाने वाली थी। हाथी को जब आराम करना होता था तो गवैयों और नर्तकों की मण्डलियाँ उसका मनोरंजन करती थीं। ये लोग इसी उद्देश्य से साथ लाये गये थे। तैरते हुए अस्थायी निवास से एक बार उसे उतारा गया तो उसकी शान के अनुकूल ही उसका ध्यान रखा गया। जिस फर्श पर वह खड़ा हुआ उसके ऊपर सोने की चटाई बिछायी गयी थी। चमेली के फूलों से सवासित जल से उसे स्नान कराया गया। चावल के आटे की रोटियाँ तथा गन्ने पेट भर खाने को दिये गये।

उसका स्वागत करने के लिए स्वयं स्याम के राजा, उसके दरबारी और कई ब्राह्मण तथा पुरोहित लम्बी यात्रा तय करके नदी पर पहुँचे थे। बैंगकोंक पहुँचने पर हाथी को खूब सजाये हुए एक रंगीन मण्डप में रखा गया। एक समारोह में उसकी देह पर अभिमन्त्रित तेल चुपड़ा गया। गरदन में सोने की जन्जीर पहनायी गयी। दाँतों पर सोने के पतरे चढ़ाये गये। नौ दिन तक जन-साधारण ने उसे उपहार दिये और उसकी पूजा की। उसके बाद बड़े समारोह के साथ उसे स्थायी गजशाला में भेज दिया गया।

ऐसा बेशकीमती हाथी कहीं रास्ते में ही नदी में डूब जाता तो ? और, सचमुच १९६६ की अगस्त में ऐसी दुर्घटना हो गयी। थाईलैण्ड का एक सफ़ेद हाथी राष्ट्रपति जौनसन को भेंट किये जाने के लिए जहाज पर चढ़ाया गया था। यात्रा के बीच में ही वह जंजीर तुड़ा कर भाग खड़ा हुआ। इस उत्पात से सारा जहाज़ ही समुद्र में डूब गया जिसके साथ हाथी की भी जल-समाधि हो गयी।

बर्मा के जंगलों में भी कभी-कभी सफ़ेद हाथी मिल जाते हैं । स्याम के समान यहाँ भी शाही गजशाला में उन्हें बड़े आदर से रखा जाता था। राजकुमार और फुंगी उनकी सेवा में लगे रहते थे। लाल रेशम के रस्सों से उनके पैर बाँधे जाते थे। सोने और चाँदी के बरतनों में उन्हें भोजन परोसा जाता था। पक्षियों के परों से बनाये गये, सोने के हत्थे वाले, बड़े-बड़े पंखों को डुला कर मक्खियाँ उड़ायी जाती थीं। शुद्ध हृदयवाले, पुनीत लोग इसकाम को स्वयं करते थे। उनकी नींद सुखद बनाने के लिए रात को उनके ऊपर कामदार मसहरियाँ तान दी जाती थीं।

जातक की कई कथाओं में सफ़ेद हाथी का वर्णन पाया जाता है। इन गजकथाओं को अजन्ता की गुफाओं में चित्रित किया गया है, तथा भरहुत, साँची

आदि में प्रस्तर फलकों पर छेनी से उकेरा गया है। अजन्ता में चित्रित एक कथा में सामान्य रंग की एक हथिनी के साथ उसके दो सफ़ेद वच्चे दिखाये गये हैं। सत्रह नम्वर की गुफा में कलाकार ने पड्दन्त जातक को चित्रित किया है। इसमें छह दन्ते हाथी के सान में एक वहुत छोटा वच्चा है जिसका वर्ण सफ़ेद है। वोधिसत्व की एक अन्य कथा में अन्धी माँ के प्रति पुत्र के स्नेह व कर्त्तव्य-निष्ठा का उदाहरण एक सफ़ेद हाथी के माध्यम से इस प्रकार दिया है :

उन दिनों वनारस में ब्रह्मदत्त शासन करते थे। वोधिसत्व हिमालय प्रदेश में एक भव्य श्वेत हाथी के रूप में प्रकट हुए। उनकी माँ अन्धी थी। एक वार उन्होंने एक वनचर की रक्षा की थी। सात दिन से वह जंगल में भटक रहा था। अपनी पीठ पर विठाकर उन्होंने उसे हिंस्र प्राणियों से व्याप्त सघन वन से वाहर निकाल दिया। वह वाराणसी चला गया। जंगल से आते हुए वह मार्ग के पेड़ों और पहाड़ों को याद करता चला था।

उन्हीं दिनों राजा का हाथी मर गया। राजा की सवारी के योग्य एक हाथी की तलाश ज़ारी थी। वनचर की वुद्धि कलुपित हो गयी। उसने राजा के शिकारियों को याद किये हुए मार्ग की पहिचान बता दी। महान् शक्ति-सम्पन्न होने के वावजूद भी वोधिसत्व ने शिकारियों को मारा नहीं। कमलताल में वह पकड़ लिया गया और राजा की गजशाला में ले जाया गया। खूवसूरत फूलों से बनायी मालाओं द्वारा उसका शृंगार किया गया। राजा ने वढ़िया पदार्थ मंगाये और उसे खाने को दिये। लेकिन, उसने ज़रा भी नहीं खाया।

"अपनी माँ से जुदा होकर मैं कुछ नहीं खाऊंगा"—उसने कहा। राजा को जव उसकी अन्धी माँ की असहाय अवस्था का वोध हुआ तो उसने सफ़ेद हाथी को मुक्त करने का आदेश दे दिया। वह वापस पहाड़ों में अपनी माँ के पास चला गया। भूखी-प्यासी और पुत्र-वियोग से दुखी वह वेसुध पड़ी थी।

वोधिसत्व एक जोहड़ में से स्वच्छ पानी सूँड में भर कर ले गया, माँ के ऊपर उसने छिड़का। उसे पता लगा कि मेरा वेटा आ गया है। उसने राजा को आशीर्वाद दिया।

सफ़ेद हाथियों के शरीर के विभिन्न भागों पर हलके रंग के दाग पड़े रहते हैं। कानों पर और सूँड पर ये विशेष रूप से स्पष्ट होते हैं। लेकिन, असली सफ़ेद हाथी तो वह होता हैं जिसकी सारी देह का रंग ही वदला होता है। दरअसल वह

एकदम सफ़ेद नहीं होता, अपितु हलके लाल या गुलाबी रंग का होता है। ऐसा एक हाथी १९२६ में लन्दन के चिड़ियाघर में लाया गया था। उस ज़माने में भी उसका दाम कई हज़ार पौण्ड था। बर्मा के जंगलों में यह एक झुण्ड के साथ विचरता हुआ पाया गया था। मुगलों के ज़माने में भी बर्मा में सफ़ेद हाथी पाये जाने का उल्लेख है। राजा मानसिंह ने अकबर से वायदा किया था कि वह अराकान के राजा को परास्त कर सफ़ेद हाथी लायेंगे और सम्राट के सुपुर्द कर देंगे। पहले ज़माने में सफ़ेद हाथी तलाश करने वाले को ऊँचा सम्मान और ओहदा दिया जाता था। उसे बड़ी धन-राशि देने का रिवाज़ था, जीवन भर उसे करों से छूट मिल जाती थी।

सफ़ेद हाथी पवित्र माना जाता है इसलिए उसे सवारी के काम नहीं लाया जाता। ऐसा माना जाता था कि जिसके पास यह रहता था उसके देश में वर्षा की कमी नहीं होती थी। अपार धन-धान्य होता था और सुख-समृद्धि होती थी। चक्रवर्ती राजा ऐसे हाथी को प्राप्त करने के लिए हर तरह के उपाय करते थे। उनके अमूल्य रत्नों में एक सफ़ेद हाथी होता था। यहाँ दिये गये विवरणों से पाठकों को अनुमान हो गया होगा कि इसे पालने में कितना भारी खर्च बैठता है। इस विवरण से पाठक सफ़ेद हाथी बाँधने के मुहावरे का ठीक-अभिप्राय भी समझ गये होंगे।

राम और रावण के युद्ध में महोदर नामक राक्षस ने कृष्ण मेघ के समान काले हाथी पर सवार होकर युद्ध किया था। मालूम होता है कि सफ़ेद हाथी के समान काले हाथी भी मुश्किल से मिला करते थे और शायद इसीलिए वे खूबसूरत माने जाते थे। महोदर के हाथी का नाम ही सुदर्शन था। एक उपमा में बाल्मीकि लिखते हैं कि काले-कलूटे रावण के बाहुपाश में पड़ी हेमवर्णा सीता वैसी ही सुशोभित हो रही थीं जैसे किसी काले हाथी को सुनहरा कमरबन्ध पहना दिया गया हो।

संख्या पर नियंत्रण

कीन्या के सरकारी बन्द जंगल में १९६२ में ग्यारह हज़ार के लगभग जंगली हाथी थे। सरकार का अनुमान था कि वहाँ जितने भी वृक्ष और वनस्पतियाँ हाथियों के खाने के लिए थीं उससे हाथियों की संख्या दुगुनी थी, इसलिए वहाँ

पाँच हजार हाथियों को गोली से उड़ा देने का प्रस्ताव था। पुर्तगाली अफ्रीका में एक वार २, २५४ हाथी पकड़ कर मार डाले गये और उनके मूल्यवान उद्दन्त निकाल लिये गये थे। चोर-शिकारियों ने यह सव रातों-रात कर डाला था। सोलह मील लम्वाई में उन्होंने तार के फन्दे डाल कर हाथियों के समूहों को घेर लिया था और अपने कार्य में सफलता प्राप्त की थी। लंका में समस्या इससे भिन्न थी। वहाँ एक समय हाथियों की संख्या दस हजार थी जो वाद में आठ सौ से कम रह गयी। इस विनाश को देखते हुए वहाँ की सरकार को इनकी सुरक्षा के प्रयत्न करने पड़े और इन्हें पकड़ने पर प्रतिबन्ध लगाने पड़े।

भारत में जंगली हाथियों की ठीक संख्या का पता नहीं है। श्री जी के अनुमान के अनुसार भारत में इनकी कुल संख्या लगभग सात हज़ार हो सकती है, जिसमें से लगभग तीन हज़ार दक्षिण भारत में होंगे। मैसूर राज्य के हसन, काडूर और शिमोगा जिलों में ये लुप्त हो चुके हैं। मध्यप्रदेश में जंगली हाथी अधिक नहीं हैं। नये चाय बागानों की स्थापना और जंगल कटने के कारण असम में जंगली हाथियों की आवादी घट गयी है। एक समाचार में बताया गया था कि छह सौ से अधिक जंगली हाथी उत्तर प्रदेश के तराई क्षेत्रों में निर्द्वन्द्व घूम रहे थे जहाँ वे किसानों की फसलों को नष्ट करते थे और वस्तियों में घुस कर तोड़-फोड़ करते थे। उनके ऊधम से गन्ने की फसल तो वचती ही नहीं थी। वन-विभाग के अधिकारियों के अनुसार ये हाथी प्रति वर्ष आधा दर्जन व्यक्तियों को पैरों तले रौंद कर मार देते थे।

वन-संरक्षकों ने सुझाव दिया था कि इस वढ़ती हुई संख्या को देखते हुए इनके शिकार पर लगी हुई पावन्दी को कुछ ढीला कर दिया जाये। राज्य सरकार इस पर सहमत नहीं हुई, क्योंकि उसका ख्याल था कि एक वार छूट मिलने पर देखते ही देखते तराई प्रदेश में से हाथी की नस्ल का खात्मा हो जायेगा।

एक अनुमान के अनुमार भारत में कुल छह-सात सौ हाथी प्रति वर्ष पकड़े जाते थे। स्वतन्त्रता के वाद भारत में हाथी की माँग कम हो गयी है। भारत के जंगलों में इस महाकाय जीव के लुप्त हो जाने का अभी कोई खतरा नज़र नहीं आता।

संख्या को सीमित करने के लिए हाथियों का अन्धाधुन्ध संहार नहीं करना चाहिए। योजना वनाकर उन्हें मारना चाहिए। भारतीय हाथियों के जीवन के

विभिन्न पहलुओं पर अभी बहुत कुछ अनुसन्धान करने की आवश्यकता है। कुछ विश्वविद्यालय तथा बम्बई नेचुरल हिस्ट्री सोसाइटी जैसे संस्थान इसमें सक्रिय सहयोग दे सकते हैं। भारतीय तथा विदेशी फिल्म कम्पनियाँ और टेलीवीज़न की युनिटें हाथियों को खदेड़ने, उन्हें शूट करने, उनकी चीरफाड़ आदि से सम्बद्ध विषयों पर छोटी शिक्षाप्रद फिल्में बना सकती हैं। मारे गये हाथियों के ढाँचे अजायबघरों की शोभा बन सकते हैं। इसलिए जब भी हाथियों को शूट करना हो तो ऐसे सभी संस्थानों को लाभ उठाने का अवसर देना चाहिए।

व्यापार के केन्द्र

हाथी की बिक्री के मुख्य केन्द्र उत्तर भारत में बिहार राज्य और दक्षिण भारत में कालीकट हैं। उत्तर बिहार के चार प्रसिद्ध पशु-मेलों में असम और बंगाल के जंगलों से सैकड़ों बरसों से हाथी जाते रहे हैं। इनमें सबसे प्रसिद्ध सोनपुर का मेला है जिसे हरिहर क्षेत्र का मेला भी कहते हैं। नवम्बर (कार्तिक) मास की पहली पूर्णिमा में यह लगता है। इसमें लाखों नर-नारी गंगा स्नान करने यहाँ आते हैं। किसी समय इस मेले में छह से आठ सौ तक हाथी बिकने आते थे।

बिहार में हाथियों को बेचने का दूसरा स्थान खगड़ा मेला है, यह जनवरी में लगता है। फिर फरवरी-मार्च में सिंहेश्वर मेला लगता है और उसके बाद अप्रैल में नाकमर्द मेला।

असम और बंगाल में हाथी पकड़ने वालों के लिए ये चारों स्थान सदियों से माल बेचने की मण्डियाँ रही हैं। चन्द्रगुप्त मौर्य के लड़ाकू हाथियों के खरीदने की ये मुख्य मण्डियाँ रही होंगी। आजकल के पटना के पास जब पाटली-पुत्र में उसकी राजधानी थी, इन चारों मेलों में हज़ारों-लाखों हाथी बिके होंगे। पूर्व के समृद्ध जंगलों के ये निवासी उत्तर में दूर तक राजाओं के उपयोग के लिए भेजे जाते रहे होंगे।

मंगलकारी हाथी की पहचान

भारतीय हाथी के व्यापार में शरीर के भिन्न-भिन्न अंगों व चिह्नों और लक्षणों को बारीकी से देख कर उसके स्वभाव आदि का अन्दाज़ लगाने की विद्या बहुत विकसित हो चुकी है। शुभ लक्षणों वाले हाथी के अच्छे दाम मिल जाते हैं

जब कि अशुभ लक्षणों वाले हाथी के लिए गाहक तलाश करना मुश्किल होता है। ऐसे हाथी के दाम अत्यधिक गिर जाते हैं। ये हाथी मालिक के लिए नुकसान-देह होते हैं और मौके पर दगा दे सकते हैं।

हाथी के अगले दोनों पैरों में सामान्यतया पाँच-पाँच नाखून होते हैं और पिछले पैरों में चार-चार। इस तरह नाखूनों की कुल संख्या अठारह बन जाती है। इससे कम या अधिक नाखून हों तो वह हाथी श्रीहीन होता है। सोलहनखा तो एकदम अशुभ होता है और इसलिए उसे बेचना लगभग असम्भव होता है। वैज्ञानिक दृष्टि से नाखूनों की संख्या का विचार बेमायने हो सकता है। परन्तु ऐसे हाथी को अपने पास रखने में या उसे बेचने में यह महत्वपूर्ण बात होती है। निर्यात किये जाने वाले हाथी में तो इसकी उपेक्षा की ही नहीं जाती।

नया पकड़ा गया हाथी ज्यों ही डिपो में पहुँचता है उसके चारों ओर जमा हुई भीड़ की आँखें झट उसके पैरों पर पहुँच कर नाखून गिनने में लग जाती हैं। ऐसे ऐबदार हाथी को पकड़कर लानेवाले फन्दी भरसक कोशिश करते हैं कि निलामी से पहले उसे गाहक को दिखाया ही न जाय। उधर, खरीदार परीक्षा के लिए उसे खुली जगह पर लाने का आग्रह करता है। होशियार व्यापारी इस ऐब को छिपाने के लिए सिप्पी या किसी दूसरी चीज़ को उसी शक्ल का बना कर चिपका देता है और नाखूनों की गिनती पूरी कर देता है। खरीदार को ठगने की यह तरकीब अक्सर कामयाब हो जाती है।

अकबर के ज़माने में ज़रा लाली लिए पीली और सफ़ेद आँखों का होना शुभ लक्षण माना जाता था। मालूम होता है कि उस समय लोग हल्के रंग-वाली आँख के हाथी को शुभ मानते थे। आजकल के गज-विशेषज्ञ ऐसे हाथी को खतरनाक और अविश्वसनीय समझते हैं। भड़क जाने पर या खतरे के वक्त ये डरपोक साबित होते हैं। ऐसे उदाहरण मिलते हैं जब सफ़ेद या पीली आँख वाले हाथी अभिशाप बन गये हैं और उन्हें गोली से उड़ा देना पड़ा है।

जीभ काली हो या जीभ की नोक पर काला धब्बा हो तो यह अशुभ लक्षण माना जाता है। तालू का स्याह होना भी अपशकुन है। ऐसा हाथी सवार को गिरा देता है। अशुभ सूचक इन काले निशानों को साफ़ करके हाथी मण्डी में बेचने के लिए प्रस्तुत किया जाता है। हाथी को बाँध कर ज़मीन पर गिरा लिया जाता है। उसे रस्सों द्वारा भलीभाँति जकड़ लेते हैं जिससे वह हिलडुल न सके।

मुँह को खोल कर काले दाग पर नीलाथोथा रगड़ देते हैं। इससे वह जगह जल जाती है। ज़ख्म को भरने के लिए घी चुपड़ देते हैं। यह उपचार केवल उन्हीं हाथियों का किया जाता है। जो कम उम्र के हों। नीलेथोथे द्वारा यह सफ़ाई अस्थायी होती है। लेकिन काले निशान के दुबारा प्रकट होने से पहले ही ये व्यापारी उस हाथी को बेच देते हैं।

किसी-किसी हाथी के गले में बकरे की तरह दो गलथनी होती हैं, यह हाथी ऐबदार होता है। शेर की तरह तनी हुई गरदन वाला (शेरगरदना) हाथी निच-गर्दने के मुकाबले में अच्छा होता है। गरदन नीचे झुकाकर चलने वाले की निगाह दूर तक नहीं जाती।

उद्दन्तों की परीक्षा में भी यही बात देखी जाती है। जिसके उद्दन्त ज़मीन की ओर जा रहे हैं वह पातालदन्ता हाथी उतना अच्छा नहीं जितना कि पलकदन्ता जिसके उद्दन्त उठे हुए हों और पलकों की तरफ जा रहे हों। उद्दन्तों से हमला करते समय पलकदन्ते की स्थिति लाभप्रद होती है।

हिरन जैसी आँखों वाला उभरे मत्थेवाला (पीतवान) और बड़े कानों वाला हाथी श्रेष्ठ होता है। कान बहुत छोटे नहीं होने चाहिए।

सामने के ककुद् का खूब विकसित होना और सिर पर बालों का होना—ये अच्छी निशानियाँ हैं।

खाल मोटी, झुर्रीदार और जिस्म से ऐसी ढीली लटकती हुई होनी चाहिए कि मुट्ठी में पकड़ी जा सके। कबरा मोहरा होने से भी हाथी की माँग बढ़ जाती है, ऐसे हाथी की खाल पर सफ़ेद-काले चितकबरे निशान पड़े रहते हैं।

दुम लम्बी, सत्ताईस गाँठों वाली, आसानी से मुड़ने वाली, ऊपर से मोटी, ढालदार और तले से पतली होनी चाहिए। लम्बाई इतनी हो कि वह पिछली टाँगों के मोड़ को छूती हो। सबसे अच्छी दुम वह है जिसमें चमकीले अर्धेन्दु-आकृति बाल हों जो ज़रा-ज़रा एक-दूसरे के ऊपर चढ़े हों। दुम हरदम चलती रहनी चाहिए, रात को भले ही रुक जाय।

ठूँठ जैसी पूँछ होने पर दाम गिर जाते हैं। पूँछ झब्बेदार हो, असाधारण रूप से इतनी लम्बी हो कि पैरों से नीचे लटक जाय और धरती को बुहारती चले तो ऐसे हाथी को झड़दुमी हाथी कहते हैं। यह अत्यन्त अशुभ माना जाता है। ऐसे हाथी को स्ट्रेसी ने भयंकर रूप से नर-संहारी बनते देखा है।

जिसकी बगलें कन्धों के साथ चिपकी न हों वह हाथी बढ़िया माना जाता है क्योंकि वह बन्दबगल वाले के मुकाबले तेज़ दौड़ सकता है। ऐसे हाथी को खुली-बगल कहते हैं।

पकड़ने के समय जो हाथी खूब लड़ता है वह भला निकलता है और अचरज की बात है कि प्रशिक्षण में वह कम तकलीफ देता है।

अच्छे सधे हुए हाथी का दाम ज़्यादा मिलता है। सौदा तय करने में उम्र का भी ध्यान रखा जाता है। चालीस साल की उम्र के बाद दाम कम होते जाते हैं। मैसूर राज्य में गैर-सधाये हुए दन्तुर की औसत कीमत लगभग ८,००० रुपये है, और गैर-सधायी हथिनी की कीमत ५,००० रुपये।

हाथीदाँत की कलात्मक वस्तुएँ

हड़प्पा और मोहंजोदड़ो की खुदाई में प्राप्त नमूनों से ज्ञात होता है कि भारत में पाँच हज़ार साल पहले भी हाथीदाँत पर नक्काशी का काम किया जाता था। उस समय तक हाथीदाँत का सजावट में महत्त्व हो गया था, और मनुष्योपयोगी छोटे-बड़े अनेक पदार्थ इससे बनाये जाने लगे थे। पूजा के उपयोग के लिए हाथी-दाँत के नोकदार शंकु और मण्डल बनाये जाते थे जो घरों की सजावट के भी काम आते थे। यहाँ मिले हाथीदाँत के कुछ खिलौनों में नक्काशी का बढ़िया काम किया गया है। यहाँ हाथीदाँत से बनायी हुई चार पहलू वाली शलाकाएँ तो अनगिनत मिली हैं जिन पर समान केन्द्रवृत्त और आड़ी रेखाएँ अंकित हैं। ये शलाकाएँ खेलने के पासे, हार पेण्डेण्ट और तावीज़ों के रूप में प्रयोग की जाती थीं। जान पड़ता है कि उन पर जो निशान अंकित हैं उनका कुछ तान्त्रिक रहस्य था।

हिन्दुओं में विवाह से पहले हाथीदाँत से बनाया हुआ चूड़ा कन्या की मंगल-कामना से मामा उसकी कलाई में पहनाता है। कन्या के मन में भी इस चूड़े के लिए बड़ी चाह होती है। जिसकी अभिव्यक्ति हमें लोक-गीतों में मिलती है। करनाल ज़िले की नववधुएँ, जिनकी कुहनियों तक चूड़ा सजा होता है, सावन के महीने में झूले पर बैठी गाती हैं :

चूड़ा तो हाथीदाँत का
मेरी जान से प्यारा

पुराने ज़माने में हाथीदाँत के कारीगरों को दंतकार कहा जाता था। रथों, सिंहा-

सनों, शयनासनों तथा राजमहलों की विविध सामग्री में हाथीदाँत की पच्चीकारी करने का रिवाज़ था। वाण भट्ट (६३० ई० पू०) ने राजा हर्ष के चरित्र में दिखाया है कि मगरमच्छ के मुख की आकृति वाले जल निर्गम मार्ग हाथीदाँत के वनाये जाते थे। कैकेयी के महल में हाथीदाँत की चौकियाँ तथा आसन रखे रहते थे। लंका के राजमहलों में हाथीदाँत के खम्भे तथा झरोखे बने हुए थे जिन पर सोने की जालियाँ पड़ी रहती थीं। रावण के रथ में भी हाथीदाँत की प्रतिमाएँ वनी हुई थीं। कुम्भकर्ण के महल का तोरण हाथीदाँत की चित्रकारी से सुसज्जित था।

उधर, अफ्रीका के राजमहलों में भी हाथीदाँत का सम्मानित स्थान है। नाइजीरिया में कवीली सरदारों के सेवक व परिचारिकाएँ अपने से ऊँचा हाथी-दाँत लेकर राजमहलों में खड़े रहते हैं।

हाथीदाँत का तक्षण भारत के वहुत से भागों में पुराने ज़माने से होता आया है। लकड़ी की अपेक्षा हाथीदाँत पर नक्काशी अधिक निखरती है। दिल्ली, मुर्शिदावाद, मैसूर और त्रावनकोर में वनी हाथीदाँत की कलात्मक सामग्री सारी दुनिया में प्रसिद्ध है। केरल तथा मैसूर की चीज़ें वारीक काम की होती हैं। कटक में भी हाथीदाँत का काम होता है। होश्यारपुर और मुंगेर में हाथीदाँत की पच्चीकारी का जो काम किया जाता है वह वहुत विख्यात है। देवी-देवताओं की मूर्त्तियाँ वनाने के लिए भी हाथीदाँत बड़ा उपयोगी माध्यम है। इससे आम व्यवहार की चीज़ें, जैसे वटन, मनके, कंघियाँ, सुरमेदानियाँ, सुरमचू, मंजूषाएँ, सिगरेट केस, शतरंज के मोहरें, गोटियाँ, कंगन और अनेक प्रकार के छोटे-मोटे आभूषण वनाये जाते हैं। अधिक महीन और महँगे कामों के लिए अफ्रीका का चुना हुआ हाथीदाँत लिया जाता है।

भारत में कितने ही कुशल कारीगरों की आजीविका हाथीदाँत पर निर्भर है।

वोस्टन, अमेरिका में लगी एक प्रदर्शनी में भारत में बनी हाथीदाँत की वस्तुओं ने दर्शकों को आश्चर्य में डाल दिया था। उल्लेखनीय कृतियों में हवा के इशारे से हिलने वाले सुन्दर गुलदस्ते और हाथीदाँत के चार सौ महीन बालों से बनाया गया चँवर भी था।

हाथीदाँत का संघटन

हाथीदाँत आवश्यक रूप से दन्ती (dentine) होता है। इसमें सत्तावन

से साठ प्रतिशत चूर्णातु (कैल्शियम) के लवण रहते हैं जो मुख्यतया भास्वीय (फौस्फेट) होते हैं। साथ ही चालीस से तैंतालीस प्रतिशत एक कोशान्तर्द्रव्य (organic matrix) और ०.२४ से ०.३४ प्रतिशत चरबी पायी जाती है। अन्य दन्ती-रचनाओं से यह मुख्यतया इस बात में भिन्न है कि इसमें जीव द्रव्य (organic matter) बड़े परिमाण में उपस्थित होता है। बनावट में भी यह अन्य दन्तियों से भिन्न है। हड्डी और हाथीदाँत में एक बड़ा भेद यह है कि इसमें जो लचक विद्यमान होती है वह हड्डियों में नहीं पायी जाती; दूसरे, रुधिर ले जाने वाली बड़ी वाहिनियाँ इसमें नहीं होतीं जबकि हड्डी में होती हैं।

सूखने पर हाथीदाँत सिकुड़ जाता है। तैयार माल को इस दोष से बचाने के लिए यह सावधानी बरती जाती है कि जो चीज़ बनायी जानी है उसकी मोटी आकृति पहले काट ली जाती है। उसके बाद उसे स्वतः सूखने दिया जाता है। जल्दी हो तो कृत्रिम गरमी में रखकर सुखा लिया जाता है। तब पदार्थ को अंतिम रूप देने के लिए साफ़ कर लिया जाता है।

भास्विक अम्ल (फौस्फेरिक एसिड) द्वारा उपचार करके हाथीदाँत को लचीला बनाया जा सकता है। खुले पानी में धोकर सुखा लिया जाय तो यह फिर पहले के समान सख्त हो जाता है। इस उपचार से हाथीदाँत के गुणों में अन्तर पड़ जाता है। यह भलीभाँति रंगा जा सकता है। धूप में रखकर या उद्जन अति-जारेय (हाइड्रोजन परऑक्साइड) की क्रिया द्वारा या दहातु अतिलोहकीय (पोटाशियम परमेग्नेट) और तिग्मिक अम्ल (औज़ेलिक एसिड) के साथ बारी-बारी से धोने के द्वारा इसका रंग उड़ाया भी जा सकता है।

कतरनें और बुरादा इकट्ठा करके हस्तिदन्त-कालिमा (आइवरी ब्लैक) या 'बोन जिलेटीन' बनाने के काम में लाया जाता है। उपयुक्त उपचार करने के बाद हाथीदाँत का कचरा साँचों के एक घटक के रूप में खप जाता है। इसे दो से तीन किलोग्राम प्रति घन सेण्टीमीटर के दबाव पर पानी के साथ चार घण्टे तक ओटोक्लेव में रखा जाता है। धोने, रंग उड़ाने और सुखाने के बाद एक पदार्थ प्राप्त होता है जिसे पीसा जा सकता है और संश्लिष्ट उद्यासों (सिन्थेटिक रेज़िन्स) के साथ मिलाया जा सकता है। हाथीदाँत के चूरे को साँचों में भर कर कमरे के तापमान पर या ऊँचे तापमान पर संपीड़ित करके अनेक प्रकार के पदार्थ बनाये

जा सकते हैं। साँचों के प्रयोजन के लिए हाथीदाँत के बुरादे के साथ हड्डियों का चूरा और कृत्रिम सींग भी मिलाये जाते हैं।

छनित पारजम्बु प्रकाश (filtered ultra violet light) में रखकर संश्लिष्ट (सिन्थेटिक) नकली हाथीदाँतों से और असली हाथीदाँत में अन्तर किया जा सकता है। हाथीदाँत एक विशिष्ट नीली-सी आभा लिए हुए श्वेत आभा (fluorescence) दिखाता है जो नकली नमूनों में नहीं होती है।

विभिन्न अंगों के उपयोग

वरफ से ढकी हिमालय की चोटियों पर रहने वाले पुराण पुरुष शिवजी के विषय में कल्पना की जाती है कि सरदी से वचने के लिए वे हाथी की मोटी खाल को ओढ़ कर सोते हैं।[1]

पैर और सूँड की खाल को सुन्दर कारीगरी के काम में लाया जाता है। इससे वक्से, छाते के स्टैण्ड, छोटीं-छोटी मेज़ें, तिपाइयाँ आदि बनायी जाती हैं।

पूँछ के मोटे कड़े वालों पर पोलिश करके उन्हें सोने से मढ़ लेते हैं और उसकी अंगूठियाँ, चूड़ियाँ तथा कंगन वनाते हैं। केरल में इन वालों के छल्ले इस विश्वास से धारण किये जाते हैं कि पहनने वाले को सुख व समृद्धि प्राप्त होगी।

चौड़े और मोटे खुर चाकुओं से हत्थों, बटनों, चम्मचों और तश्तरियों को वनाने के काम आते हैं। व्यापारिक उपयोग के लिए इनकी उपलब्धि सीमित है इसलिए आर्थिक दृष्टि से इनकी उपादेयता नहीं है।

हाथी का मांस

भारतीय चिकित्सक चरक की राय में हाथी का मांस तपेदिक के रोगियों के लिए लाभदायक है। आहार में इसे नियमित रूप से सेवन किया जाय तो उनके सूखे तन की मांसपेशियाँ भरने लगती हैं।[2]

वर्मा में हाथी का मांस खाया जाता है। नागा लोग हाथी को पालते नहीं,

---

१. प्रालियशीतमचलेश्वरमीश्वरोऽपि
सान्द्रेभचर्मवसनावरणोऽधिशेते।
शिशुपालवध, सर्ग ४, ६४

२. चरक, राजयक्ष्मचिकित्सित अध्याय ८, १५४

यद्यपि नागा प्रदेश में हाथियों के झुण्ड काफ़ी पाये जाते हैं। वे लोग अपने जंगलों में पालतू हाथियों को काम करते हुए भी देखते हैं परन्तु शायद ही कोई नागा महावत का काम करता होगा। इसका कारण यह है कि वे हाथी को एक बवाल समझते हैं जो उनके धान के लहलहाते खेतों का सफाया कर डालती है और मौका मिलने पर उनके गाँवों को भी नहीं छोड़ती। इसलिए वे उसका शिकार करना ही उचित समझते हैं। इस शिकार में एक तरफ तो वे एक शत्रु पर विजय पाने का गर्व अनुभव करते हैं और दूसरी ओर उन्हें दावत के लिए प्रचुर मांस की प्राप्ति हो जाती है।

मध्य अफ्रीका की चारी नदी के नाविकों का एक गीत है:

हम गजराज को मार देंगे, हम गजराज को खा जायेंगे।

हम उसके पेट में घुस जायेंगे, गजराज का दिल और जिगर खा जायेंगे।

डेस्मौण्ड वाराडे (१९६४) ने एक खूनी एकदन्ते को गोली से मारा था। उसके मारे जाने की खुशी में गाँव वाले सारी रात आग के चारों ओर नाचते रहे। उन्होंने कई टन मांस को तेज़ हथियारों से काट-काट कर पका लिया था। अफ्रीकी आदिवासियों को ऐसी बड़ी दावत भाग्य से ही मिलती है।

दवादारू में

पहले ज़माने में विष देने के अनेक तरीकों में एक यह भी था कि हाथी की पीठ पर विष लगा दिया जाय। उस पर बैठने वाले मनुष्य पर विष चढ़ जाता था।[1] विषों के प्रभाव से बचने के लिए चरक बताते हैं कि हाथी के मस्तक से निकले मोती को धारण करना चाहिए।[2]

सूखी बवासीर में मस्सों पर हाथी की हड्डी, नीम और भिलावे का लेप करने की सिफारिश की जाती है।[3] हाथी के दाँतों को ज़रा से पानी में घिस कर फोड़ों पर लेप किया जाता है। मलय में खाल के दागों को मिटाने के लिए मद का प्रयोग किया जाता है।

बाल उगाने के नुस्खों में हाथीदाँत भी पड़ता है। सुश्रुत नामक वैद्य ने

१. चरक, विषचिकित्सित अध्याय २३; ११९।

२. चरक, विषचिकित्सित अध्याय २३; २५२।

३. चरक, अर्शचिकित्सित अध्याय १४; १५।

वताया है : हाथीदाँत को जला कर वनाये कोयले को पीस लें। इसमें रसौंत को मिला कर वकरी के दूध के साथ घोट लें। इसका लेप करने से हथेली पर भी वाल उग आते हैं।[१]

हाथी का शिशु जव तक घास खाना शुरू नहीं करता उसका मल दवा-दारु के काम आता है। संस्कृत में इसे करिगूथ कहते हैं। केरलीय सिद्ध वैद्यों में यह कण्डिवेन्ना या करिवेन्ना के नाम से ज्ञात है। उत्तर भारत के रस-वैद्य इसे कंकुष्ठ नाम से शूल, वायुगोला, गुदा के रोग और तिल्ली के विकारों में विरेचन के लिये देते हैं।[२]

प्राचीन संस्कृत साहित्य से पता चलता है कि हाथी का मद भी वाज़ार में विकता था। द्रव्यों के श्रेणीकरण में इसे 'पण्यवर्ग्य' में गिनाया है। एक चिकित्सक इसे वालों के लिए हितकर वताता है। उसकी राय में यह त्रिदोषघ्न है, मृगी के दौरे को दूर करता है, विप के प्रभावों को नष्ट करता है, ज़ख्मों को भरता है, खुजली, विसर्प व खाल के रोगों को शान्त करता है। यहाँ तक कि चमड़ी के कुष्ठ को तथा कुष्ठ रोग में निकलने वाली गुमड़ियों को भी ठीक कर देता है।[३]

किसी रोगी को जव एनीमा देने से भी शौच न उतरता हो तो उसे हाथी का भय दिखाया जाता था, इससे मल प्रवृत्त हो जाता था।[४] इसी तरह पागल आदमी जव वेकाबू हो जाता था तो उसे वश में लाने के लिए चरक हाथी से डराया करते थे।[५] केरल में माता-पिता अपने छोटे वच्चे को हाथी की टाँगों के नीचे से गुज़ारते हैं। उनका विश्वास है कि वड़ा होने पर वच्चा डरपोक नहीं वनेगा। हाथियों को वश में करने वाले लोगों को अपनी सामर्थ्य से अधिक श्रम

---

१. सुश्रुत. द्वियणीय चिकित्सित अध्याय १; ८८।

२. केचिद्वदन्ति कुंकुष्ठं सद्योजातस्य दन्तिनः।
वर्चश्च श्यामपीतामं रेचनं परिकथ्यते ॥
कंकुष्ठं तिक्तकटुकं वीर्योष्णं चातिरेचनम्।
व्रणोदावर्तशूलार्तिगुल्मप्लीहगुदार्तिनुत् ॥
रसरत्नसमुच्चय, अध्याय ३; ११५, ११८।

३. त्रिदोषघ्नोऽपस्मारविषकुष्ठचर्मकुष्ठग्रन्थिव्रणपामाविसर्पशमनः केश्यश्च।

४. चरक, सिद्धिस्थान ७, ३४।

५. चरक, उन्मादचिकित्सत अध्याय ९; ८२।

करना पड़ता है। इस से उनकी छाती में ज़ख्म पैदा हो सकते हैं और खाँसी आने लगती है।[1] चरक बताते हैं कि साँस के कष्टों में बलगम अधिक परिमाण में आ रहा हो तो हाथी की लीद के रस को शहद में मिला कर चटाना चाहिए।[2]

हाथी के नाखून को फूँक कर सुरमों में डालते हैं। हथिनी का दूध आँखों के लिए हितकर माना जाता है।

हथिनी का दूध पोषक है। दूध देते रहने की अवधि के अनुसार इस के संघटन में अन्तर होता है। बच्चा देने के कुछ दिनों बाद लिये गये दूध का निम्नलिखित संघटन मालूम किया गया है :

कुल ठोस पदार्थ	१७.५ से १७.९ प्रतिशत
वसा	७.२ से ७.८ प्रतिशत
प्रोमूजिन (प्रोटीन)	२.८ से ३.१ प्रतिशत
दुग्धशर्करा (लैक्टोज़)	६.५ से ६.९ प्रतिशत
राख	०.४२ से ०.४९ प्रतिशत

गौ के दूध की तुलना में इसमें विटामिन ए और डी कम परिमाण में रहते हैं, बी और सी अधिक तथा बी$_2$ लगभग उसी मात्रा में पायीं जाती हैं।

हथिनी के दूध से निकाले हुए घी की स्वफेनि अर्हा (सेपोनिफिकेशन वैल्यू) १८० से १९२ तक और जम्बुकी अर्हा (आयोडीन वैल्यू) १४ से १८ तक है।

यह घी कफनाशक, पित्तनाशक, भूख को बढ़ाने वाला और पेट के कृमियों को निकालने वाला है।

---

१. चरक, हिक्काश्वासचिकित्सित अध्याय १८; २०।

२. चरक, हिक्काश्वासचिकित्सत अध्याय १८; ११६।

संदर्भ पुस्तकें

एलिफेण्ट गोल्ड, पैट्रिक स्ट्रेसी, १९६३।

वेल्थ ऑफ़ इण्डिया, जिल्द, ३, १९५२।

हड़प्पा, केदारनाथ शास्त्री, १९५९।

रामायण

चरक संहिता,

जंगल की ओर, सुरेश वैद्य।

शिशुपाल वध, माघ, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, २००९ वि० सं०।

रघुवंश

जर्नल बम्बई नेचुरल हिस्ट्री सोसाइटी।

पारिभाषिक शब्द

अंकुश : मुड़ा हुआ लोहे का हथियार जिसके नुकीले सिरे को हाथी के सिर पर चुभा कर उसे काबू में किया जाता है।

इक्कड़ : वह हाथी जो झुण्ड से अलग अकेला रहने लगता है।

उद्दन्त : मुख से बाहर निकले हुए दो लम्बे दाँत।

उन्मत्त : मदावस्था में मानसिक सन्तुलन खोकर दूसरों को मारने पर उतारू हाथी।

एकदन्ता : वह हाथी जिसके एक ही उद्दन्त हो।

कनौती : कान के ऊपर का सिरा।

कबरा मोहरा : सफ़ेद-काले निशानों से जो हाथी चितकबरा बन गया हो।

कुंजरग्रह : हाथियों को पकड़ने वाले लोग।

कुनकी : असम में कुमकी को कुनकी कहते हैं।

कुनकीदार : कुनकी का मालिक।

कुण्ड : जलधारा में वह स्थान जहाँ पानी गहरा और निश्चल हो।

कुमकी : सधाया हुआ हाथी या हथिनी जो जंगली हाथियों को पकड़ने और उन्हें प्रशिक्षित करने के काम आते हैं।

कुमकीदार : कुमकी का मालिक।

खुलीबगल : वह हाथी जिसकी बगलें कन्धों से चिपकी न हों।

क्राल : मज़बूत लकड़ी की दीवार से बनाया बीस फुट लम्बा और बीस फुट चौड़ा घेरा जिसमें नये पकड़े हाथी रखे जाते हैं।

खूनी : वह हाथी जिसने किसी मनुष्य की हत्या की हो (killer)।

खेदा : हाथियों को खदेड़कर एक घेरे में पकड़ने का तरीका।

गजमुक्ता : कवियों की कल्पना का मोती जो किसी-किसी हाथी के मस्तक में पैदा होता है।

गणेश : वह हाथी जिसका एक ही उद्दन्त उगा हो।

गल्ला : हाथियों के झुण्ड (herd) के लिए उत्तर प्रदेश के तराई-वनों में प्रचलित शब्द।

चरकटा : हाथी का चारा काट कर लाने वाला व्यक्ति।

चारा : शेर के खाने के लिए बाँधा गया पशु।

चौड़ : जंगल के मध्य में या जंगल के साथ लगा हुआ बड़े वृक्षों से रहित लम्बा-चौड़ा मैदान जिसमें हाथी और अन्य पशु घास चरने आते हैं।

छरेरी : मस्ती की हल्की अवस्था।

झड़दुमी : ऐसा हाथी जिसकी पूँछ झब्वेदार हो, असाधारण रूप से इतनी लम्बी हो कि पैरों से नीचे लटक जाय और धरती को बुहारती चले।

दंतलियाँ : उद्दन्तों सरीखे, परन्तु उससे छोटे तकुआकार दो कर्तन (incisors) दाँत (tushes) जो मुँह से बाहर निकले हुए दिखायी देते हैं।

दन्ती : उद्दन्तों वाला हाथी (tusker)। कालीदास द्वारा प्रयुक्त शब्द।

दन्तुर : उद्दन्तों वाला हाथी (tusker)।

दुमदंराजी : वह हाथी जिसकी पूँछ बड़ी हो और सिरे पर बालों का गुच्छा हो।

घुई : बच्चे वाली हथिनी।

नागवन : हाथियों के चरने के लिए छोड़े गये जंगल।

निचगर्दना : वह हाथी जिसको गरदन नीचे झुकी रहती है।

पट्ठा : किशोर हाथी जिसका मद बहना शुरू न हुआ हो।

पड्डा : भैंस का छोटा बच्चा।

पलकदन्ता : वह हाथी जिसके उद्दन्त उठे हुए हों।

पाठा : देखिये पट्ठा।

पातालदन्ता : वह हाथी जिसके उद्दन्त ज़मीन की ओर जा रहे हों।

पीतवान : वह हाथी जिसका मत्था उभरा हुआ हो।

पीलखाना : प्रशिक्षण शिविर।

पीलवान : पीलखाने का अध्यक्ष।

फन्दी : रस्सों के फन्दों की सहायता से जंगली हाथियों को पकड़ने वाले लोग।

बौकार : सूँड के सिरे को खोलकर अजनबी की गन्ध लेना।

भगोड़ा : सधाया हुआ पालतू हाथी जो फिर जंगल में भाग जाय।

मखना : उद्दन्त रहित नर हाथी।

मझाड़ा : जल धाराओं के मध्य में छोटा जंगल।

मद : गहरे रंग का, गाढ़ा, तैलीय, सुगन्धित स्राव जो युवावस्था प्राप्त होने के बाद

हाथियों के दानों में से कभी-कभी रिसता है।

मदावस्था : मद बहते रहने की अवधि जिसमें हाथी के स्वभाव में परिवर्तन आ जाता है।

मद्दी : पैंतालीस साल से ऊपर उम्र वाला वह हाथी जिसका मद बह रहा हो।

मस्त : मदावस्था में आया हुआ हाथी।

महलदार : वह व्यक्ति जिसके पास जंगली हाथियों को पकड़ने के क्षेत्र का पट्टा है।

मेला-शिकार : पालतू हाथियों की पीठ पर बैठ कर जंगली हाथियों को फन्दे में फंसाना।

मैल : हथिनियों के दानों से बहने वाला गन्धमय मैला स्राव।

लागू : वह हाथी जो अकारण ही लोगों पर हमला करता हो (rogue)।

लूणी : लेह भूमि।

लेह भूमि : खनिज लवण से युक्त भूमि (salt-licks) जिसकी मिट्टी को हाथी फाँकता है।

लौल : कान का निचला सिरा।

शेरगर्दना : वह हाथी जिसकी गरदन शेर की तरह तनी हुई रहती है।

सखना : नर हाथी जिसके उद्दन्त छोटे और ऊपर की ओर मुड़े हुए हों।

सखनी : उद्दन्तों वाली हथिनी।

सन्दला : वह हाथी या हथिनी जिसमें उद्दन्त या दंतलियां जड़ से न निकलें।

सरीन : तरुण हथिनी जिसने अब तक सन्तान न पैदा की हो।

साम्भर : हिरण की एक बड़ी किस्म (*Cervus unicolor* Kerr)।

सैन्धव शिला : वह स्थान जहाँ प्राकृतिक रूप में भूमि की सतह पर नमक पाया जाता है। (रघुवंश)

हस्तिबन्धक : रामायण में प्रयुक्त हुए इस शब्द के लिए आधुनिक शब्द फन्दी है।

हाथी पुथी : अगरु (*Aquilaria agallocha* Roxb) वृक्ष की छाल पर लिखी हाथियों के संबंध में एक पुरानी पुस्तक।

'भारत — देश और लोग' माला

प्रकाशित पुस्तकें

१. **फूलों वाले पेड़** रु०
—डॉ० एम० एस० रन्धावा। अनु० सूर्यकुमार जोशी ३.५०
सजिल्द ६.५०

२. **असमिया साहित्य**
—प्रो० हेम बरुआ। अनु० सुमंगल प्रकाश ५.००
सजिल्द ७.५०

३. **कुछ परिचित पेड़**
—डॉ० एच० सन्तापाऊ। अनु० सुधांशु कुमार जैन ४.००
सजिल्द ७.५०

४. **भारत के खनिज पदार्थ**
—श्रीमती मेहर डी० एन० वाडिया। अनु० श्रीयांस प्रसाद जैन ४.००
सजिल्द ६.००

५. **जनसंख्या**
—डॉ० एस० एन० अग्रवाल। अनु० धीरेन्द्र वर्मा ४.७५

६. **बगीचे के फूल**
—डॉ० विष्णु स्वरूप। अनु० सूर्य कुमार जोशी ६.००

७. **वन और वानिकी**—के० पी० सागरीय ४.५०

८. **धरती और मिट्टी**
—एस० पी० रायचौधरी। अनु० सुमंगल प्रकाश ४.५०

९. **भारत का आर्थिक भूगोल**
—प्रो० वी० एस० गणनायन। अनु० सुमंगल प्रकाश ४.५०

१०. **औषधीय पौधे**—डॉ० सुधांशु कुमार जैन ५.२५

११. **पालतू पशु**—श्री हरबंस सिंह। अनु० प्रेमकान्त भार्गव ४.२५
१२. **निकोबार**—श्री कौशल कुमार माथुर। अनु० परमात्मा पांडे ४.५०
१३. **सब्जियां**—डॉ० विश्वजित चौधरी। अनु० सूर्यकुमार जोशी ४.५०
१४. **स्नेक्स ऑफ इंडिया***—डॉ० पी० जे० देवरस ६.५०
१५. **हमारे परिचित पक्षी***—डॉ० सालिमअली और लईक फतेहअली। अनु० गंगाप्रसाद श्रीवास्तव ६.००
१६. **फिजिकल ज्योग्रफ़ी ऑफ़ इंडिया***—प्रो० सी० एस० पिचामुथू ५.२५
१७. **ज्योग्रफ़ी ऑफ़ वेस्ट बंगाल***—प्रो० एस० सी० बोस ६.००
१८. **ज्योलॉजी ऑफ़ इंडिया***—डॉ० ए० के० दे ५.२५
१९. **दि मोनसून्ज़***—डॉ० पी० के० दास ४.२५
२०. **राजस्थान***—डॉ० धर्मपाल ४.५०
२१. **इंडिया—ए० जरनल सर्वे***—डॉ० जार्ज कुरियन ६.००
२२. **प्लांट डिज़ीज़ेज़***—डॉ० आर० एस० माथुर ४.७५
२३. **आसाम*** (संकलित)—श्री० एस० बरकटकी ४.५०
२४. **ट्राइब्ज़ ऑफ आसाम*** (संकलित)—श्री० एस० बरकटकी ४.७५
२५. **इन्सेक्ट पेस्ट्स ऑफ क्रॉप्स***—डॉ० एस० प्रधान ७.००
२६. **फ्रूट्स***—प्रो० रंजीत सिंह ५.७५
२७. **क्वाडंस***—डॉ० परमेश्वरी लाल गुप्त ६.७५
२८. **टेम्पल्स ऑफ नॉर्थ इंडिया***—श्री० कृष्ण देव ४.००
२९. **राजस्थान का भूगोल**—विनोद चन्द्र मिश्र। अनु० सुमंगल प्रकाश ४.५०

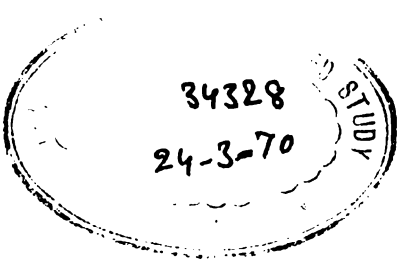

* अंग्रेज़ी में। इन पुस्तकों का अन्य भाषाओं में भी अनुवाद किया जा रहा है।

नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया की स्थापना, सन् १९५७ में, भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय के अधीन एक स्वायत्त संस्था के रूप में इस महत्वपूर्ण उद्देश्य से की गई कि देश में ऐसा वातावरण तैयार किया जाए, जिसमें पुस्तकों के प्रति सार्वजनिक रुचि जागृत हो।

ट्रस्ट के कार्यकलाप में पुस्तक-प्रदर्शनियों, राष्ट्रीय पुस्तक-मेलों एवं पुस्तकों के लेखन, अनुवाद, प्रकाशन और वितरण की समस्याओं पर विचार-गोष्ठियों का आयोजन भी सम्मिलित है।

सत्साहित्य का प्रकाशन, उसको प्रोत्साहन देना तथा ऐसे साहित्य को कम मूल्य पर सर्व-साधारण तक पहुँचाना ट्रस्ट का मुख्य उद्देश्य है।

Library IIAS, Shimla
H 639.97961 B 39 G
00034328